माँ आनन्दमयी

VOL.-4 JANUARY, 2000 NO. 1

SHREE SHREE ANANDAMAYEE SANGHA

❄ Branch Ashrams ❄

1. AGARPARA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P. O. Kamarhaiti, Calcutta-700058 (Tel : 5531208)
2. AGARTALA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Palace Compound, P.O. Agartala-799001. West Tripura
3. ALMORA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Patal Devi, P.O. Almora-263602, U.P. (Tel : 23313)
4. ALMORA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Dhaul-China, Almora-263881, U.P.
5. BHIMPURA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Bhimpura, P.O. Chandod, Baroda-391105, (Tel : 33208)
6. BHOPAL : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Bairagarh, Bhopal-462030, M.P. (Tel : 521227)
7. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Kishenpur, P.O. Rajpur, Dehradun-248009
U.P. (Phone: 684271)
8. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Kalyanvan, 176, Rajpur Road,
P.O. Rajpur, Dehradun-248009, U.P.
9. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Raipur Ordnance Factory, Dehradun-248010
10. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
47/A Jakhan, P.O. Rajpur, Dehradun, U.P.
11. JAMSHEDPUR : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Near Bhatia Park, Kadma, Jamshedpur-831005, Bihar
12. KANKHAL : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O.Kankhal, Hardwar-249408, U.P. (Tel: 416575)
13. KEDARNATH : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Near Himlok,
P.O. Kedarnath, Chamoli-246445, U.P.
14. NAIMISHARANYA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Puran Mandir,
P.O. Naimisharanya, Sitapur-261402, U.P.

माँ आनन्दमयी

अमृतवार्ता

श्रीश्री माँ आनन्दमयी के दिव्यजीवन
तथा
दिव्यवाणी की वाहिका त्रैमासिक पत्रिका

वर्ष–४ जनवरी, २००० सं.–१

वार्षिक चंदा (डाकव्यय सहित)
भारत में – ६० रुपये
विदेशों में – १२ डॉलर/या ४५० रुपये
एक प्रति – २०/- रुपये

साधारण नियम

यह त्रैमासिक पत्रिका चार पृथक भाषा–हिन्दी, बंगला, गुजराती तथा अंग्रेजी में जनवरी अप्रैल, जुलाई तथा अक्टूबर में प्रकाशित होती है । वर्ष का प्रारम्भ जनवरी से होता है ।

पत्रिका में मुख्यतया श्री श्री माँ पर आधारित लेखों को ही प्रधानता दी जाती है । इनके अतिरिक्त आध्यात्म पर आधारित हृदयस्पर्शी लेख, किसी भी देश तथा किसी भी सम्प्रदाय या धर्म के महापुरुषों की उपदेशात्मक शिक्षावलियों का भी पत्रिका में स्वागत है ।

जो भक्तगण माँ के सम्पर्क में आये हैं वे एकान्त व्यक्तिगत अनुभवों को छोड़कर ऐसे अनुभवों को आकलित कर सकते है जो कि श्री श्री माँ के लौकिक व्यवहार के प्रति आलोकपात करने वाले हों ।

सभी लेख फुलस्केप कागज के एक पृष्ठ पर टंकित या स्पष्ट लिखित होने चाहिये । लेखों की एक प्रति अपने पास अवश्य रखें । मनोनीत न होने पर लेखों को वापस भेजना कार्यालय के लिए असुविधाजनक है । सभी लेख सम्पादक के नाम भेजें ।

अग्रिम वार्षिक चंदा मनीआर्डर या बैंक ड्राफ्ट के माध्यम के "Shree Shree Anandamayee Sangha—Publication A/C".नाम पर भेजें ।

पत्रिका सम्बन्धी सभी प्रकार के पत्रादि व्यवहार तथा वार्षिक चंदा भेजने का पता :

कार्यकारी सम्पादक, "माँ आनन्दमयी - अमृतवार्ता"
माता आनन्दमयी आश्रम
भदैनी, वाराणसी -२२१००१

पत्रिका में विज्ञापन देने का नियम :–

सम्पूर्ण पृष्ठ – २०००/- पूरे वर्ष के लिये
आधा पृष्ठ – १०००/- पूरे वर्ष के लिये

अग्रिम शुल्क के साथ विज्ञापन का विषय (Matter) उपर लिखित पते पर भेजें ।

स्वामी श्री श्री आनन्दमयी संघ की ओर से मुद्रक तथा प्रकाशक श्री पानु ब्रह्मचारी द्वारा श्री श्री आनन्दमयी संघ, भदैनी, वाराणसी–२२१००१ (उ. प्र.) से प्रकाशित तथा रत्ना प्रिंटिंग वर्क्स, बी. २१/४२ कमच्छा, वाराणसी-१० (उ. प्र.) से मुद्रित । सम्पादक–श्री पानु ब्रह्मचारी ।

विषय-सूची

विशेष सूचना

सभी ग्राहकों को विशेष रूप से सूचित किया जा रहा है कि वर्तमान संख्या सन् २००० की प्रथम संख्या हैं। अतः जिन्होंने वर्तमान वर्ष के लिए चंदा अभी तक नहीं भेजा है, उनसे अनुरोध किया जाता है कि वे २००० ई. का चंदा अविलम्ब मनी आर्डर या बैंक ड्राफ्ट के माध्यमं निम्नलिखित नाम से भेजें।

वार्षिक चंदा सर्वदा इसी नाम से भेजें –

"SHREE SHREE ANANDAMAYEE SANGHA—PUBLICATION A/C"

१ जनवरी, २०००

श्री पानु ब्रह्मचारी
कार्यकारी संपादक

मातृ-वाणी

सत्सङ्ग माने सत्स्वरूप स्वयं भगवान् । स माने तो आत्मा है जो नित्य स्वयं प्रकाशमान है । इस आत्मा के प्रकाश में जहाँ जो लोग सम्मिलित होते हैं वही सत्संङ्ग है । सत्सङ्ग ही संग है और सब असत्सङ्ग है । जहाँ पर सत् नहीं है ऐसा मन में आवे वही नश्वर है । उस नश्वर का परित्याग कर असंग निःसंग होकर उसी स्वप्रकाश की ओर दृष्टि रखना मनुष्य मात्र का कर्तव्य है । इसलिए केवल सत्संग ही करना चाहिये ।

*   *   *

कोई किसी को नहीं देखता, सबको एकजन केवल देखते हैं ।

*   *   *

यदि अन्तर जानना हो तो बाहर को छोड़ने से काम न चलेगा, इसीलिये उन्होंने संसार के चित्र में भीतर की छवि अंकित कर रखी है । इस जगत् को जाग्रत का आभास भी कहा जाता है । जगत् के क्षणिक आनन्द में मुग्ध न होकर अन्तर्यामी की शरण लेने की चेष्टा करो ।

*   *   *

दूध के छींटे देकर जैसे चीनी के रस का परिष्कार किया जाता है वैसे ही ईश्वर-चिन्ता के स्पर्श से चित्त का संस्कार व मलिनता दूर हो जाती है ।

*   *   *

जो जो यहाँ आते हैं सभी को तैयार होना होगा । इस समय तक तो कुछ भी नहीं हुआ है । केवल जमीन पर कुल्हाड़ी पड़ी है । बस कितना सहन करना पड़ेगा, कितनी आँधियाँ उठेंगी, उस बवंडर में जिन्हें जाना होगा चले जायेंगे, जिन्हें रहना होगा रहेंगे ।"

*   *   *

जो अपना नहीं जानता है मैं उसी से ग्रहण करती हूँ ।

*   *   *

यदि वे स्वयं अपना परिचय न दें तो साधारण लोगों के निकट उन्हें पहचानने का उपाय नहीं है ।

*   *   *

अभाव के भाव से जगत् का आवरण हटा देते हैं । दुनिया के अभाव के भाव से दुनिया की ओर मन जायेगा । स्वभाव के भाव से स्वरूप प्रकाश का रास्ता खुल जायेगा ।

* * *

मैं आत्म स्वरूप हूँ जितनी तुम्हारी शक्ति उतना करना, एक शक्ति लगाते लगाते क्रिया की सृष्टि होती है । जो पढ़ाई लिखाई करता है उसके बात बोलने का ढंग एवं मूर्ख के बातचीत का ढंग अलग होता है । जिस लक्ष्य की ओर यात्रा की है शक्ति सृष्ट होती है । परमार्थ की ओर । इसीलिए जो नित्य सत्य बुद्ध मुक्त वह प्रकट हो जाता है । जो हटने का है हट जायेगा । लक्ष्य को सर्वदा तीर की भाँति रखना । लक्ष्य भेद के लिये तीर लगा कर रखना ।

* * *

अद्वैतवादियों को भेद अभेद के लक्ष्य में स्थित होना कर्तव्य । निरावरण प्रकाश के लिये । **"तुम" "तुम" करके अपने को डुबो दो "मैं" "मैं" करते हुए तुम को डुबो दो ।**

* * *

वे आत्मा के आत्मा हैं । प्राणों के प्राण, योगी के योग विश्व के पति, लगावें ना, अपने को भोग । (अर्थात् आत्म समर्पण)

* * *

तुम लोगों के साथ नित्य परिचय, जन्म का कोई प्रश्न ही नहीं । कितने जन्म आये और गये । तुम्हारे हाथ पैर जैसे तुम ही हो, इस शरीर के साथ चिर सम्बन्ध ।

* * *

तुम अगर बच्चा बनो भगवान तुम्हारे पास पिता बन कर आये बिना रह नहीं सकते । भगवान जो हैं ।

●

सहस्राब्दी का चिन्तन

सत्यस्वरूप, सुखस्वरूप, आनन्द स्वरूप एकमात्र भगवान हैं । सत्यानुसन्धान मनुष्य मात्र का कर्तव्य है । जहाँ सत्यानुसन्धान ठीक-ठीक हो, वहां कभी भी विकलता नहीं मिलती । सत्य ही सत्य की रक्षा करता है । सैकड़ों कामों में सैकड़ों बाधाएँ हैं । बाधा की ओर न देखकर यदि हमलोग सत्य पालन की दिशा लेकर कोशिश करें, तब किसने क्या कहा. उसकी सत्य व्रतियों को परवाह नहीं होनी चाहिये । जो सच बात कहते हैं और सत्परिवेश में रहेंगे, भगवान् स्वयं ही उनके रक्षक हैं ।

आचरण– हाव भाव में, आचार व्यवहार में मिथ्या आचरण भी मिथ्या बोलने के समान । यदि अप्रिय सत्य न कहना चाहो तो या मौन हो जाओ या इस बारे में मैं कुछ नहीं कहूँगा अथवा निर्विकार भाव से सत्य बोल देना, पर लापरवाही करना अथवा कुछ हुआ नहीं कहना उचित नहीं है । प्राण रक्षार्थ मिथ्या कहने पर पाप भी होता है पुण्य भी होता है । सब ही स्थिति अनुसार । सत्यनिष्ठ या वाक्सिद्ध व्यक्ति के मुँह से मिथ्या निकल ही नहीं सकती । यदि ऐसी स्थिति आ जाती है तो धर्म तथा सत्य की रक्षा के लिये किसी की प्राण-रक्षा हेतु सत्य कहने पर भी सत्यनिष्ठ भगवान् किसी न किसी रूप में उसको बचा लेते हैं । पर सब उस स्थिति को न पाने के कारण मिथ्या कह कर सोचते हैं कि उसके कहने पर ही उक्त व्यक्ति की प्राण रक्षा हुई ।

तुम लोग इस पथ पर आये हो, यहां तो कर्म जीवन में या सांसारिक प्रयोजन में झूठ बोलने की आवश्यकता नहीं है- फिर भी तुमलोग मिथ्या कहते हो नहीं तो वाक्सिद्ध हो जाते. यदि तुम्हारे पास कोई समय में आता है तो नम्रता के खातिर मिथ्या आचरण दिखा कर कुछ असुविधा नहीं हो रही हैं । ऐसा नहीं कहना । मन में भी सोचना सर्वरूप में तो भगवान् । आप ही इस रूप में आये हो । इसीलिये मन मुख एक रखना । तुम लोग महीने में एक दिन ठीक करो कि मिथ्या नहीं बोलोगे । और यदि बोलो भी तो डायरी में लिख कर रखना ।

— श्री श्री माँ आनन्दमयी

●

श्री श्री माँ आनन्दमयी वन्दना

—पं. श्री डी. पी. अवस्थी

बंगप्रदेश त्रिपुरा विषये सुरम्ये
खेओड़ा ग्राम समलङ्कृत जन्मभूमिः ।
विपिन पिता विधुमुखी च जननी गुणाढ्या ।
यस्याः बभूव बहुविश्रुत कीर्ति माला
आनन्दां भगवतीं प्रणमामि नित्यम् ॥
माता मही गतवती तनयाय यस्याः
कालीगृहे मुखविनिःसृत वाचिकन्या
कालीस्वरूपमचरं दधती पृथिव्यां
नाना विधा सकललोक जनैः सुदृष्टा
आनन्ददां सुखकरीं मनसा स्मरामि ॥
गार्हस्थ्यधर्म परिपालन दत्तचित्ता
दिव्या सती विदधती जनलोक क्रीडाम्
शक्ति परं भुवि जनैरनुकर्णनीयम्
पत्युः निदेश परिपालनमेव धर्मः
यस्याः बभूव बहुविश्रुत कीर्तिमाला
तां लोक कर्म निरतां शिरसा नमामि ॥

●

महायज्ञ की सूचना

[अखण्ड सावित्रीयज्ञ की अर्द्धशताब्दी पर विशेष]

श्री श्री माँ के दिव्य ख्याल से वाराणसी, भागीरथी के तट पर स्थित श्री श्री माँ आनन्दमयी आश्रम की भूमि पर सन् १९४७ के १४ जनवरी मकर संक्रान्ति को गायत्री मंत्र की कोटि आहुति का संकल्प लेकर सावित्री महायज्ञ प्रारम्भ हुआ था जो अखण्ड रूप से तीन वर्ष तक चला। १९५०, की मकर संक्रान्ति १४ जनवरी को जिसकी पूर्णाहुति हुई थी। वाराणसी के इतिहास में ही न केवल, अपितु विश्व के इतिहास में यह एक विरल अनुष्ठान था।

श्री श्री माँ की अनन्य सेविका, श्री श्री आनन्दमयी संघ की संगठन कर्त्री ब्रह्मचारिणी गुरुप्रिया देवी ने इस विवरण को "अखण्ड महायज्ञ" नामक पुस्तक में लिपिबद्ध किया है।

पंडित प्रवर महामहोपाध्याय श्री गोपीनाथ कविराज जी का कहना है कि "२००३ की पौष संक्रान्ति इस यज्ञ की आदि तिथि नहीं है एवं २००६ की पौषसंक्रान्ति इसका अन्त दिन भी नहीं है; क्योंकि जिस महाग्नि से यह अनुष्ठान सम्पन्न हुआ है वह यज्ञारम्भ के बहुत पहले से प्रज्ज्वलित थी एवं यज्ञ समाप्ति के बाद भी वैसे ही प्रज्ज्वलित है। उक्त अखण्डअग्नि द्वारा अनुष्ठित महायज्ञ विश्व का कल्याण करेगा।"

श्री गुरुप्रिया देवी की लेखनी कहती है :—

सब भावों की लीलाक्रीड़ाओं के अतिरिक्त माँ के ज्ञान की ओर जब मैंने दृष्टि डाली तब उसमें भी मुझे कितनी ही विचित्रताएँ दिखलाई दीं! कितने बड़े-बड़े पण्डितों ने आकर माँ से कितने अच्छे प्रश्न पूछे। मैं तो जानती ही हूँ कि हमारी माँ ब्रह्मरूपिणी हैं, किन्तु फिर भी उन सब पण्डितों के जटिल प्रश्नों को सुन कर मन में आशंका होती कि यदि माँ स्पष्ट रूप से इन सब प्रश्नों का उत्तर नहीं देती हैं तो ये सब पण्डित अपने साथ एक गलत धारणा ले जायेंगे। इसलिए मन ही मन प्रार्थना चलती—"माँ, तुम इन लोगों को सन्तोषजनक उत्तर दे दो जिससे ये गलत धारणा न ले जायँ।" अनेक बार इस प्रार्थना का फल भी देखती थी। माँ इस तरह उन सब जटिल प्रश्नों की मीमांसा कर देतीं कि जिसे सुन कर पण्डित दङ्ग रह जाते थे एवं हमारी अवस्था उनसे भी बढ़चढ़ कर होती थी। और अनेक बार माँ के मुँह से एक अक्षर भी स्पष्टरूप से बाहर नहीं निकलता था। हम लाख प्रार्थना करते फिर भी फल कुछ नहीं होता था। वास्तविक जिज्ञासुओं के भेद से या आधारभेद से ऐसा होता था या नहीं यह कौन बतलावे? मैं ज्ञानी हूँ यह प्रचार करने के लिए तो माँ बातें करती न थीं, जो बिना बिचारे सभी के लिए ज्ञान की धारा खोल देतीं। कभी-कभी ऐसा भी देखा जाता कि मानो माँ महायोगी हैं—योगी की दृष्टि से शिक्षा दे रही हों। कभी-कभी मां के मुँह से वैदिक और तान्त्रिक मन्त्रों को पद्यबद्ध रूप में धाराप्रवाह से निकलते हमने सुना है साथ ही साथ विविध प्रकार की आसन मुद्राएँ भी हो गई हैं। श्री मां के इन सब अनन्त (असीम) भाव

और रूपों को मैं कैसे सीमित कर दूँ? आज कल जो लोग मां के सहज सरल भाव से परिचित हैं वे उपर्युक्त भावों की कल्पना तक नहीं कर सकेंगे।

अस्तु, अब इन सब बातों को छोड़ कर काली-पूजा से सम्बन्ध रखने वाली घटनाओं का ही अनुसरण करें। मैं पहले ही कह चुकी हूँ कि माँ जब काली-मूर्ति के आसन से सट कर बैठीं तब उनके शरीर में अकस्मात् परिवर्तन हो गया। उस मूर्ति को देख कर बाबा भोलानाथ जी तक विस्मित हो गये। वे आसन पर बैठकर दोनों हाथों से माँ को पुष्पांजलि देने लगे। देखते ही देखते फिर माँ के मुख और नेत्रों का भाव बदल गया। वे आसन पर ही मुख के बल झुक कर इस प्रकार भूमि पर पड़ी रहीं कि उन्हें देख कर, एक कपड़ा भूमि पर इस तरह पड़ा है, ऐसा प्रतीत होता था। भोलानाथ जी ने माँ के इशारे से सब से आँखें बन्द करने के लिए कहा। उनके कथनानुसार सबने नेत्र बन्द कर लिये। माँ ने फिर उसी तरह पड़े पड़े अस्पष्ट शब्दों में कहा– 'शुकदेइया से आँखें बन्द करने को कहो, उसने आँखें बन्द नहीं की हैं।" शुकदेइया शाहबाग के एक माली की स्त्री थी। वह पूजास्थान से बहुत दूर एक पेड़ के नीचे खड़ी होकर ये सब बातें देख रही थी। वह उत्तर भारत की थी, अतएव उसकी समझ में ये सब बातें नहीं आ रही थीं। चारों ओर लोगों की अपार भीड़ लगी थी, उसके बीच में मां मुँह के बल पट होकर पड़े-पड़े ही शुकदेइया देख रही है यह कैसे जान सकीं यह मां ही जानें। शुकदेइया से नेत्र बन्द करने के लिए कहने पर उसने नेत्र बन्द कर लिये। कुछ क्षणों के बाद मां के संकेतानुसार फिर सब से नेत्र खोलने के लिये कहा गया। उस समय हम लोगों ने फिर मां की पहले की मूर्ति नहीं देखी। उन्होंने कपड़े यथा स्थान पहन लिये थे और राजराजेश्वरी की मूर्ति में प्रतिमा के पास पूर्ववत् बैठी थीं। भोलानाथ जी पुष्पांजलि द्वारा मां की पूजा करने लगे। पुष्प और बेलपत्रों से आच्छन्न होकर मां ने एक अपूर्व शोभा धारण की।

पूजा समाप्त होने पर हवन आरम्भ करने की बात उठी। मां ने अस्पष्ट स्वर में धीरे से कहा– "आज की इस पूजा में हवन अनावश्यक है" वास्तव में जो पूजा आदि से अन्त तक अलौकिक रूप से सम्पन्न हुई थी उसमें फिर प्रचलित प्रणाली के अनुसार होमादि बाह्य अनुष्ठान के लिए स्थान कहाँ था ? किन्तु जिन्होंने उस पूजा का आयोजन किया था उन्होंने पहले से ही होम की व्यवस्था कर रक्खी थी। मां से यह कहा गया, तो मां ने कुछ देर मौन रह कर अपनी तात्कालिक गंभीर मुद्रा को और गम्भीर बना कर कहा–"अच्छा, ऐसी बात है तो हवन आरम्भ करो।"

हवन आरम्भ हुआ। इसी बीच में मां फिर एक अद्‌भूत भाव में विभोर हो पड़ी रहीं। जब पूर्णाहुति का समय आया तब उक्त भावावस्था में रहने पर भी मां ने हाथ ऊपर उठाया। सब की दृष्टि उधर आकृष्ट हुई। सब को मालूम हुआ कि मां पूर्णाहुति देने का निषेध कर रही हैं। अतएव पूर्णाहुति नहीं दी गई। अग्नि भी नहीं बुझाई गई। स्थूल दृष्टि में यज्ञ अपूर्ण प्रतीत हो सकता है किन्तु वास्तव में ऐसी बात नहीं है। इससे पहले भी मां की शुभ सन्निधि में किसी पूजादि अनुष्ठान के होने पर मां कभी कभी अपने भाव में विभोर रह कर उस पूजा के दो एक अंगों को छोड़ देने को कहतीं एवं अभिज्ञ पण्डित जन भी माँ का आदेश मान लेते थे। हमलोग भी मां इन्हें

स्वयं ही पूर्ण कर दे रही हैं ऐसा समझ लेते थे । बहुधा इसका उदाहरण भी हम मां में प्रत्यक्षरूप में देखते थे । कभी कभी मां इन सब बातों को प्रकाश में लाने का निषेध कर देती थीं । यज्ञ में पूर्णाहुति देने का निषेध कर मां ने सावित्री यज्ञ का क्या श्री गणेश नहीं किया यह कौन बतलावे ?

थोड़ी देर बाद माँ उठ बैठीं एवं अग्नि का स्पर्श किया तथा और भी कुछ किया ऐसा प्रतीत हुआ । उक्त पूजा और हवन समाप्त करने में रात प्रायः समाप्त हो चुकी थी । भक्तजन अपने अपने घर चले गये थे । बाबा भोलानाथ जी विश्राम कर रहे थे । श्री माँ के समीप भाई श्री वीरेन्द्र, भाई श्री अटल जी, कमला कान्त आदि और भी अनेक लोग बैठे थे और मैं भी बैठी थी । इसी समय माँ अकस्मात् बोल उठीं–"एक बर्तन में हवन की अग्नि उठा लाओ तो ।" मैं जाकर अग्नि ले आई । माँ बर्तन को हाथ में लेकर बच्चों की तरह उसे नचाने लगीं एवं हँसते हँसते एक अद्‌भुत भावभङ्गी से बोल उठीं "देखती क्या है? इस यज्ञ की अग्नि को महायज्ञ में लगा दूँगी ।"चिररहस्यमयी मां ने कितनी बार क्रीड़ाओं के बहाने जो कितनी ही गम्भीर बातें कह डालीं उन पर मां के भक्तों में से प्रायः किसी का भी ध्यान न जा सका । उस दिन की मां की इस भविष्यवाणी के छिपे हुए अद्‌भुत भविष्य को हम लोगों में से कितने लोग ताड़ सके थे ?

अगले दिन मूर्ति-विसर्जन होने वाला था । ढाका के इनकम टैक्स कमिश्नर श्रीयुत निरंजन बाबू की स्त्री के आग्रह से मूर्ति का विसर्जन नहीं हुआ । मूर्ति रख दी गई । अग्निदेव भी रह गये । जिस कमरे में मूर्ति थी उसी में कुछ दिनों तक एक बर्तन में अग्नि की रक्षा की गई थी । उस समय एक आदमी मौन धारण कर अग्नि के पास बैठा जप करता था । तदनन्तर शाहबाग में एक तालाब के किनारे कुण्ड बनाकर अग्नि स्थापित की गई । एक दिन बाबा भोलानाथ जी के साथ उक्त तालाब के किनारे जाकर माँ ने भोलानाथ जी से वट के तीन पत्ते मँगाये । पत्ते लाने पर माँ ने यज्ञाग्नि के कोयले से उन पर कुछ लिखा । क्या लिखा वह माँ ही जानती हैं । लिखने-पढ़ने का झमेला तो माँ को कभी नहीं था फिर भी आवश्यकतानुसार वह कभी-कभी हो जाता था । माँ ने कहा था–"उस दिन तीन पत्तों पर अपने आप ही सुन्दर तथा स्वाभाविक रूप से लिखा गया(क) ।"हम आज तक न जान सके कि उस दिन पत्तों पर क्या लिखा गया था ? जो हो, माँ ने उन तीन पत्तों को जमीन में गाड़ कर, उनके ऊपर और भी न मालूम क्या-क्या रख कर पीछे उनके ऊपर कुण्ड बनाने को कहा था । वही किया गया था । मूर्ति की कोठरी से यज्ञाग्नि लाकर उस कुण्ड में स्थापित की गई । श्रीयुत कुलदा वन्द्योपाध्याय जी को कुछ दिनों तक उस अग्नि में नित्यक्रिया करने की आज्ञा हुई । किस तरह नित्य क्रिया करनी होगी यह माँ ने उन्हें बतला दिया था । उस यज्ञाग्नि में कभी-कभी चरु इत्यादि का पाक होता था एवं कुलदा भाई जी नित्य क्रिया की समाप्ति पर उसे लेते थे । इसके अतिरिक्त माँ के लिए भी यदा-कदा उस अग्नि में कुछ पाक किया जाता । माँ ने उक्त अग्नि में पका हुआ जो कुछ ग्रहण किया वह सब शास्त्रानुमोदित है यह पीछे मालूम हुआ ।

(क). माँ के मुख से मैंने सुना कि उक्त लेख हम लोगों की लौकिक भाषा में न था ।

इसी तरह कुछ दिनों तक चला, तदुपरान्त जब ढाका में माँ के आश्रम की स्थापना हुई तब अग्निदेव को आश्रम में लाकर स्थापित किया गया और आश्रम के ब्रह्मचारी अग्नि की रक्षा करने लगे।

एक बार माँ ने ढाका से बाहर जाते समय ब्रह्मचारियों को बुला कर कहा-"देखो, यदि यह अग्नि साधारण लोगों की दृष्टि से ओझल हो जाय (तुम लोग इसे तिरोहित देखो) तो तुम लोग इसे इस प्रकार प्रज्ज्वलित करना।" इससे पहले ढाका से रवाना होते समय इस प्रकार की शिक्षा मां ने कभी नहीं दी थी। केवल इसी बार दी थी। मां काक्स बाजार होकर आदिनाथ गईं। एक दिन आदिनाथ के शिव-मन्दिर के पास के एक कमरे में माँ पूर्व की ओर सिर करके लेटी थीं; उसी समय अकस्मात् "अग्निदेव, अग्निदेव" बोल उठीं। यह कह कर ही माँ ने बतलाया कि अग्निदेव लहर की तरह कैसी टेढ़ी मेढ़ी गति से मां के पैरों की ओर अग्रसर हुए थे। मां बतलाती थीं-"तुम लोगों का इस शरीर के निकट जिस प्रकार आना जाना होता है, अग्निदेव का आविर्भाव भी ठीक उसी तरह जाग्रत, प्रत्यक्ष और सुन्दर रूप में होता है।" पीछे मालूम हुआ कि जिस समय अग्निदेव मां के निकट प्रादुर्भूत हुए थे ठीक उसी समय ढाका के यज्ञ-कुण्ड के अग्निदेव का भी अन्तर्धान हुआ था। तदुपरान्त ब्रह्मचारियों ने मां के द्वारा निर्दिष्ट प्रक्रिया के अनुसार अग्निदेव को पुनः प्रज्ज्वलित किया था और दूसरी बार मां जब हावड़ा में थीं तब भी एक दिन पूर्वोक्त घटना घटी थी। उस समय वीरेन्द्र भाई आदि मां के साथ थे। उस समय रात्रि के २ या ३ बजे होंगे। मां बैठे-बैठे वीरेन्द्र भाई जी के साथ आध्यात्मिक विषय पर विचार कर रही थीं इसी बीच में अकस्मात् अग्निदेव के प्रकट होने की बात कह उठीं। यद्यपि इस बार भी प्रकाश का रूप पहले के समान था तथापि आकृति दूसरी तरह की थी। पीछे खबर मँगाने पर मालूम हुआ कि उस दिन ठीक उसी समय ढाका के अग्नि-कुण्ड से अग्निदेव का तिरोधान हुआ। इसके बाद भी ब्रह्मचारियों ने पूर्वोक्त रीति से अग्निदेव को जाग्रत कर कुण्ड में स्थापित किया था। जिस समय ढाका में यह घटना घटी थी ठीक उसी समय अग्निदेव मां के समीप उपस्थित दिखाई दिये थे। इस सम्बन्ध में मां ने एक दिन कहा था-"देखो, कैसा सुन्दर चमत्कार है! जिस अवस्था में अग्निदेव अन्तर्हित होते हैं उस समय अग्निदेव की जैसी आकृति रहती है उसी आकृति में यह शरीर जहाँ रहता है वहीं इस शरीर के सामने आकर उपस्थित होते हैं। जैसे कि तुम लोग आते हो।"

"तुमलोगों के मुख से सुनती हूँ कि ऋषि भी पहले अग्नि की उपासना ही आरम्भ में करते थे। अग्नि ब्रह्म का प्रतीक है। तुम लोगों में कुछ लोग अग्नि को ज्ञान का प्रतीक भी कहते हैं। उस एक के ही अनन्त रूप हैं। अनन्त का ही एक रूप है; अनन्त में अन्त, अन्त में अनन्त हैं।"

"फिर यदि सम्प्रदाय कहो, तो सभी सम्प्रदाय तो तुम्हारे हैं। तुम लोगों का अलग से सम्प्रदाय और उपासना कहाँ?"

इसके बाद अग्निदेव को २-३ भागों में बांट कर रक्षा करने की व्यवस्था की गई।

संवत् १९८४ की दीपावली को शाहबाग में जो काली-पूजा हुई थी उसे साधारण काली-पूजा एवं उसमें जो हवन हुआ था उसे साधारण काली-पूजा का हवन समझना बड़ी भूल होगी। कारण

कि जो कालीमूर्ति श्री मां के निकट प्रकट हुई थी वे महाकाल के वक्षःस्थल में विलास करने वाली, नृत्यप्रिया, घोर कृष्णवर्णा, कराल मुख वाली काली नहीं थीं; वे थीं श्री माँ की गोद में बैठने की अभिलाषा करनेवाली, स्नेह चाहनेवाली, आकाशगामिनी श्यामा। ढाका के आश्रम में जब अन्नपूर्णा की मूर्ति की स्थापना हुई तब यही काली-मूर्ति अन्नपूर्णा के बगल में स्थापित की गई एवं ये सब मूर्तियाँ अब काशी के आश्रम में पूजी जा रही हैं और इस काली-पूजा के समय जो होमाग्नि प्रज्ज्वलित हुई थी उसे भी केवल इस पूजा की विशिष्ट होमाग्नि समझना निष्कारण है, क्योंकि इस अग्नि का व्यापक प्रभाव देख कर ही माँ ने बहुत वर्षों के बाद एक दिन कहा था कि इस अग्नि से केवल सावित्री यज्ञ ही क्यों, विष्णुयज्ञ, रुद्रयज्ञ आदि अनेक यज्ञ हो सकते हैं। दूसरे किसी दिन इस अग्नि के नामकरण को लेकर जिस समय सावित्री यज्ञ के आचार्य श्री बटुक भाई जी के साथ चर्चा चल रही थी उस समय माँ ने हँसते-हँसते कहा था—"तुम लोग इस अग्नि का जो नाम रक्खोगे वही इसका नाम होगा। पर इसको 'विश्वरूप' भी तो कह सकते हो।" माँ की यह बात सुन कर बटुक भाई विस्मित होकर बोले—"माँ, शास्त्र में भी मैंने अग्नि का 'विश्वरूप' भी एक नाम देखा है। आपकी बातें सुन कर मैं दंग रह जाता हूँ। आपकी सभी बातें शास्त्र-सम्मत होती हैं। मैंने आपके मुख से एक बात भी शास्त्र-विरुद्ध नहीं सुनी। शास्त्र के राशि राशि विषयों को निर्दिष्टरूप से बार-बार आपके श्रीमुख से सुन कर मैं वास्तव में स्तम्भित हो जाता हूँ।"

२५ वर्ष पहले एक काली-पूजा के लिए जो अग्नि प्रकट हुई वही सावित्री महायज्ञ की अग्नि है। इस सम्बन्ध में इस समय हमें और सन्देह करने की आवश्यकता नहीं थी, क्योंकि माँ ने स्वयं कहा था कि इस अग्नि को एक महायज्ञ में लगा दूँगी अतएव हम कह सकते हैं कि बीजरूप में इस महायज्ञ का जन्म उसी समय हो चुका था। फिर भी यह स्मरण रखना होगा कि वह बीजमात्र था, वृक्ष नहीं। उस समय उस बीज को देख कर सावित्री यज्ञरूप विशाल वृक्ष ने अपने को इस बीज में छिपा रक्खा है यह समझना हममें से किसी के लिए भी सम्भव नहीं था, धीरे-धीरे किस तरह इस बीज से अंकुर आदि उगे थे और पूर्ण वृक्ष के रूप में इसका प्रादुर्भाव हुआ था, यहाँ पर मैं उसी का उल्लेख कर रही हूँ।

यह बात आज से लगभग १० वर्ष पहले की है, उस समय माँ विन्ध्याचल आश्रम में थीं। एक दिन वह श्रीयुत महेश भट्टाचार्य जी के "भजनालय" मैं बैठी थीं। इसी बीच एक सज्जन माँ के दर्शन करने आये। उनका नाम श्रीयुत महादेव मालवीय था। उन्होंने अत्यन्त आग्रह के साथ अनुनमय-विनय कर माँ से कहा—"माँ, आप सावित्री महायज्ञ क्यों नहीं करतीं ? आप में तो सामर्थ्य है।" जिस समय की बात मैं कह रही हूँ उस समय विन्ध्याचल के आश्रम में नित्य नियमितरूप से गायत्री होम हो रहा था। ढाका के आश्रम से हवनाग्नि का कुछ भाग लाकर वहाँ स्थापित किया गया था एवं उसी अग्नि में उस समय नित्य होम हो रहा था। अस्तु, मालवीय जी के बार-बार प्रार्थना करने पर भी माँ कुछ उत्तर नहीं दे रही थीं। मालवीय जी भी माँ से कुछ उत्तर पाये बिना हटने वाले व्यक्ति नहीं थे। उनके अत्यन्त आग्रह करने से माँ ने मुस्कराकर कहा—"यज्ञेश्वर का यदि विशेषरूप से आविर्भाव होनेवाला होगा तो वह भी होगा।" माँ का यह उत्तर

पाकर उक्त सज्जन चले गये । उनके चलते समय मां ने मुझसे उनका नाम, पता एवं उस दिन की तारीख लिख लेने को कहा । बाहर से यज्ञ के लिए यही एक अनुरोध पहले पहल प्राप्त हुआ । ये सज्जन हम लोगों के लिए सर्वथा अपरिचित थे । यज्ञ के संबन्ध में उनकी तीव्र उत्कण्ठा हमसे छिपी नहीं थी, किन्तु वे कौन थे एवं किस उद्देश्य से एक यज्ञ करने के लिए उन्होंने माँ से इतना अनुरोध किया था, केवल यही हम नहीं जान सके । फिर मजा यह कि इस समय जब कि बहुत वर्षों के बाद काशी के आश्रम में सचमुच सावित्री यज्ञ आरम्भ हुआ उसके ठीक पहले माँ ने एक दिन कुतूहल से कहा था, "वह आदमी जो पता दे गया था, यदि तुम से हो सके तो एक बार उसकी खोज कर देखो ।" हमारे आदमियों ने जाकर पते के अनुसार कोना कोना छान डाला किन्तु उक्त महादेव मालवीय का कुछ पता नहीं चला, इसी कारण बहुधा मन में विचार उठता कि वे सज्जन कौन थे और किसकी प्रेरणा से विन्ध्याचलवासिनी माँ के निकट आये थे एवं सर्वप्रथम इस भावी यज्ञ का सन्देश लाये थे ।

●

"तुम लोगों के मुख से सुनती हूँ कि ऋषि भी पहले अग्नि की उपासना ही आरम्भ करते थे। अग्नि ब्रह्म का प्रतीक है। तुम लोगों में कुछ लोग अग्नि को ज्ञान का प्रतीक भी कहते हैं। उस एक के ही अनन्त रूप हैं। अनन्त का ही एक रूप है, अनन्त में अन्त, अन्त में अनन्त हैं।"

–श्री श्री माँ आनन्दमयी

श्री श्री माँ आनन्दमयी प्रसंग

—स्व. अमूल्य कुमार दत्तगुप्त

आज प्रांतः हरिबाबा की लीला प्रारम्भ हुई है, चैतन्य महाप्रभु के जीवनवृत्तान्त का लीलाभिनय किया जा रहा है। माताजी को वहाँ ले जाया गया। मैंने थोड़ी देर के लिये लीला देखी, क्योंकि हमलोगों को दिन के ग्यारह बजे तक रवाना होना है। १0 बजे तक स्नानाहार समाप्त कर हम लोग मथुरा रवाना हुये। हमारी गाड़ी दोपहर के १२:३0 पर थी। खुकुनी दीदी एवं कमलदादा भी हमारे साथ दिल्ली चले। वे लखनऊ होते हुए काशी जायेंगे। यात्रा के पूर्व श्री श्री माँ को प्रणाम करने पर माँ ने कहा, "खूब सावधानी से जाना भी और आना भी। बार-बार यह शव्द कहे। मेरा मन थोड़ा सहम गया। सोचा शायद दिल्ली या काशी जाना शायद मेरे भाग्य में नही है। बाद में देखा कि मेरा अनुमान सत्य निकला। दिल्ली पहुँचकर तथा दिल्ली से काशी आते समय मुझे कई बार दिक्कतें झेलनी पड़ीं।

३0 चैत्र शनिवार (१२/४/५२) कल दूनएक्सप्रेस से माता जी हरिद्वार से वाराणसी आ पहुँचीं। वृन्दावन से माताजी आनन्द काशी गयी थीं। गोपीबाबू को तार द्वारा वहा ँबुला लिया गया था। गोपीबाबू भी श्री श्री माँ के ही साथ लौटे हैं।

इसबार माताजी को आश्रम पर्यन्त बाजों के साथ लाया गया था। इस आयोजन को देखते हुए श्री श्री माँ ने कहा, यह फिर क्या है ? 'आश्रम पहुँचने पर कन्यापीठ की लड़कियों ने चण्डीमण्डप में माताजी की धूप दीप से आरती उतारकर कुछ भोग लगाया था। इस समय का दृश्य बहुत ही सुन्दर था। माताजी को वेदी पर विराजित किया गया था। दोनों तरफ खड़ी हुई लड़कियों में से कोई पंखा झल रही थीं तो कोई चँवर डुला रहीं थी तो कोई-कोई धूप दीप से माताजी की आरती उतार रही थी साथ ही सब स्तव आदि गा रही थीं। माताजी की छवि से दिव्य छटा छिटक रही थी सारा मण्डप उस निराली छटा से आलोकित हो रहा था। पिछली बार श्री श्री वासन्ती पूजा के समय माताजी की उपस्थिति न रहने के कारण सबके मन में जो क्षोभ उत्पन्न हुआ था इस प्रकार की अभ्यर्थना द्वारा उस अभाव को दूर करने का प्रयास मात्र था।

प्रणाम यथार्थ भाव से हुआ कि नहीं उसे समझने का उपायः—

आज दिन के नौ बजे आश्रम जाने पर माताजी हाल में मिलीं। पाठ कीर्तनादि की समाप्ति पर सान्याल महाशय ने माताजी से कहा, "मैं एक बात कहना चाहती हूँ—आपको कितने लोग प्रणाम करने आते हैं और कितने प्रकार से प्रणाम करके जाते हैं; मैं कुछ काल्पनिक व्यक्तियों की बात कहता हूँ जैसे कि कोई आश्रम में प्रवेश न कर दीवाल पर माथा टेक कर आपके उद्देश्य से प्रणाम करके चला गया। दूसरा आदमी आश्रम में घुसकर कुछ देर खड़े होकर बाद में हाथ जोड़कर

आपको प्रणाम करके चला गया, तीसरे ने आकर पुष्पाञ्जलि अर्पित कर आपको प्रणाम किया। चौथे ने आपको फूल की माला पहना कर धूप दीप द्वारा आरती कर फिर प्रणाम किया। पाँचवें ने आपको फूल की मालाओं से सजा कर आपके चरणों पर १०८ मोहरें रखकर प्रणाम किया; समझा जाय कि प्रणाम के लिये दसनम्बर रखे गये हैं तो इन पाँचों ने जो आपको पाँच प्रकार से प्रणाम किया, प्रणाम के लिये किसको आप कितने नम्बर देंगी ? (सभी की हँसी)

माताजी- तुम जब यह बात कह रहे थे तब मैंने कहा था कि तीर लक्ष्य की ओर गया कि नहीं यह देखना पड़ेगा। मेरी इस बात में ही तुम्हारे प्रश्नों का जवाब है। तुमने तो केवल पाँच व्यक्तियों की ही बात कही है, उनके साथ कुछ और जोड़ लो, जैसे यहाँ न आकर घर पर बैठ कर ही प्रणाम कर रहा है या यहाँ आकर बाहर से प्रणाम न करके ही चला जा रहा है। यद्यपि मैं इस शरीर को प्रणाम करने की बात नहीं कह रही हूँ। देवालय या गंगा जी के समीप जाकर जैसे भी प्रणाम क्यों न करो वह ठीक हुआ या नहीं इसको जानने का एकमात्र उपाय है वह लक्ष्य स्थल पर पहुँचा या नहीं, उसे जानना। तीर लक्ष्यस्थान पर पहुँचने से जैसे तीर मारना सफल होता है, उसी प्रकार प्रणाम लक्ष्य की ओर पहुँचने से ही प्रणाम करना सार्थक होता है।

सान्याल महाशय- तीर लक्ष्य पर पहुँचा या नहीं इसे कैसे जाना जायेगा ?

माताजी- (हँसकर) लक्ष्यस्थान पर पहुँचने से अपने ही हृदय में आकर आघात लगेगा।

डॉ. पन्नालाल- तीर मारना है लक्ष्य को और आघात लगेगा तीरन्दाज के सीने में। यह तो बिल्कुल उल्टी बात है। (सभी की हँसी)

माताजी- वही तो होता है। जिसे उद्देश्य कर प्रणाम किया जाता है उसके पास पहुँचा या नहीं इसका भी अपने अन्तःकरण में ही पता लगता है। वह दूसरे को कहना नहीं पड़ता। खाते खाते पेट भरा या नहीं इस बात का पता जैसे अपने को ही लगता है, दूसरे को कहना नहीं पड़ता, उसी प्रकार उनका स्पर्श पाने पर तृप्तिरूप में अपने में ही प्रकाशित होता है।

सान्याल महाशय- मैं आपके पास आ रहा हूं, प्रणाम कर रहा हूँ, मेरा तो कुछ हो नहीं रहा है।

माताजी- "मैं आ रहा हूँ" है न इसीलिए कुछ हो नहीं रहा है। अवश्य ही इस शरीर को लक्ष्य करके मैं कुछ नहीं कह रही हूँ। तुम लोग देवालय में जाकर यदि यह सोचो, "मैं देवता के पास आया, प्रणाम किया, फिर भी फल क्यों नहीं हुआ।" उसके जवाब में कहा जाता है कि तुम्हारा अहम् है इसीलिए उसका प्रकाश नहीं हो रहा है।

सान्याल महाशय- अहम् को क्या अपने घर पर रखकर आना पड़ेगा ?

माताजी- (हँसकर) ठीक, ठीक अहम् को अपने घर पर रखकर आना होगा। अपना घर क्या है ? उनके पास। तुम लोग कहते हो न अहंकार अर्थात् यह अहम् किसका

है ? जब पता लगता है कि मेरा यह अहम् भी उनका ही है अर्थात् भगवान् का ही है, तब उनके पास अर्थात् अपने ही घर पर अहम् को रखा गया एवं जिस मुहूर्त में वह होता है उसी मुहूर्त में उनका प्रकाश । 'मैं करता हूँ' "मैं जाता हूँ" इस प्रकार जब तक अपने को कर्ता बनाकर रखा जाता है तब तक उनका प्रकाश नहीं होता । इसीलिये तब कहा था कि "मैं देवता के पास आया" इस प्रकार तुम्हारे में रहने के कारण तुम्हें उनका स्पर्श या प्रकाश नहीं मिल रहा है ।

इसके अलावा तुम भगवान् के पास गये वह ज्ञान ही कहाँ ? यदि यथार्थ में तुम्हें पता लगता कि तुम भगवान् के पास गये हो तो तत्क्षण तुम्हारा जो कुछ जलने का है वह जल जाता एवं जो कुछ पिघलने का है वह पिघल जाता अर्थात् आवरण नष्ट होता । भगवान् के पास जाने से क्या अहम् भाव रहता है ? तब देखा जाता है कि एक मात्र वे ही हैं । तुम्हारा अहम् उनका ही तो है, तब यह प्रकाश होता है ।

देखो, तुमने कहा कि बार-बार विग्रह दर्शन करके भी कोई फल नहीं मिला यह बात भी ठीक नहीं । कुछ मिला नहीं कहकर जिस व्याकुलता एवं अतृप्तभाव का अनुभव कर रहे हो वही उसका फल है । तृप्त होने के लिये पहले उनके लिये अतृप्त होना पड़ता है । यह अतृप्त भाव एवं व्याकुलता जितनी बढ़ेगी उतना ही उनका प्रकाश निकटवर्ती होता जायगा । विरह न होने से मिलन नहीं होता । इसीलिये उनको पाने के लिये अभाव बोध चाहिये । वैष्णव गण विरह को ही सर्वश्रेष्ठ अवस्था मानते हैं । पर वे जिस विरह की बात करते हैं, वह तुम लोगों का विरह नहीं है । उनका विरह होता है भगवान् के साथ मिलने के बाद । यह एक विशेष अवस्था है ।

सान्याल महाशय- लगता है साधन भजन से कुछ नहीं होता ।

माताजी (हँसकर) सच बात है साधन भजन से कुछ नहीं होता ।

सान्याल महाशय- ऐसा होने पर यह सब त्याग योग्य हैं, उनका कोई प्रयोजन नहीं है ।

माताजी- (हँसकर) ऐसा नहीं कहा गया । कुछ करने से कुछ मिलता है यह कहा गया है । वह न मिलने के बराबर ही, पर साधन भजन करने पर कुछ नहीं मिलता । अर्थात् उसके द्वारा पूर्ण को ही पाया जाता है । (सभी की हँसी) देखो । भगवान तो सर्वदा ही प्रकाशमान हैं, तुम उसका अनुभव नहीं कर रहे हो वह तो केवल तुम्हारे आवरण के लिये । इस आवरण को नष्ट करने के लिये साधना का प्रयोजन है । इसीलिये नाम, जप, ध्यान, सत्संग लेकर रहना पड़ता है । इसके फलस्वरूप लोगों की दुर्बुद्धि, दुर्गुण नष्ट हो जाते हैं । दुर्बुद्धि क्या है ? ना भगवान जो दूर हैं-इस प्रकार की बुद्धि को ही दुर्बुद्धि कहते हैं । जो रूप या गुण लोगों को भगवान से दूर रखते हैं वही दुर्गुण । यह दुर्बुद्धि एवं दुर्गुण चले जाने पर अर्थात् आवरण नष्ट होने पर उनका प्रकाश होता है ।

सान्याल महाशय- नाम, जप, ध्यान या सत्संग में जो उपकार होता है वह हम क्यों नहीं समझ सकते ?

माताजी- (हँसकर) अनेक समय माईलस्टोन दिखाई नहीं पड़ता । भगवान् का विधान ही ऐसा सुन्दर है कि एक अवस्था में कौन कितनी दूर अग्रसर हुआ यह वह देखने नहीं देते थे । परन्तु वे कर्म का हिसाब पाई-पाई का रखते हैं । ऐसी भी अवस्था है जब कौन कितनी दूर आगे बढ़ा और आगे भी कितना अग्रसर होना पड़ेगा यह उनके निकट प्रकाश हो जाता है । देखो, राजा का पुत्र होने मात्र से ही वह जब तब सिंहासन पर बैठ कर राजत्व कर सकता है, ऐसी बात नहीं, जब वह पढ़ाई लिखाई सीखकर सिंहासन पर बैठने के योग्य होता है तभी उसे सिंहासन पर बैठाया जाता है ।

एक सज्जन- भगवत् लक्ष्य पर चलते हुये लोग मार्ग में रुक क्यों जाते हैं ?

माताजी- (हँसकर) उनका ऋण है इसीलिये । उसने इस जन्म में या जन्मान्तर में जिन विषयों में अपना मन दिया था अर्थात् भोग की कामना की थी वही विषय आकर ही आगे बढ़ने के मार्ग में बाधा बनकर खड़े हो जाते हैं । उसके मनको उन विषयों के पथ पर खींच ले जाते हैं । यही उसके ऋण हैं । इन ऋणों को बिना चुकाये भगवान की ओर कैसे आगे बढ़ोगे ? यही कामना वासना ही आवरण हैं । इन सबको बिना हटाये उनका प्रकाश कैसे होगा ? इसीलिये ठंड में ही हो या ग्रीष्म में ही हो सर्वावस्था में केवल उनको स्मरण करना । इसका नाम ही तपस्या है । इस प्रकार करते-करते एकदिन आवरण नष्ट होकर उसका प्रकाश होगा ।

इन सब बातों के करते दोपहर के बारह बज गये माताजी उठ पड़ीं ।

१ वैशाख, सोमवार (१४-४-५२) बनारस एक्सप्रेस से माताजी कलकत्ता रवाना हो गयीं । कलकत्ते में तीन चार दिन रहकर पुरी चली गयीं । पुरी में भी माताजी ३/४ दिन रहकर कलकत्ता आयीं कलकत्ते से १४ वैशाख, रविवार काशी आकर पुनः १७ वैशाख बुधवार पञ्जाब मेल से खन्ना रवाना हो गयीं । इस बार माताजी का जन्मोत्सव खन्ना में ही हुआ था । इस बारे में कृष्णानन्द अवधूत जी अग्रणी थे । स्वयं संन्यासी होकर भी माताजी की तिथि पूजा के दिन रात को प्रायः चार घन्टे तक उन्होंने माताजी की पूजा की थी । माताजी के प्रति उनकी श्रद्धा कितनी गहरी एवं निर्मल थी यह इस घटना से ही प्रमाणित होता है । खन्ना से माताजी सोलन गयीं एवं वहाँ एक महीने से भी अधिक रहीं । कुछ दिनों के लिये माताजी शिमला भी गयी थीं ।

इस बार गर्मी में काशी में ही रहने का मैंने निश्चय किया था परन्तु किसी विशेष कार्य के लिये सपरिवार कलकत्ता जाना पड़ा । २१ मई को मैं कलकत्ता रवाना हुआ । मेरी इच्छा थी कार्य समाप्त होते ही जून के अन्त तक काशी लौट आऊँगा । पर कार्यवश ५ जुलाई से काशी लौट न सका । इधर माताजी २ जुलाई को सोलन से काशी पहुँच गयीं । ७ जुलाई को गुरुपूर्णिमा थी । माताजी जब काशी से खन्ना जा रही थीं तभी मैंने खुकुनी दीदी से कहा था माताजी गुरुपूर्णिमा पर काशी रहें ऐसा प्रयास दीदी करें । इसी के फलस्वरूप माताजी का काशी आना हुआ ।

६ जुलाई को मेरे काशी पहुँचने पर दीदी ने मुझ से कहा, "जिसकी बात पर माताजी काशी आयीं, आकर देखा वे ही अनुपस्थित।" माताजी ने भी इस विषय को लेकर कौतुक किया।

२३ आषाढ़ ७-७-५२ धूमधाम के साथ गुरुपूर्णिमा का उत्सव सम्पन्न हुआ। उक्त दिवस माताजी के चरणों में पुष्पाञ्जलि देकर तथा उनके हाथों से प्रसादी माला पाकर हम सब धन्य हुए थे। सारा दिन ही, पाठ, कीर्तन एवं सदालोचना आदि में व्यतीत हुआ। रात में प्रायः एक बजे तक माताजी को लेकर हमने आनन्द किया था।

कर्म मात्र ही यज्ञ है

"यदि तुम कर्म की दृष्टि से देखो तो तुम्हें ज्ञात होगा कि यह भी एक प्रकार का यज्ञ ही है। क्योंकि कर्ममात्र ही यज्ञ है। कर्म का पहले मन में उदय होता है। उसके बाद उसे कार्य का रूप देने की जो चेष्टा की जाती है वही हुई आहुति। कर्म करके जो फल प्राप्ति होती है उसी को तुम यज्ञ-फल कह सकते हो। इस प्रकार देखने पर सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में सदा यज्ञ चल रहा है। छोटी-मोटी कामनाओं को पूर्ण करने के लिये जो कर्म किये जाते हैं वे हुए सकाम यज्ञ एवं उक्त कर्मों के फल से कामनाएँ भी पूर्ण होती है, क्योंकि क्रिया का फल तो अवश्य होगा ही, किन्तु समस्त जगत् की इष्टप्रीति के लिये जो कर्म या यज्ञ किया जाता है वही हुआ महायज्ञ। उस कर्म की पूर्णता ही हुई पूर्णाहुति एवं उसका फल हुआ यज्ञेश्वर का आविर्भाव, इष्ट प्रादुर्भाव। इष्ट क्या है ? देखो, जहाँ अनिष्ट का स्थान नहीं है। अथवा जहाँ इष्ट अनिष्ट का कोई प्रश्न नहीं है। एकमात्र जो सदा प्रकाशित है उनका स्पर्श ही सरस है।"

–श्री श्री आनन्दमयी

श्री श्री माँ के मुखकमल से निःसृत आशा की दो वाणी

-स्वामी नारायणानन्द तीर्थ

परमाराध्या श्री श्री माँ की पवित्र उपस्थिति में सन् १९५८ में इलाहाबाद में शरत् कालीन श्री दुर्गापूजा हुई थी। स्नेहमयी माँ की असीम कृपा से उस पूजा में योगदान करने का सौभाग्य मुझे भी मिला था। पूजा समाप्ति के बाद इलाहाबाद से काशी लौट कर निश्चय किया कि काशी के बाहर कहीं नहीं जाऊँगा। जीवन के आखिरी दिन यहीं रहकर व्यतीत करूँगा। जीवन में साधन भजन तो कुछ नहीं कर सका इसीलिए काशी खण्ड के अमूल्य महावाक्य का ही भरोसा है. काश्यां मरणात् मुक्तिः। परम कारुणिक बाबा श्री विश्वनाथ जीव की मृत्यु के समय उनके कान में तारक ब्रह्म राम नाम सुनाकर ही इस दुःखमय अपार भवसागर से उस को चिरकाल के लिये मुक्त कर देते हैं, इसी आशा से ही मुक्ति क्षेत्र वाराणसी में पड़े रहना।

सन् १९५८ के १० नवम्बर को श्री कालीपूजा के दिन सन्ध्या समय श्री श्री माँ ने मुझे अपने शयनकक्ष में बुला भेजा। माँ का बुलावा सुन मैं सब काम छोड़कर माँ के पास गया। माँ को प्रणाम करके बैठते ही माँ ने कहा।

माँ– देखो नारायण इस शरीर के साथ इस शरीर की माँ गिरिजी और तुम जाओगे।

मैं– माँ तुम्हारे साथ कहाँ जाऊंगा ?

माँ– कानपुर संयम सप्ताह में।

मैं– माँ। इस बार पूजा के बाद इलाहाबाद से काशी आकर मैंने निश्चय किया है कि काशी छोड़कर कहीं नहीं जाऊँगा। कारण उम्र भी तो हुई है। कब क्या होगा कहा नहीं जाता। इसीलिये काशी में ही रहने की इच्छा है।

माँ– इस शरीर के साथ जहाँ भी तुम जाओगे वहीं तुम्हारे लिए काशी है।

श्री श्री माँ के श्रीमुख से यह सुनकर और कुछ उत्तर न दे सका। आनन्द से मेरा हृदय भर गया।

दूसरे दिन दोपहर को श्री अन्नपूर्णा माँ के मन्दिर के सामने नाटमन्दिर के सत्संग में पुनः वात उठी कि ज्ञान न होने तक मुक्ति नहीं हो सकती। इस विषय को लेकर जब आलोचना हो रही थी तब मैंने हताशा सहित माँ को देखकर कहा, "माँ मेरे जैसे अल्प बुद्धि और स्वल्प शक्तिसम्पन्न लोगों के लिये पूर्ण तपस्या भी सम्भव नहीं है, अतएव पूर्ण चित्त शुद्धि नहीं होगी। पूर्ण चित्त शुद्ध न होने पर पूर्ण ज्ञान की कोई आशा नहीं है।"

मेरे इस नैराश्य युक्त वचन सुनकर श्री श्री माँ ने कहा, "तुम्हारे अपने सामर्थ्यानुसार तुम तो काम करते जाओ - उसके बाद ....।" माँ की बात समाप्त न होते ही मैंने माँ से कहा, "इसके बाद जिनका कुछ बाकी रहेगा, मा आप ही वह पूर्ण करेंगी तो ?" मेरी बात पर अकस्मात् श्री श्री माँ के श्रीमुख से निकला, "हाँ बाकी का मैं - मा पूर्ण कर देंगी।"

श्री श्री माँ के मुखकमल से निकली हुई इस आशा की वाणी के श्रवण के साथ ही साथ मैंने उनको प्रणाम करके निवेदन किया कि "आपकी इस अमृत वाणी को सुनकर पूरा भरोसा हुआ मुझे और क्या चिन्ता ? काशी स्थान, गंगा का किनारा, माँ अन्नपूर्णा के सामने श्री श्री माँ के श्री मुख का महावाक्य । यह बिना सत्य हुए नहीं रह सकता ।"

ऐसी आशा की वाणी और कौन कह सकता है कि तुम्हारी बाकी तपस्या और अपूर्णज्ञान मैं पूरा कर दूँगी । एकमात्र श्री भगवान् को छोड़कर दूसरे किसी के मुँह से ऐसी वाणी का निकलना कदापि संभव नहीं हो सकता । अतः श्री श्री माँ की इस वाणी पर जीवन के अन्तिम मुहूर्त तक पूरा विश्वास रख सकूँ ।

श्री श्री माँ के अतुलनीय स्नेह के दो निदर्शन—

ऐसा कोई भी व्यक्ति नहीं होगा जिसने श्री श्री माँ का स्नेह आदर न पाया हो । श्री श्री माँ विवाहित स्त्री पुरुषों को पिताजी और माताजी कहकर सम्बोधित करती हैं तथा अविवाहितों को "दोस्त" कहा करती हैं । सभी माँ के भक्त अपने जीवन में घटी घटनाओं में श्री श्री माँ के एक न एक स्नेह का निदर्शन दे ही सकते हैं । पर कोई बुद्धिमान व्यक्ति ऐसी घटनाओं को गुप्त रखकर अपने भाव को पुष्ट करते हैं । पर फिर मैं अपने जीवन की ये सब घटनाएं लिख रहा हूँ इसका कारण है कि मैंने अनिच्छा से अपने कई सहृदय मित्रों से यह बात कही थी कि मैंने अपने इस क्षुद्र जीवन में श्री श्री माँ को जिस प्रकार पाया वह मैं निष्कपट भाव से यथासाध्य पूर्ण करने की कोशिश करूँगा ।

मैं आशा करता हूँ कि विदग्ध पाठकगण अनुकम्पा और सहानुभूति की दृष्टि से ही मेरा विवेचन करेंगे तथा समालोचक की दृष्टि का परिहार करेंगे ।

गत १८ जनवरी सन् १९५८ को श्री श्री माँ अपनी गर्भधारिणी की अस्वस्थता का संवाद पाकर आनन्दकाशी में केवल सात दिन रहकर ही वाराणसी लौट रही थीं । माँ की और भी कुछ दिनों तक आनन्द काशी में रहने की बात थी । कारण टिहरी गढ़वाल की राजमाता श्री आनन्द प्रिया का एकान्त अनुरोध था कि माँ वहाँ निर्जन में कुछ समय विश्राम करें । उस प्रस्ताव को व्यतिक्रम करके ही दीदी माँ को देखने के लिये काशी आईं । आश्रम के प्रधान सचिव श्री कमलाप्रसन्न भट्टाचार्य (कमलदा, वर्तमान-विरजानन्द जी) श्री श्री माँ को वाराणसी स्टेशन से लाने के लिये गाड़ी लेकर स्टेशन जा रहे थे । आश्रम से रवाना होते समय अचानक उनके साथ मेरी "सेवालय" (आश्रम का कार्यालय) के सामने भेंट हुई । कमलदा ने मुझसे कहा, "माँ को लाने मैं स्टेशन जा रहा हूँ । आप क्या मेरे साथ स्टेशन जायेंगे ? मैंने सहर्ष स्वीकार किया और माँ को लाने स्टेशन चला ।

श्री श्री माँ यथासमय लगभग चार बजने के कुछ पहिले ही देहरादून एक्सप्रेस से वाराणसी स्टेशन आकर पहुँचीं । माँ की गाड़ी की पहली सीट पर माँ के भक्त डाक्टर गोपालदास गुप्त बैठे एवं माँ के पास पीछे की सीट पर मैं बैठा । गोपाल बाबू ने गाड़ी में बैठते ही माँ के साथ नाना

प्रकार की बातचीत शुरू कर दी । गोपालबाबू की कहानी कहने की विशेष क्षमता थी । वे सब बातें मैं अत्यंत ध्यान से सुन रहा था । बातें सुनते सुनते मेरी गरम चद्दर खुल गयी थी । उधर मेरा ध्यान नहीं था । मुझे ठण्ड लग जायेगी इसीलिये माँ ने बातें सुनते सुनते ही चादर से मुझे लपेट दिया । पुनः खुल न जाय इसी लिये एक गाँठ भी बाँध दी । माँ ने इतनी क्षिप्रता से और स्नेह से यह किया जैसा कि कोई माता अपने बच्चे का पूरा ख्याल रखती । उस समय मैं कोई सिला वस्त्र नहीं पहनता था । यहाँ यह कह देना आवश्यक है सावित्री यज्ञ के प्रारम्भ से मैंने काफी दिनों तक सिला वस्त्र नहीं पहना था ।

यह छोटी सी घटना सभी की दृष्टि में अत्यन्त साधारण है इसमें कोई भी सन्देह नहीं है । एक साठ वर्ष के वृद्ध के प्रति शिशु सन्तान का सा स्नेह–व्यवहार केवल हमारी सन्तान वत्सला माँ ही कर सकती हैं ।

सन् १९५६ में शारदीया श्री दुर्गा पूजा के आसपास एक घटना हुई थी । उस समय कलकत्ते जाने पर माँ बालिगंज एकडालिया आश्रम में रहती थीं तब तक आगरपाड़ा आश्रम खरीदा नहीं गया था ।

एक दिन दिन के दस बजे के बाद माँ को कोई भक्त महिला अपने बालिगंज स्थित घर पर ले गयीं । उस दिन मुझे भी माँ के साथ जाने का सुअवसर प्राप्त हुआ था । सहस्त्रों लोगों की भीड़ में ही माँ ने मुझे अप्रत्याशित रूप से बुलाकर मोटर में बिठाया । मैंने कभी सोचा नहीं था कि मुझे माँ अपने साथ ले जायेंगी । मनोविज्ञान की दृष्टि भंगी से विचार करने पर देखा जाता है कि जिस वस्तु की आशा की जाती है वह न मिलने पर दुःख होता है, मिलने पर आनन्द होता है जिसकी कभी आशा नहीं की जाती है वह मिलने पर असीम आल्हाद होता है । माँ के मोटर की सामने की सीट पर ड्राइवर के पास बैठकर माँ के किसी विशेष भक्त के घर मैं चला । कहाँ और किसके घर जा रहा हूँ इसका कोई संवाद मुझे मालूम नहीं था एवं उसे जानने की उत्सुकता भी मुझे नहीं थी । माँ के साथ जाने का सौभाग्य मुझे मिल रहा है इससे मैं अपने को धन्य समझ रहा था माँ के चरण प्रान्त में कई कुमारी कन्यायें बैठी थीं । माँ जैसे ही अपने गन्तव्य स्थान पर पहूँचीं मैं माँ के आगे गाड़ी से उतरने के लिये उतरा तो गाड़ी के दरवाजे का ऊपरी हिस्सा खट् से मेरे कपाल में लगा । चोट लगने से मेरा कपाल फूल उठा । मैंने इस घटना को गुप्त रखने की कोशिश की पर श्री श्री माँ की व्यापक दृष्टि सहसा इस सन्तान पर पड़ गयी । छोटी से छोटी घटना भी माँ की दृष्टि से नहीं छूटती इससे यह स्पष्ट हो गया ।

इधर श्री श्री माँ को जो विशेष आग्रह द्वारा अपने घर ले गये थे वे माँ के गले में रजनीगन्धा की माला पहनाकर मंगल शंख बजाकर माँ का स्वागत कर रहे थे । माँ को अपने बगीचे में बैठाने का आयोजन कर रहे थे । पर माँ की उधर कोई दृष्टि ही न थी । उन्होंने व्यस्त होकर अपने वस्त्र के आंचल को गीला करने के लिये उन्हीं में से किसी से पानी माँगा । मैं तो समझ नहीं पा रहा था - माँ अपना वस्त्र आंचल भिगाने को इतनी उत्सुक क्यों हैं ? माँ शीघ्र ही अपना आंचल भिगाकर मेरे पास आईं एवं मेरी चोट पर गीला वस्त्र दबा दिया । माँ के इस स्नेह स्पर्श से मेरा हृदय आनन्द से भर गया । मेरे मन प्राण की सारी तन्त्रियाँ आनन्द से झंकृत हो उठीं । स्नेहमयी माँ का मधुर स्पर्श भाग्य से ही मिलता है । यदि ऐसा आदर मिले तो दो चार बार चोट लगना ही अच्छा है ।

बाद में अवसर पाकर मैंने माँ से कहा था, "माँ ! इतने लोगों के सामने आज तुमने क्या काण्ड किया ? मुझे इतनी ज्यादा चोट नहीं लगी थी, जिस कारण तुमने अपना पहना हुआ वस्त्र मेरी चोट के स्थान पर भिगाकर लगाया" माँ ने कहा, यह शरीर जो ठीक समझेगा वह सबके सामने भी करेगा और अगोचर में भी करेगा । इसमें इस शरीर को कोई संकोच नहीं है" ऐसा सीधा उत्तर भी श्री श्री माता आनन्दमयी के श्रीमुख के सिवाय अन्यत्र नहीं सुना जायेगा ।

माँ के स्नेह की बात स्मरण करने से हृदय आनन्द और कृतज्ञता के वशीभूत हो जाता है । माँ के स्नेह और आदर की तुलना संसार में और किसी के आदर स्नेह के साथ नहीं की जा सकती । माँ की तुलना केवल माँ से ही है । गर्भधारिणी माता का स्नेह शिशु पुत्र पर जैसे होता है, युवावस्था प्राप्त होने पर उसमें परिवर्तन दिखता है । परन्तु हमारी माँ में इस प्रकार का कोई व्यतिक्रम है ही नहीं । प्रत्येक जीव के प्रति निज आत्मा या ब्रह्म स्वरूप का दर्शन होने के कारण इस प्रकार का आचरण सम्भव होता है । उसमें किसी प्रकार का भेद ज्ञान नहीं है । यही है ज्ञानी की दृष्टि । विवेक चूड़ामणि में कहा गया है -

अन्तर्बहि : स्वं स्थिरजंगमेषु
ज्ञानात्मनाधारतया विलोक्य ।
व्यक्ताखिलोपाधिरखण्डरूप :
पूर्णात्मना यः स्थित एष मुक्त : ।। ३३९ ।।

जो समस्त-स्थावर जंगम या चराचर पदार्थ के भीतर और बाहर ज्ञान स्वरूप एवं उनके आधारभूत देखकर सभी उपाधि समूह को परित्याग करते हुए अखण्ड परिपूर्णरूप में स्थित रहते हैं वे ही मुक्त हैं । मुक्त पुरुष सर्वत्र अपने को ही अवलोकन करते हैं । उनके लिये स्त्री-पुरुष, शिशु-युवक, धनी-निर्धन, विद्वान-मूर्ख आदि में कोई भेद नहीं है । सर्वत्र ही वे ब्रह्म-दर्शन ही करते हैं । उनकी दृष्टि में उपाधि का कोई मूल्य नहीं है । वह सर्वदा और सर्व प्रकार से सत्ता शून्य या मिथ्या है । इसीलिये ब्रह्मज्ञ पुरुष के व्यवहार में कोई विभिन्नता नहीं दिखती है । इसीलिये उनमें कोई संकोच या लज्जा कुछ नहीं है । लज्जा-घृणा भयादि या तो दो से होता है अथवा दूसरे के पास । जिसका अपना-पराया किसी प्रकार की भेदबुद्धि नहीं, उसके पास इन सबका स्थान कहाँ ?

सर्वात्मना बन्धविमुक्ति हेतुः
सर्वात्म भावन्न परोऽस्ति कश्चित् ।
दृश्याग्रहे सत्युपपद्यतेऽ सौ
सर्वात्म भावोऽस्य सदात्मनिष्ठा ।।

संसार बन्धन से सर्व प्रकार से मुक्त होने के लिये सर्वात्मभाव अर्थात् सबको अपनी आत्मा के रूप में देखने के सिवाय और कोई उपाय नहीं है । निरंतर आत्मनिष्ठा में या ब्रह्मभाव में स्थित रहने से दृश्य का निषेध या बाधा हो जाने से सर्वात्मभाव की प्राप्ति होती है । मुक्त पुरुष या मुमुक्षु की जब यह अवस्था है, तब जो ज्ञान, भक्ति और मुक्ति देते हैं उनकी दृष्टि भंगी क्या है, वह साधारण मनुष्य की बुद्धि में नहीं आ सकता ।

●

सृजन कर्त्ता के दर्शन

भव चक्र से मुक्ति

—डा. प्रेम नारायण सोमानी

जन्म-मरण के चक्र को भव चक्र कहते हैं। बार-बार जन्मना, बार-बार मरना, बार-बार गर्भमें पड़ना तथा बार-बार चिता पर चढ़ाये जाना यह क्रम चलता ही रहता है। इसके आदि का कोई पता नहीं। वह आज भी चल रहा है और आगे भी चलता रहेगा। घूमते हुये चक्र के किस विन्दु को आदि कहें। समझदार व्यक्ति इस निरर्थक बात में नहीं पड़ेगा। आवश्यकता हैं भवचक्रसे छूटनेका मार्ग जानने की। इसे जानने के लिए यह जानना आवश्यक है कि भवचक्र चलता कैसे है? प्रकृति के बंधे-बधाये नियमों के आधार पर भवचक्र चलता रहता है इसकी 12 कड़ियाँ है। इनमें दो कड़ियाँ पूर्वजन्म की, सात कड़ियाँ इस जन्म की और तीन कड़ियाँ अगले जन्म के कारण हैं। भवचक्र की नाभि सदृश अविद्या है जिसकी धुरी पर चक्र चलता रहता है। इस अविद्या के कारण ही संस्कार बनते हैं। वे कर्म संस्कार जो नया जन्म देने में समर्थ होते हैं, उनसे नये जन्म का विज्ञान यानी चित्त उत्पन्न होता है। इसे ही प्रतिसंधि विज्ञान कहते हैं। इस विज्ञान के कारण चित्त और शरीरका प्रपंच चल पड़ता है। चित्त और शरीर (नाम, रूप) के कारण पाँच शारीरिक इन्द्रियां (आँख, कान, नाक, जीभ और त्वचा) तथा एक मन यों छः इन्द्रियों की उत्पत्ति होती है। इन छः इन्द्रियों के कारण रूप, शब्द, गन्ध, रस, स्पर्शव्य पदार्थ और धर्म (यानी चित्त जिसे धारण करे) इन छः लौकिक विषयोंसे इनका स्पर्श होता है। स्पर्श के कारण वेदना होती है। वेदना के कारण तृष्णा होती है। सुखद को प्राप्त करने अथवा रोके रखने की तृष्णा, दुःखदको भी दूर करने की तृष्णा। तृष्णा के कारण आसक्ति पैदा होती है। आसक्ति के कारण भव बनानेवाले गहरे कर्म-संस्कार बनते हैं। ऐसे भव संस्कारके कारण ही पुनः जन्म होता है। जन्म होता है तो जरा, मरण, शोक, परिदेव, दुःख, दौर्मनस्य और उपायास उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार दुःखों का समूह उत्पन्न हो जाता है। प्रत्यय होता है, तो उत्पाद होता है, कारण होता है तो परिणाम होता है, बीज होता है तो फल उत्पन्न होता है। निसर्गका यह सर्वव्यापी धर्म है। यही सार्वजनिक, सार्वकालिक, सार्वदेशिक धर्म है जो सबपर, सब समय, सब स्थानों पर समान रूप से लागू होता है। किसी पर पक्षपात नहीं, न किसीपर कृपा या कोप करता है। यह शुद्ध वैज्ञानिक बात है। इसमें निरर्थक दार्शनिक मान्यताओं के लिये भला कहाँ स्थान है। जब-जब कोई प्राणी अविद्याके अन्धकारका जीवन जीता है, तब रागमयी और द्वेषमयी तृष्णा जगाता रहता है। भवचक्र को चलायमान रखता है और रुकने ही नहीं देता तो पुनर्जन्म होता ही है। प्राणी अच्छे-बुरे कर्मोंके आधारपर स्वयं अपने संसार का कारक है।

स्पष्ट है कि कारण (प्रत्यय) ही नहीं रहेगा तो समुत्पाद कैसे रहेगा । बीज ही नहीं रहेगा तो फल कहाँ से आयेगा । यानी भीतरका होश जागे और बेहोशी दूर हो । यों अविद्या का निरोध हो तो कर्म संस्कारों का निरोध अपनेआप हो जाता है । कर्म संस्कारोंका निरोध हो तो नये जन्मके प्रति सन्धि विज्ञानका निरोध अपने आप हो जाता है । विज्ञान का निरोध हो तो नाम रूपका; नाम रूपका निरोध हो तो छः इन्द्रियोंका; छः इन्द्रियों का निरोध हो तो स्पर्शका; स्पर्शका निरोध हो तो वेदनाका; वेदना का निरोध हो तो तृष्णाका, तृष्णा का निरोध हो तो आसक्तिका, आसक्तिका निरोध हो तो भव का, भवका निरोध हो तो जन्मका, जन्मका निरोध हो तो जरा, मरण, शोक. दुःखका निरोध अपने आप हो जाता है । सीधी सी बात है, पहले अविद्या जड़से उखाड़े । इस प्रकार निरन्तर चलते हुए भव चक्रको ध्ययानसे देखनेपर उनके कारणोंको उखाड़ने का मार्ग भी स्पष्ट दीखने लगता है । सुने-सुनाये परोक्ष ज्ञानसे बुद्धि के स्तरपर इस आवागमन के चक्रको हजार समझ लें परन्तु अपनी प्रज्ञा जागे बगैर निस्तार नहीं होता । रूप, शब्द, गन्ध, रस और स्पष्टव्य पदार्थसे अथवा इनके न होने पर प्रिय-अप्रियके चिन्तनके स्पर्शसे भीतर ही भीतर सुखद या दुखद वेदना निरन्तर जागती रहती है और स्वयंमेव समाप्त होती रहती है । वेदना जागती है परन्तु इसका होश नहीं रहता । अविद्या टूटेगी यानी भीतर बेहोशीवाला मोह टूटेगा तो सुखद और दुखद वेदनाओं के प्रति लोभ द्वेषमयी तृष्णाकी प्रतिक्रिया बन्द होगी । इस प्रकार भवचक्र दुर्बल होते-होते टूटता चला जायेगा ।

किसी बुद्ध की यही बोधि है । इन वेदनाओं के प्रति साक्षी भाव, दृष्टाभाव बनाये रखना । न उन्हें दुखद मानना, न सुखद मानना । वेदनाओं के सम्यक् दर्शन से भवचक्र के आर टूटते हैं । यही वह बिन्दु है जहाँ से भवचक्र चलता रह सकता है या निरुद्ध हो सकता है । किसी बुद्ध पुरुषने इन वेदनाओं को ही सृजनकर्ता कहा है और बताया कि इनका साक्षी भाव से दर्शन करो तो मुक्त हो सकते हैं । नासमझी में लोगों ने सृजनकर्ताका व्यक्तिकरण कर दिया और चल पड़ा कि सृजनकर्ता परमात्मा है । फिर क्या था–बनने लगे उसके रूप । यदि उसके दर्शन हो जावे तो मुक्ति मिले । बात कहाँ से कहाँ पहुँच गयी – अविद्या के कारण लोग भूल गये कि भवचक्र आरे किसे कहते हैं? दुःख और दुःखके कारण स्वरूप प्रतीत्य समुत्पादके अनुलोम सत्य को जान ले । दुःख, निरोध और दुःख निरोध के मार्ग स्वरूप प्रतीत्य समुत्पादके प्रतिलोम सत्यको जान ले । जीवन जगत की इन सचाइयों को अनूभूति स्तर पर प्रतिपत्ति और प्रतिवेदन द्वारा साक्षात्कार करके ही कोई व्यक्ति अविद्या से विमुक्त होता है– तो ही भवचक्र कटता है ।

इन सृजनकर्ता वेदनाओं के अनित्य स्वभावको साक्षी भाव से देखना ही भवचक्र को समाप्त करने में सक्षम है । हम सब पूर्वजन्म के अविद्याजनित संस्कारों के साथ पैदा होते हैं और अज्ञान (अविद्या) में ही सारा जीवन बिता देते हैं जिनमें पत्थर की लकीरों जैसे गहरे -गहरे संस्कार बनते रहते हैं वही मृत्यु के समय उभरकर आते हैं और पुनर्जन्म का कारण बनते हैं । इन संस्कारों को निरुद्ध करनेकी विद्या की विपस्सना है जो अविद्या का नाश करने में सक्षम है एवं मुक्तिके पथ का पथिक बनाती है ।

●

अखण्ड सावित्री महायज्ञ की पूर्णाहुति की अर्द्धशताब्दी पर विशेष भेट

पूर्णाहुति का आँखों देखा विवरण

—गुरुप्रिया देवी

काशी के आश्रम में साधु-महात्माओं के शुभागमन के बाद से ही भक्तों का तांता लगना आरम्भ हो गया था। बम्बई, गुजरात, अहमदाबाद, पञ्जाब, दिल्ली, देहरादून, अल्मोड़ा, कानपुर, लखनऊ, इलाहाबाद, पटना, जमशेदपुर, कलकत्ता, ढाका और पूर्वी बंगाल के अन्यान्य स्थानों से झुण्ड के झुण्ड भक्तगण आने लगे। इन भक्तों में सभी वर्ण और सभी श्रेणियों के लोग थे। एक ओर सोलन और सुकेत के राजा तथा अहमदाबाद के करोड़पति जैसे लोग थे और दूसरी ओर मध्यवित्त साधारण गृहस्थ, निर्धन तथा पूर्वी बंगाल के सर्वस्व गँवाये हुए लोगों का दल भी था। माँ के भक्तों में अधिकांश लोग आधुनिक शिक्षा में उच्च शिक्षित हैं किन्तु अर्धशिक्षित एवं अशिक्षितों की संख्या सर्वथा नगण्य हैं सो बात नहीं है। सम्मिलित भक्तों में जैसे सर्वोच्च न्यायालय के जज, बैरिस्टर, अटर्नी से लेकर स्कूल कालेजों के छात्र, अध्यापक आदि थे वैसे ही वर्तमान सभ्यता से सर्वथा अस्पृष्ट, स्वच्छन्द प्रकृति की गोद में लालित पालित, शुद्ध सरल हृदय पर्वतीय स्त्रियों का दल भी था। अल्मोड़े से आठ पर्वतीय स्त्रियाँ आई थीं, जिन्हें हम लोग "माँ की अष्ट सखियां" कहते थे। वे माँ को "चित्तचोर" कहती थीं। उनकी वेष-भूषा की कोई शृंखला न थी, सहज सरल स्वभाव था। वे सब माँ के लिए अपने यहाँ से कोई न कोई वस्तु लाई थीं—कोई तिल, कोई चावल, कोई चूड़ा इत्यादि। उन्होंने ये सब तिल, चावल आदि अपने खेतों में पैदा किये थे, वे स्वयं ही छांट वीन कर लाई थीं। यज्ञ के लिए छोटे-छोटे टीन के डिब्बों में घी एव दीपक की बत्तियां भी लाई थीं। उन सब बत्तियों की संख्या भी कम न थी। कोई एक लाख, कोई 25 हजार, कोई 10 हजार और कोई २/१ हजार बत्तियां लाई थीं। माँ ने भी उनकी बड़ी सुन्दर व्यवस्था की थी। पूर्णाहुति के दिन उन सब बत्तियों को घी में भिगा कर कई बड़ी बड़ी परातों में रख कर उनसे अग्निदेव की आरती कर उन्हें माला के आकार में यज्ञशाला में सजा कर रखा गया। उस दिन वे भी एक दर्शनीय वस्तु बन गये थे। न जाने कितना अधिक हृदय का आकर्षण रहने के कारण माँ के लिए उन सब वस्तुओं को अपने हाथ से तैयार कर जाड़े में दुर्गम पहाड़ों को पार कर इतनी दूर में उनका आना सम्भव हुआ यह भी विचारणीय विषय है। उनका उक्त उपहार देख कर किसी किसी ने उसकी विदुर (सुदामा?) के चावल की किनकियों से तुलना की थी। किन्हीं ने उन्हें धनाढ्यों के बहुमूल्य उपहारों की अपेक्षा अधिक मूल्यवान् समझा था। उनके विचित्र जन-संघों को देखकर जैसे आश्चर्यान्वित होना पड़ता है वैसे ही माँ की जो एक विराट् आकर्षिणी शक्ति है उसका भी कुछ कुछ पता लगता है।

पौष मास के आरम्भ से ही छिट पुट रूप से भक्तों का समागम होने लगा था । पूर्णाहुति का दिन ज्यो-ज्यों निकट आने लगा त्यों-त्यों भक्तों की भीड़ बढ़ने लगी । उस समय नित्य नये आये हुए लोगों की संख्या ५०-६० से आरम्भ होकर अन्त में २००-२५० तक पहुँची थी । इस प्रकार आश्रम में प्रायः हजार से अधिक भक्तों का आगमन हुआ था, इतने लोगों को आश्रम में स्थान देना सम्भव न देखकर हमने आश्रम के आस-पास तथा आश्रम से कुछ दूर भी लगभग २५-३० मकान किराये पर लिये थे । शीतकाल होने के कारण थोड़ी जगह में अधिक लोगों का समावेश करना सम्भव हो सका था । अधिकांश मकानों में बिजली का प्रकाश न था, इसलिए हमें हैरीकेन, लालटेन, मोमबत्ती आदि की व्यवस्था करनी पड़ी थी । कहीं-कहीं चौकी, खटिया, चटाई आदि का भी प्रबन्ध करना पड़ा था । जल आदि रखने के लिए सैकड़ों बाल्टियाँ, घड़े आदि देने पड़े थे । जिन्होंने आश्रम में प्रसाद न पा कर अपनी रसोई अपने आप ही बनाने का निश्चय किया था, उनके लिए बर्तन, चूल्हा, कोयला, लकड़ी आदि का भी प्रबन्ध कर देना पड़ा था ।

आश्रम में एक समय प्रायः हजार आदमी प्रसाद पाते थे । हाल के कमरे के नीचे जो तीन कोठरियाँ हैं उनमें से एक में रसोई बनाने का और दो में बैठ कर प्रसाद पाने का प्रबन्ध किया गया था । इसके सिवा अन्यान्य स्थानों मे भी रसोई बनाने का प्रबन्ध था । श्री अन्नपूर्णा का जो भोग बनता था उसमें से सौ सवा-सौ लोग प्रसाद पाते थे । वहाँ साधारणतः विधवाएँ ही प्रसाद पाती थीं । कन्यापीठ में अधिक मात्रा में रसोई बनाने की व्यवस्था कर वहाँ स्त्रियों के भोजन की सुविधा कर दी गई थी । श्री श्री माँ के लिए जो भोग बनता था । उसमें से भी भक्तजन प्रसाद पाते थे । उसके अतिरिक्त हमारे आश्रम से सटे हुए जो दो जैन मन्दिर हैं, उनके अधिकारियों ने भी कृपा कर वहाँ हमारे भक्तों के लिए कई कोठरियाँ खाली कर दी थीं । वहाँ जो रसोई बनती थी उसमें से भी सैकड़ों लोग प्रसाद पाते थे । पर आश्रम के हाल कमरे के नीचे ही अधिक संख्या में लोग भोजन करते थे । श्री अन्नपूर्णा, कन्या-पीठ तथा श्री माँ के भोग के अतिरिक्त सब रसोइयों के द्वारा तैयार कराई जाती थी । जिस समय वे बड़े-बड़े हंडों तथा कड़ाहों में रसोई ढक देते थे उसे देख कर ही मन के ऊपर विराट् भाव की छाप पड़ती थी । एक बड़े भारी कड़ाह में सम्भवतः एक टीन तेल उड़ेल दिया जाता था । उसके पश्चात् उसमें नाना प्रकार की तरकारियाँ, जो काट-कूट कर तैयार रखी रहती थीं, एक बार में लगभग 5 मन छोड़ कर जब बड़े बड़े करछुलों से उसे घोटते थे तब उस दृश्य को देख कर हमें महाभारत के यक्ष-युधिष्ठिर के संवाद की याद आ जाती थी । यक्ष ने यक्षरूपधारी धर्म ने । युधिष्ठिर से प्रश्न किया था–"का वार्ता"–बात क्या है? युधिष्ठर ने उसके उत्तर में कहा था, "काल सूर्यरूपी अग्नि से रात्रि दिन रूपी लकड़ियाँ जला कर महा मोहरूपी कड़ाह में मास ऋतुरूपी करछुलों से चला कर प्राणियों को पका रहा है । यही वार्ता है ।" यह ठीक है कि हमारी वार्ता यद्यपि वैसी नहीं थी तथापि पाक-प्रणाली जगत् की विराट् वार्ता का स्मरण करा देने के लिए पर्याप्त थी । उस व्यापार के प्रधान कर्णधार थे स्वामी परमानन्द । इन सब कामों के लिए धन की आवश्यकता भी विराट् प्रकार की ही होती है । किन्तु पहले ही कहा जा चुका है कि जितने दिनों तक यज्ञ चला उतने दिनों तक कभी भी हमारे पास धनका प्राचुर्य नहीं रहा । हाँ,

धनाभाव से कभी हाथ भी नहीं रुका। जिस समय आश्रम में झुण्ड के झुण्ड भक्तगण आने लगे उस समय कमल ब्रह्मचारी ने (जो इस यज्ञ का हिसाब किताब रखते थे एवं विशेष रूप से आगन्तुकों की देख रेख करते थे) एक दिन, दिन पर दिन खाली हो रहे अपने भण्डार को देख कर मेरे पास आकर कहा, "दीदी, ये जो झुण्ड के झुण्ड साधु तथा भक्तजन आश्रम में आ रहे हैं इनकी सेवा का साधन क्या है? भण्डार तो प्रायः खाली है।" उसे हताश देख कर मैंने कहा था, "चिन्ता क्यों करते हो प्रबन्ध हो ही जायगा। देख तो रहे ही हो कि मां की कृपा से जिस समय जो आवश्यकता होती है वह पूरी हो जा रही है।" जिस दिन यह बात हुई थी उसी दिन या उसके दूसरे दिन इलाहाबाद से नीरज बाबू की स्त्री आईं। उन्होंने आते ही २५०) रुपये मेरे हाथ में देकर कहा कि इन रुपयों को आप यज्ञ के किसी काम में लगा दीजिये। मैंने भी वे रुपये कमल को देकर हँसते हुए कहा था, "तुम्हें तो धन के लिए बड़ी चिन्ता हो रही थी यह लो धन। इसे साधु-सेवा में लगा दो।" यह सुन कर कमल ने हँसते हुए उत्तर दिया था, "दीदी, ये २५०) रुपये ढाई दिन भी नहीं चलेंगे। यथार्थ में बात ऐसी ही थी। पीछे जब अधिक संख्या में भक्तजन आने लगे तब तो हमारा दैनिक खर्च ५००) रुपये से २०००) रुपये हो चला था। यद्यपि इस यज्ञ के खर्च का पूरा पूरा हिसाब नहीं रखा गया फिर भी खूब संयम के साथ कम से कम खर्च कूतें तो मालूम होता है लगभग ३ लाख रुपये खर्च हुए होंगे।

उत्सव तथा भोजनादि के व्यय के अतिरिक्त मां के निर्देशानुसार आश्रम में जब जो कुछ हुआ वह सब मानो राजसी ठाठ से हुआ। जो सब महात्मा और भक्तजन यज्ञ के अवसर पर आश्रम में पधारे थे उनको मां के आदेशानुसार आशीर्वाद वस्त्र दिये गये थे। किन्हीं किन्हीं को रेशमी धोतियां और चादर, महिलाओं में किन्हीं को रेशमी और सिल्क की साड़ियाँ, किन्हीं को हैण्डलूम और मिल की सुन्दर सुन्दर साड़ियाँ, छोटी कुमारी लड़कियों को कुर्ती और गरम फ्राक, बड़ी लड़कियों को साड़ी, गरम फ्राक, कुर्ती आदि, ब्रह्मचारियों को सिल्कन रामनामी तथा शाल आदि दिये गये थे। यह सच है कि मां भण्डार की स्थिति को ध्यान में रखकर कोई आदेश नहीं देती थीं किन्तु यह सदा ही मेरे देखने में आया है कि जब जब मां ने जो कुछ भी करने की आज्ञा दी है उसे कार्यरूप में परिणत करने के लिए उपयुक्त सहायता अपने आप ही आकर उपस्थित हुई। उन सब आशीर्वादी वस्त्रों को खरीदने में हजार रुपये से अधिक व्यय हुआ था। उनके अतिरिक्त भक्त जनों ने मां को समय-समय पर जो सब मूल्यवान् कुर्ती, कपड़े, चादर, कम्बल, स्वेटर आदि दिये थे वे सब भी उनके साथ बांट दिये गये थे। उनकी संख्या भी सौ से अधिक ही होगी। पूर्णाहुति के दिन अधिकांश भक्त इन सब आशीवार्दी वस्त्रों को ही पहन कर उत्सव देखने आये थे। मां के द्वारा प्रदत्त साज-सामग्री से सुसज्जित प्रसन्नवदन इन सब भक्तों ने उत्सव की शोभा को और भी उज्ज्वल कर दिया था।

आश्रम में सबेरे शाम दोनों समय हजार से भी अधिक लोग प्रसाद पाते थे। उसके सिवा प्रातः काल से रात के बारह बजे तक सत्सङ्ग और कीर्तनादि में समय बीत जाता था। इस कारण आश्रम में खूब कोलाहल हो सो बात नहीं रही। जिनके ऊपर उन सब कामों का भार था वे मानों यन्त्र की

तरह उन सब कामों को कर डालते थे । इसके कारण उनमें विरक्ति या थकावट का लेश भी नहीं दिखाई देता था । सब विषयों में मानों वे निश्चिन्त और निर्भय थे । वह भी श्री मां की कृपा से ही हो सका था, यह कहना व्यर्थ है । श्री मां उन लोगों की कर्तव्यपरायणता और उत्साह के लिए बीच-बीच में कहती थीं, "तुम जिस समय जो काम करो उसे सेवा की भावना से ही करो । याद रखो, यज्ञेश्वर ने ही नाना प्रकार से सेवा ग्रहण करने की व्यवस्था की है । सब रूपों में एक-मात्र वे ही तो हैं । तुम उनके सेवकमात्र हो । इसलिए तुम लोगों में जिस प्रकार आलस्य, शिथिलता अथवा क्रोध आदि का भाव न झलके, उस ओर सदा लक्ष्य रखो । सदा संयमी होकर रहने की चेष्टा करो एवं सदा इस भावना को मन में जागरूक रखो कि यज्ञेश्वर ने कृपा कर हमें इस सेवा का व्रती बनाया है तथा इस सेवा में अधिकार दिया है एवं यज्ञेश्वर से ऐसी प्रार्थना करो कि वे तुम्हारी सेवा को निर्दोष रूप से परिपूर्ण करें । ध्यान रखो, निर्दोषरूप से सेवा होने पर सब (अर्थात् नानात्व) निवृत्त हो जाता है । इसीलिए सेवा में आनन्द प्रकट करने की आवश्यकता है ।"

"यदि तुम कर्म की दृष्टि से इस सेवा को देखो तो तुम्हें ज्ञात होगा कि यह भी एक प्रकार का यज्ञ ही है; क्योंकि कर्ममात्र ही यज्ञ है । कर्म का पहले मन में उदय होता है । उसके बाद उसे कार्य का रूप देने की जो चेष्टा की जाती है वही हुई आहुति । कर्म करके जो फल-प्राप्ति होती है उसी को तुम यज्ञ-फल कह सकते हो । इस प्रकार देखने पर सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में सदा यज्ञ चल रहा है । छोटी-मोटी कामनाओं को पूर्ण करने के लिए जो कर्म किये जाते हैं वे हुए सकाम यज्ञ एवं उक्त कर्मों के फल से कामनाएँ भी पूर्ण होती हैं, क्योंकि क्रिया का फल तो अवश्य होगा ही, किन्तु समस्त जगत् के इष्ट की प्रीति के लिए जो कर्म या यज्ञ किया जाता है वही हुआ महायज्ञ । उस कर्म की पूर्णता ही हुई पूर्णाहुति एवं उसका फल हुआ यज्ञेश्वर का आविर्भाव, इष्ट का प्रादुर्भाव । इष्ट क्या है? देखो, जहाँ अनिष्ट का स्थान नहीं है अथवा जहाँ इष्ट-अनिष्ट का कोई प्रश्न नहीं है । एकमात्र जो सदा प्रकाशित हैं उनका स्पर्श ही सरस है । तीन वर्ष से जो यह यज्ञ चल रहा है, इसमें तुम लोगों में से जिसने जो काम किया वह चाहे साधारण हो चाहे महान्, वह सभी यज्ञ रूप में किया ऐसा समझो ।"

इस सिलसिले में एक भक्त ने माँ से पूछा था "माँ, इस यज्ञ का फल क्या है?" माँ ने उसका उत्तर स्पष्ट रूप में न देकर कहा था, "देखो, अग्नि-देव जो इस तरह प्रकट हुए और इतने समय तक उन्होंने जो सेवा ग्रहण की, क्या वह सर्वथा निष्फल है? इस अग्नि को 'एक महायज्ञ में लगा दूँगी' ऐसी वाणी अपने आप मुंह से निकल पड़ी थी वह क्या केवल कल्पनामात्र है? यह निश्चय जानो कि जो कुछ हो रहा है वह उनके राज्य के, निखिल ब्रह्माण्ड के, सृष्ट असृष्ट सभी को लेकर कोई अपूर्व व्यापार है । वे यह जो कुछ करा रहे हैं उसे बच्चों का खेल मत समझो । योगायोग की ओर क्या तुम तनिक दृष्टिपात नहीं कर रहे हो? लोक में इच्छा करने पर ही क्या ऐसे योगायोग की सृष्टि कर सकते हो? देख ही तो रहे हो वे इस तरह से प्रकाशित होने के लिये जिस वस्तु की आवश्यकता है उसे अपने आप ही ला रहे हैं । सबके भीतर स्थित होकर वे ही कृपा कर रहे हैं । इस प्रकार देखने का अभ्यास करने पर एक दिन इस सारे व्यापार की सार्थकता तुम्हें प्रतीत हो

जायगी ।" मां के सब उपदेश कार्य-कर्ताओं के हृदय में रसायन की भाँति असर कर उनकी कर्म शक्ति को उज्जीवित करते रहते थे, यह कहना तो अधिक है । इसीलिए वे लोग संयत मन से एवं परम आनन्द के साथ अपने-अपने कर्तव्यों को रात दिन पालन करते जाते थे ।

पूर्णाहुति का दिन ज्यों ज्यों निकट आ रहा था त्यों-त्यों भक्तों तथा कार्यकर्ताओं का उत्साह बढ़ता जा रहा था । सभी लोग किसी न किसी रूप में अपने को इस यज्ञ कार्य में नियुक्त कर सकने पर मानो अपने को कृत-कृत्य समझ रहे थे । पूर्णाहुति के दिन नवीन ध्वज तथा पताकाएँ लगानी थीं, इसलिए लड़कियाँ बड़े उत्साह के साथ उन्हें नये सिरे से तैयार करने में लग गईं । श्रीमती रेणुका देवी ने सुन्दर-सुन्दर साटन के ध्वज तथा पताकाओं पर कूची से विभिन्न देवी देवताओं के वाहन और अस्त्र-शस्त्रों को अंकित कर दिया एवं काढ़ने में पारंगत कुमारी वीथिका देवी ने उन्हें विभिन्न रंगों के रेशमी डोरों से भर कर प्रत्येक चित्र को दर्शनीय रूप दे डाला । सब ध्वज और पताकाएँ तैयार करने का भार तथा उनका व्यय अकेले लक्ष्मी रानी ने ही उठाया था । लगभग सौ से अधिक व्यय से विचित्र रंग की बनारसी साड़ी के टुकड़ों से महाध्वज बना कर उसके छोर पर जरी का झालर और एक गुच्छा चाँदी के घुंघुरुओं का लगा दिया था । इसका व्यय श्रीमती शीला एवं उदास ब्रह्मचारिणी ने उठाया था ।

पूर्णाहुति के दिन गायत्री देवी की राजोपचार से पूजा करने की व्यवस्था हुई थी । उसके लिए देवी को वस्त्र और अलङ्कार जो जो चढ़ाने थे वे सभी धीरे-धीरे इकट्ठे हो गये । देवी के पहनावे में कांचुली का उल्लेख मिलता है, किन्तु वह क्या चीज है यह हमें ज्ञात न था । श्री माँ की कृपा से किसी प्रकार की भी अङ्गहानि होने का अवसर नहीं आया । इसलिए हमें कांचुली का भी पता चल गया । गुजराती महिलाओं में शान्ति देवी नाम की एक महिला सदा ही आश्रम में आती थीं । वे कांचुली बनाना जानती हैं यह सुनकर उन्हीं पर उसके बनाने का भार दे दिया गया था । उन्होंने भी उसे बहुत सुन्दर ढंग से तैयार कर दिया था । उसके तैयार होने पर मालूम हुआ कि कांचुली शरीर में पहनने की एक तंग कुर्ती के सिवा और कुछ नहीं है । पर उसकी काट छाँट और सिलाई में विशेषता अवश्य है । वस्त्र और अलंकारों के सिवा देवी जी के लिए पलंग, शय्या, सवा सेर वस्तु जिसमें समा सके ऐसी चाँदी का एक कटोरा तथा चाँदी के एक सेट बर्तन, इकट्ठे किये गये । चन्दन के कांठ में पूर्णाहुति हो इसके लिए कोई १० सेर, कोई २० सेर, कोई थोड़ा सा चन्दन काट लाकर देने लगा । इस प्रकार पूर्णाहुति का आयोजन चलने लगा ।

आनन्दमयी स्मृति

–चित्रा घोष

१२ सितम्बर १९५८

सुना कि बेलूदीदी (गुरुप्रिया दीदी की बहन) ने कुछ महीने पहले महानिशा के ध्यान में अपने कमरे के बाहर बरामदे में काली मूर्ति को प्रकट होते देखा था। हमलोग माताजी के पहुँचने के बाद टैक्सी द्वारा पहुँचे। जाकर देखा कि तेल में सेंकने के लिये कोहड़े के टुकड़े किस प्रकार किये जाने चाहिये वह सिखा रही हैं, करेला भी काटा था। काली पूजा भी बेलूदी के कमरे में ही हुई।

बेलूदीदी ने माँ का सुन्दर श्रृंगार किया। माँ को टिकली पहना कर एक बैंगलोरी साड़ी पहनाई गयी जो सफेद रंग की थी, जिसका किनारा और आँचल मेरून रंग का था। बेलू दी ने रात के डेढ़ बजे श्री श्री माँ की आरती उतारी। माँ के ऊपर के कमरे में लाल बनारसी साड़ी पहना कर सिरमौर के राजा के भाई तथा भ्रातृवधू ने माँ की पूजा की। माँ के कमरे के बरामदे में भोग लगाया गया। रात के ढाई बजे हमने प्रसाद पाया। आँवले के पेड़ के नीचे बैठ कर माताजी ने कालन दीदी और गोपालजी की घटना सुनाई तब रात के दो बजे थे।

१३ सितम्बर–आज दोपहर को अनिलदादा के प्रश्न के जवाब में काफी देर तक सत्संग हुआ। माताजी जो गाती हैं उस प्रसंग में चर्चा चल रही थी। माँ ने कहा, "स्वर की आदि सृष्टि जहाँ है वहाँ से आते हैं, कुछ सीखा तो नहीं। तैयार होकर निकल जाते हैं। कामाख्या पर्वत चढ़ते समय वीरेन दादा माँ को सँभालने गये इसके विपरीत माँ को ही वीरेन दादा को सँभालना पड़ा था। इस सम्बन्ध में माँ ने कहा, पहाड़ पर जब चढ़ रही थी एक भाव में हिलते डुलते चढ़ रही थी सोच लो, तुम एक गेंद से खेलते हो, खेलते समय हाथों के स्पर्श से गेंद के भारीपन का अन्दाज लगाया जा सकता है क्या! ठीक इसी प्रकार शरीर चढ़ रहा था। वीरेन ने शरीर की इस चाल को देखकर सोचा शायद शरीर गिर जायगा और वह सँभालने गया। भाव में बाधा पाने के कारण शरीर का बोझ जैसे ही उसके ऊपर पड़ा वह कैसे सँभालेगा वह स्वयं ही गिरने लगा देख ख्याल आया तब उसे ही सँभालना पड़ा। वीरेनदादा हृष्टपुष्ट डीलडौल के थे। परन्तु भाव का शरीर था अतः वह बोझ उस पर पड़ने के कारण वह सँभाल नहीं सका।

हरिद्वार में कुम्भ मेले में गंगा में नहाते समय जल के साथ एकाकार होने के प्रसंग में माँ ने कहा–यह पहली बार पञ्चमहाभूत के साथ शरीर एकाकार हो गया। जल के साथ जल हो गया। बिल्कुल निर्मल जल पर दस मिनट तक ढूँढ़ने पर भी माँ को नहीं देखा गया। माँ ने कहा लगा लेटी हूँ। यदि उठने का ख्याल नहीं होता तो न जाने क्या हो जाता कहा नहीं जा सकता।

माँ क्या हमलोगों को आखिर में "जो हो जाय" कहकर छोड़ देंगी। इस प्रश्न के जवाब में माँ ने काफी कुछ कहा। आखिर में कहा–"व्यापारी के पास जाने पर व्यापारी होते हैं। मतवाले के पास रहने से मतवाले होते हैं। अब इस शरीर के पास आकर क्या होगा क्या करोगे यह तुमलोग मीटिंग करके ठीक करो। "जो हो जाय" के अगले स्तर पर जो होने का है हो ही रहा है।

१९ सितम्बर–गोपीबाबू के साथ सत्संग में प्रसंग चला माँ का ख्याल क्या है ? अमूल्य बाबू (दत्तगुप्त) ने कहा, जैसे छोटा बच्चा खेलते खेलते अचानक कूदने लगता है यद्यपि कोई कारण नहीं होता एक अदम्य स्फुरण हेतु उसकी यह क्रिया होती है । परमसत्ता में भी क्या कोई स्फुरण है, जिसका इस ख्याल के रूप में प्रकाश होता है । गोपी बाबू ने कहा, "किसी कारण द्वारा उसकी व्याख्या नहीं हो सकती । माँ ने इस प्रसंग में पहले कुछ नहीं कहा, बाद में कथा प्रसंग में कहा था कि "ख्याल किसके ऊपर, वहाँ एक ब्रह्म द्वितीय नास्ति' क्रियातीत वहाँ ख्याल अख्याल का प्रश्न ही कहाँ । जहाँ जो कुछ भी हो रहा है सब ही तो यहाँ । यदि तुमलोगों की स्थिति से कहो तो जहाँ क्रिया जगत् वहाँ ख्याल है । तीन प्रकार ज्योति, प्रत्येक मनुष्य ही चिन्मय विग्रह । एक एक विग्रह की ज्योति । स्वयं ही ज्योति स्वरूप । माँ की बातों का भावार्थ इतना उच्चस्तरीय है कि उसे समझना ही कठिन है ।

२० सितम्बर–वार्षिक भागवत् जयन्ती वाराणसी में हो रही है । कान्तिभाई कथा व्यास हैं । माँ प्रातःकाल सोने के लक्ष्मीनारायण और भागवत् गोद में लेकर बैठीं । बाद में श्रीमद्भागवत् को मस्तक पर रखकर लाया गया । माँ पूजा के समय मातृमण्डप के हाल में बैठीं । लक्ष्मी नारायण को सिर से और हृदय से लगाया । प्राण प्रतिष्ठा हो गयी । सायम् काल श्री श्री माँ माहात्म्य व्याख्या में विराजमान थीं ।

२१ सितम्बर–आज प्रातः माँ दिल्ली मेल से दिल्ली चली गयीं । वहाँ गुरुप्रिया दीदी का तीसरी बार लम्बर पंचर होना है । डा. सेठ करेंगे । जाने से पहले माँ ने भागवत् के हॉल में प्रवेश किया । हमलोग बिन्दु की गाड़ी से मोगलसराय तक गये । माँ ने बहुत प्यार से मेरे हाथों को दबाया । मस्तक और पीठ पर आशीर्वाद स्पर्श प्रदान कर कहा–"सावधानी से रहना । मैं दूर नहीं जाती । हर समय पास पास हूं । ठीक से रहना । चिट्ठि लिखना । तुमलोगों के मंगल के लिये ही वह बात कही गयी थी ।

२२ सितम्बर–माँ अभी दिल्ली में हैं ।

●

गुजरात की यादें

—ब्र. गुणीता

२४ अप्रैल, १९९९

प्रभात होने में अभी देर थी। मोरों की केका ध्वनि उषा का स्वागत करने में तत्पर थी। हमलोग यात्रा के लिये तैयार हो चुके थे। महाराज कुमार ने हमारी यात्रा की व्यवस्था अपनी ओर से की थी। हवामहल के प्रांगण में गाड़ी तैयार खड़ी थी। महाराज शिवराज सिंह जी तथा बड़े एवं छोटे महाराज कुमार हमलोगों को रवाना करने हेतु खड़े थे। श्री श्री माँ को प्रणाम कर द्वारका-धीश के दर्शनों के उद्देश्य से हम रवाना हुए। यद्यपि ग्रीष्मकाल था अप्रैल का आखिरी सप्ताह था। अभी प्रातः के छः ही बजे थे। हवा ठंडी ही थी। हम मार्ग में भुवनेश्वरी देवी का दर्शन कर आशापुरा देवी को प्रणाम कर द्वारका के उद्देश्य से रवाना हुए।

हमारा पहला गन्तव्य स्थान सोमनाथ था। गोंडल से हम पश्चिम की ओर चले। सीधे मार्ग से हमारी जीप दौड़ रही थी। दोनों ओर खुला मैदान था। काठियावाड़ की वीरप्रसू भूमि का दर्शन हो रहा था। मार्ग में काठियावाड़ी वेशभूषा में स्थानीय नर-नारी खेतों में कार्यरत नजर आते थे। आकर्षण की केन्द्र थी काठियावाड़ी गाय। गायों की ऐसी डीलडौल तथा सुडौल विशाल सींग अन्यत्र दुर्लभ है। काठियावाड़ क्षेत्र आज भी पाश्चात्य सभ्यता से अछूता नजर आ रहा था। यद्यपि भवन इत्यादि में तो आधुनिकता का प्रभाव अवश्य था पर वहाँ की संस्कृति पूर्णतः अपने प्रदेश पर ही आधारित थी। जैसे जैसे हम आगे बढ़ते गये प्रकृति के रूप भी पलटते गये। अब हम आम्र कुंजों के भीतर से जा रहे थे। हमारे रास्तों के दोनों ओर आम के बगीचे थे, जो फल देने की तैयारी पर थे। बीच बीच में कपास के खेत, बाजरे की फसल, केले के बगीचे भी दीखते थे।

हम जामनगर के मार्ग से जा रहे थे। बीच में पहाड़ भी हमें दीखे। अभी जामनगर के रास्ते को छोड़ हमारी गाड़ी सोमनाथ की ओर मुड़ी। समुद्र की ओर हम आगे बढ़ रहे थे। हवा में ठंडक थी। अब दोनों ओर नारियल के बगीचे थे। मीलों तक यही दृश्य था।

करीब दस बजे हम सोमनाथ पहुँचे। दूर से मंदिर का शिखर दृष्टिगोचर होता है। हमने हाथ जोड़कर "बाबा" के उद्देश्य से प्रणाम किया। गाड़ी से उतरते ही हम पंडों के घेरे में आ गये। हम एक विशाल खाली मैदान पर खड़े थे। यह गाड़ियों के पार्किंग का स्थान था और भी अनेक यात्री वाहन रुके थे। एक ओर सोमनाथ का नवीन मंदिर था। दूसरी ओर प्राचीन मंदिर। प्राचीन मंदिर के पास ही "सोमनाथ" उपन्यास के प्रसिद्ध उपन्यासकार श्री के. एम. मुंशी द्वारा निर्मित संग्रहालय था। सुना कि नये मंदिर में अपने हाथों से पूजन की व्यवस्था नहीं है अतः सब पूजन सामग्री लेकर हम पुराने मंदिर में गये। इसके द्वार पर महारानी अहल्याबाई का नाम खुदा हुआ था। शायद ही कोई ऐसा ज्योतिर्लिंग हो जिसका जीर्णोद्धार मध्य शताब्दी की इस धर्मप्राणा रानी ने न किया हो।

पहली श्रद्धाञ्जलि तो इस साम्राज्ञी के उद्देश्य से अर्पित होती है जिनके प्रयास से हमें इन प्राचीन वैभव के दर्शन सुगम हो रहे हैं। हम संगमरमर की संकीर्ण सीढ़ियों से नीचे उतरकर गर्भ गृह में गये। बड़ा शिवलिंग है। भक्तगण श्रद्धानुसार जल फूल बिल्वपत्र चढ़ा रहे थे। हम लोगों ने भी जल बिल्वपत्र वस्त्रादि फल आदि निवेदन किया। पूजनोपरान्त हम मन्दिर के नवनिर्मित विशाल प्रांगण में आये। न जाने कितने युगों की गरिमा लिये यह दिव्यधाम विराजमान है। मंदिर के आस पास पंडों के मकान हैं।

प्राचीन मंदिर से निकलकर हम समुद्र तट की वेलाभूमि पर खड़े थे, समुद्री हवा का स्पर्श हो रहा था। हम मंदिर की ओर अग्रसर हुए।

भारत का पश्चिमी तट है। विशाल सागर किस अनन्त की रूप माधुरी के पान में निमग्न है। सागर की लहरें हिलोरें ले रही हैं पर असीम गाम्भीर्य है। भवसागर में प्राणी को किस प्रकार रहना चाहिये मानो उसकी शिक्षा दे रहा हो। अपने हृदय में जगत् कारण परमात्मा को धारण कर उसी में निमग्न है। लहरें अपनी क्रिया कर रही हैं पर असीम जलराशि को धारण करने वाला यह नील समुद्र नीलकण्ठ के ध्यान में विलीन है।

एक विरांटत्व का आभास होता है। नवनिर्मित मंदिर के विराट प्रवेश द्वार से हमने भीतर प्रवेश किया। सम्पूर्ण सरकारी व्यवस्था है। मंदिर की विशालता भी अवर्णनीय है। विशाल प्रस्तर खण्डों पर की गयी नक्काशी प्राचीन भारत की विराट् संस्कृति का निदर्शन देती है। पत्थर की सीढ़ियों से चढ़कर हमने विशाल मण्डप में प्रवेश किया। आस पास के गवाक्षों से सागर की गरिमा के दर्शन हो रहे थे। सामने गर्भ गृह में विशालता को अपने में समेटे वृहदाकार लिंग के रूप में सोमनाथ महादेव विराजमान हैं। भीतर जाना निषिद्ध है। पुजारीगण भक्तों की पुष्पाञ्जलि पूजन सामग्री निवेदन करते हैं। कदाचित् सोम के अधिकारी चन्द्रदेव ने भगवान् शंकर को प्रसन्न करने हेतु तपस्या की थी। आशुतोष भगवान् प्रकट होकर सोमेश्वर चन्द्रदेव की यशोगाथा को अमर रखने के लिये सदा के लिये सोमनाथ के रूप में विराजमान हो गये।

मंडप से हम बाहर आये। अब हम उस असीम की महिमा के दर्शनों का आस्वादन कर रहे थे। ऊपर नील आकाश सामने तीनों ओर विशाल अगाध नील जलराशि। दूर बहुत दूर छाया सा दीखता हुआ हमें एक जहाज नजर आया। हमें कहा गया—समुद्र की विशालता का इतना सुन्दर दर्शन अन्यत्र विरल है। यही सोमनाथ की विशेषता है।

इतिहास की ओर हमारा ध्यान जाता है। मूढ़ बुद्धि मानव ने इसमें जड़ता का दर्शन किया एवं तदनुरूप क्रिया कीं, पर नित्य चिन्मय का ध्वंस क्या कभी संभव है।

हमारी यात्रा लम्बी थी हमें द्वारकाधीश के चरणों में आज ही पहुँचना था। अनुपम सौन्दर्य राशि को नेत्रों के द्वार से मानस पटल पर अंकित कर पुनः दर्शन की आशा रखते हुए हम रवाना हुए। मंदिर के बाहर कच्चे नारियल बिक रहे थे। हमने नारियल का जल पीकर प्यास बुझाई।

मार्ग में हमने हिरण्या नदी के तट पर एक तीर्थ स्थान का दर्शन किया। यहाँ पर गीता मन्दिर है। भगवान् श्रीकृष्ण की अत्यन्त सुन्दर प्रतिमा विराजमान है। संगमरमर की दीवालों पर

श्रीमद्भगवद्गीता के अष्टादश अध्याय अंकित हैं । यद्यपि यह मन्दिर अभी-अभी सत्तर के दशकों में बना है पर स्थान अत्यन्त प्राचीन है । यहाँ के वृक्ष लता एवं छोटे-छोटे मन्दिर इसकी प्राचीनता का प्रमाण दे रहे थे । नीले जल वाली हिरण्या नदी बह रही थी । वृक्षों की डालियाँ झुककर नदी का स्पर्श कर रही थीं । दूसरे तट पर नारियल वृक्षों की कतार थी । नीलिमा मण्डित अतीव रमणीय दृश्य था । तट ऊँचा था । एक अतीव सुन्दर मंदिर था जहाँ एक संगमरमर की वेदिका पर श्याम सुन्दर के श्रीचरण निर्मित थे ।

कहा जाता है कि प्रभास में लौकिक लीला के समापन के उपरान्त लीलावतार भगवान् श्री कृष्णचन्द्र के पार्थिव शरीरको इस पुण्यमय स्थान पर ले आया गया था । श्री बलराम जी के पार्थिव शरीर की अन्तिम क्रिया भी इसी स्थान पर हुई थी । दिव्य धाम की दिव्यता को हृदयङ्गम कर हमारी यात्रा आगे बढ़ी ।

हम प्रभास क्षेत्र आये । आनन्द कन्द श्याम सुन्दर का दिव्य लीला धाम है । चारों ओर पीपल और बरगद के वृक्ष हैं । मन्दिर नाति दीर्घ है । शान्तगम्भीर वातावरण है । भीतर अर्द्धशायित अवस्था में लेटे हुए श्री भगवान् की प्रस्तर मूर्ति है । चरणों में बाण लगा हुआ है । एक पुराना पीपल का वृक्ष है जिसके नीचे भगवान् का श्री विग्रह है ।

सन् १९५२ में दक्षिण यात्रा के समय श्री श्री माँ यहाँ पधारी थीं । यहाँ के भाव गम्भीर परिवेश में श्री श्री माँ के श्री शरीर में विशेष भाव परिलक्षित हुआ था । प्रभास क्षेत्र दर्शन के उपरान्त हम पोरबन्दर के लिये रवाना हुए । ग्यारह बज चुके थे ।

हमारी गाड़ी सरपट चली जा रही थी । हम काठियावाड़ क्षेत्र में थे । हमारे लिये सबकुछ नया था । रहन सहन, भाषा-व्यवहार, प्रकृति के स्वरूप सब में विभिन्नता है पर हम सब एक है सब भारतीय हैं । इतनी विविधता में एकता का अनुभव कर ही युगपुरुष स्वामी विवेकानन्द ने विशाल भारत की कल्पना की थी और उसी का उद्घोष किया था "हे वीर पुत्र जागो" इस मन्त्र द्वारा ।

काठियावाड़ के पुण्यक्षेत्र पोरबन्दर में हम पहुँचे । यहाँ पर श्री श्री माँ के भक्त श्री नटू भाई हमारी प्रतीक्षा में खड़े थे । वे हमारे साथ हो लिये हम यहाँ के मुख्य दर्शनीय स्थल कीर्त्ति मन्दिर की ओर चले । पोरबन्दर की पुरानी गलियों में दोनों ओर दुकानें । हमारी गाड़ी वहीं खडी कर दी गयी ।

चंद मिनटों में हम एक विशाल प्रासाद के सामने थे । संगमरमर की शुभ्र स्वच्छ सीढ़ियों से हमने भीतर प्रवेश किया । चारों ओर शुभ्र छटा विशाल अति विशाल प्रांगण । चारों ओर बरामदा, मध्य में गोलाकृति कक्ष में पोरबन्दर की दिव्य विभूति मोहनदास कर्मचन्द गांधी राष्ट्रपिता का विशाल तैलचित्र तथा भारतीय संस्कृति की आदर्श प्रतिमा स्नेहमयी माता कस्तूरबा का तैल चित्र शोभायमान है । कीर्त्तिमन्दिर राष्ट्रपिता को ही समर्पित है । पोरबन्दर के रईस स्वनामधन्य श्री कालिदास मेहता ने इसे बनवाया तथा लौहपुरुष सरदार वल्लभ भाई पटेल द्वारा उद्घाटन किया गया था । यह एक दर्शनीय स्थल है । यहाँ पर महात्मा गाँधी का सम्पूर्ण साहित्य बड़े ही सुन्दर ढंग से संग्रहीत किया गया है । ऊपरी मंजिल में पूज्य महात्मा के जीवन काल के विभिन्न चित्रों का संग्रह

है । इसके बायीं ओर पूज्य महात्मा गाँधी का वास गृह है । सौ साल से अधिक पुराने इस भवन को अपने पुराने स्वरूप में ही रखा गया है । वही मिट्टी का घर लकड़ी की सीढ़ी लकड़ी की काठियावाड़ी ढंग की खिड़कियां । लकड़ी का वह कमरा एवं बरामदा जहाँ बैठना । गाँधीजी अधिक पसन्द करते थे । जिस कक्ष में पूज्य महात्मा का जन्म हुआ था उस स्थान को विशेष चिन्ह से चिह्नित रखा गया है । हम पुरानी लकड़ी की सीढ़ी से ऊपर चढ़े । सीढ़ी की मजबूती देखने योग्य है । हमें ऊपर से दिखाया गया पीछे के इसी मोहल्ले में "बा" का घर था । आज वहाँ भी स्मारक बनाने की परियोजना है । राष्ट्रपिता के इस घर में प्रवेश करके एक सिहरन महसूस हो रही थी आज हम उस पवित्र स्थान पर खड़े थे जहाँ १३२ वर्ष पूर्व एक बालक ने जन्म लिया था तथा जिसने सत्य और अहिंसा को अस्त्र बना कर विश्व में अपना व्यक्तित्व स्थापित किया और आज उसी महान् विभूति को विश्व ने सहस्राब्दी का श्रेष्ठ पुरुष माना, धन्य है युगनायक । तुम्हारे चरणों में हमारा शीश युगों तक झुका रहे । एक असीम शक्ति व साहस की अनुभूति लेकर हम वहाँ से चले ।

हमारा गन्तव्य स्थल द्वारका अभी दूर है । एक बज चुके हैं । नटू भाई के आग्रह करने पर हम उनके घर गये । काठियावाड़ी प्रवेशद्वार मात्र ही दर्शनीय होते होंगे । छोटा घर हो या बड़ा, नया हो या पुराना इनकी बनावट में ऐसी दृढ़ता की छाप होती है वह देखते ही बनती है । दृढ़ता एवं सत्यनिष्ठा यहाँ की माटी की उपज है । नटू भाई श्री श्री माँ के पुराने भक्त हैं । (दादी माँ) मुक्तानन्द गिरिजी से दीक्षित हैं । आप सपत्नीक आदर से हमलोगों को भीतर ले गये ।

पूजा के स्थान पर श्री श्री माँ के चित्र । गुरुदेव मुक्तानन्द जी के चित्र बड़ी ही श्रद्धा के साथ रखे हुए हैं । हमने माँ के चित्रों पर चन्दन लगाकर माला चढ़ाई । माँ को प्रणाम करते हुए मन में कहा–माँ देश का कौन सा कोना होगा जहाँ आप न विराजमान हों । "पूरा विश्व ही एक बगीचा है" श्री श्री माँ जहाँ अपने ख्याल से घूमीं तथा आज भी घूम ही रही हैं । श्री श्री माँ की यह वाणी साक्षात् मूर्त्ति धारण कर मानों हमको इस अकाट्य सत्य का अनुभव कराती है । नटू भाई से शीघ्र ही विदा लेकर हम रवाना हुए ।

समुद्र का किनारा हमारा मार्ग था । पोरबन्दर से निकलकर हम खुले मार्ग पर आ गये । समुद्री हवा से हमारा स्पर्श होने लगा । समुद्र तट के ऊँचे नीचे पहाड़ दीखने लगे । सामुद्रिक हवा से बिजली उत्पन्न करने वाले यंत्र भी हमने देखे जो कि विशाल वेलाभूमि पर पंखों की भाँति लगे हुए थे । थोड़ा और आगे जाने पर हमें समुद्र की नील सतह दिखाई पड़ी । हमारी बायीं ओर समुद्र था । कभी नील ज़लराशि दिखाई पड़ती तो कभी ऊँची नीची वेला भूमि के कारण ओझल हो जाती । कभी दूर दूर जहाज भी हमें दृष्टिगोचर हुए । समुद्र को इतने पास से इतनी दूर तक समुद्र किनारे-किनारे यात्रा का पहला अवसर था । एक आनन्ददायक अनुभव था ।

मार्ग के किलोमीटर के प्रस्तर चिन्हों पर हमारी दृष्टि बार बार पड़ती थी । शाम होने वाली थी । हम द्वारका से साठ किलोमीटर की दूरी पर थे । सायं आरती के दर्शन हमें करना था । बीच में आने वाले गाँवों में मंदिरों की अधिकता दीखने लगी । थोड़ी-थोड़ी दूर पर कोई न कोई मन्दिर होता था । हम मूल द्वारका पहुँचे यहाँ हम रुके नहीं । हमारी गाड़ी आगे बढ़ती गयी ।

मार्ग में हमने एक जगह देखी, जहाँ बड़ी बड़ी लकड़ी की नौकायें बन रही थीं। हम द्वारका के निकटवर्ती होते जा रहे थे। सन्ध्या होने को थी। हमें दूर से एक शिखर के अग्रभाग के दर्शन हुए। दोनों ओर समुद्र का जल भीतर आ रहा था। भगवान् श्री कृष्ण ने समुद्र के भीतर यह नगरी बसायी थी। हमारी गाड़ी तीव्र गति से आगे बढ़ रही थी। धीरे धीरे हमें दूर से द्वारकापुरी के दर्शन होने लगे। थोड़ी ही देर में हमने द्वारकाधीश की द्वारका नगरी में प्रवेश किया। सीधे हम द्वारकाधीश के मंदिर के दरवाजे पर पहुँचे। विशालकाय द्वार के बाहर ही सभी यात्री वाहन रोक दिये जाते हैं। हम पैदल चले। दोनों ओर विविध सामग्री की दुकानों को देखते हुए हम मंदिर प्रांगण में पहुँचे। गगनचुम्बी विशाल शिखर को हमने प्रणाम किया। सन्ध्या हो आयी थी। बत्तियाँ जगमगा रही थीं। सात बजे सायं आरती का समय था। घड़ी में पौने सात बज चुके थे। द्वारकाधीश की कृपा से हम द्वारकानाथ के सामने खड़े थे।

●

आश्रम संवाद

१) कनखल :–

सन् १९५२ का छ अगस्त श्री श्री माँ वाराणसी आश्रम में है, गंगातट पर आश्रम के विशाल हॉल में पहला संयम महाव्रत अनुष्ठित हो रहा था । इस अनुष्ठान के मुख्य उद्योक्ता थे बाघाट नरेश श्रीमान् दुर्गासिंहजी श्री श्री आनन्दमयी संघ के द्वितीय अध्यक्ष योगी भाई । श्री श्री माँ के पवित्रसान्निध्य में मानवजीवन की दुर्लभता का अहसास कराने का यह अनूठा प्रयास था । इस पुण्यमय अनुष्ठान के अवसर पर ही श्री श्री माँ को उद्देश्य कर के दिव्य बालक के कण्ठ से दिव्य मन्त्र का उच्चारण हुआ था । यह नादगम्भीर स्वरयुक्त मन्त्र इस प्रकार था ।

"हे पितः हे हितः हे ब्रह्म तत्त्वम्
हे पितः हे हितः हे ब्रह्म भूतम्
हे पितः हे हितः हे ब्रह्म स्वरूपम् ।

सप्ताहव्यापी इस संयमित अनुष्ठान को संयमसप्ताह महाव्रत की संज्ञा दी गयी ।

"शीघ्र ही समवेत रूप से पुनः इस सप्ताहमहाव्रत का पालन किया जाय" भक्तों के इस आग्रह से विन्ध्याचल में १९५३ फरवरी को यह महाव्रत प्रतिपालित हुआ । सबकी उपस्थिति में यह निश्चय किया गया कि इस महाव्रत का ऐसा कोई निश्चित समय होना चाहिए जो सबके अनुकूल हो । श्री श्री माँ के ख्याल से दीपावली के उपरान्त समय सीमा निश्चित हुई । कार्तिक का महीना ऐसे ही पुण्यमय है इसी महीने में कात्यायनी का व्रत कर गोपियों ने परमेश्वर का परम पद पाया था । कार्तिक शुक्लपक्ष की एक-एक तिथि व्रतोत्सव के लिये अत्युत्तम है । कार्तिक शुक्ल अष्टमी गोपाष्टमी के नाम से प्रसिद्ध है शायद इसी दिन व्रजेश्वर ने गोचारण प्रारम्भ किया था । कार्तिक शुक्ल नवमी अक्षय नवमी के रूप में जानी जाती है । इस दिन आँवले के वृक्ष की पूजा की जाती है तथा इसी वृक्ष के नीचे भोजन का भी विधान है । इस सप्ताह में आने वाली एकादशी तिथि प्रबोधिनी एकादशी या बड़ी एकादशी के नाम से जानी जाती है, इस दिन तुलसी महारानी के पूजन का विशेष महत्त्व है, द्वादशी तिथि को चातुर्मास्य व्रत की समाप्ति होती है, तथा इस दिन तुलसी -विवाह भी अनुष्ठित होता है । तदनन्तर वैकुण्ठ चतुर्दशी है । इसकी विशेषता यह है कि इस दिन भगवान् शंकर को तुलसी पत्र चढ़ाये जाते हैं । चतुर्दशी के उपरान्त आती है कार्तिक पूर्णिमा । महामिलन की घड़ी, इसी दिन मध्यरात्रि को पौने बारह से सवा बारह पर्यन्त सामूहिक रूप से महानिशा का ध्यान होता है और इसी के साथ ही संयम सप्ताह व्रत की समाप्ति होती है । श्री श्री माँ की वाणी यहाँ स्मरण हो आती है-माँ शब्द की परिभाषा में माँ ने कहा था, "माँ जो माप (नाप) कर देती हैं ।" संयममहाव्रत की समय सीमा को देखते हुये यही तथ्य सामने आता है । असंयमित मन को संयमित करने का यह कितना सुन्दर अवसर है ।

सन् १९५९ में ऋषीकेश के रामनगर नामक स्थान पर काली कमली ट्रस्ट के आग्रह से कलकलनादिनी गंगातट पर अनुकूल वातावरण में इस व्रत का अनुष्ठान हुआ था ।

इस प्रकार संयम महाव्रत की अनुष्ठान सूची के अनुसार इस वर्ष ५० वाँ संयममहाव्रत अनुष्ठित हुआ, जो कि महाव्रत की अर्द्धशताब्दी को पूरा करता है । इस उपलक्ष्य में श्री श्री आनन्दमयी संघ की ओर से कनखलमें विशेष आयोजन किया गया था ।

१६ नवम्बर १९९९ से ५० वाँ संयम सप्ताह महाव्रत प्रारम्भ हुआ । अतः १५ नवम्बर संयम महाव्रत स्वर्णजयन्ती की पूर्वसन्ध्या पर उद्घाटन समारोह में संयम सप्ताह स्वर्णजयन्ती स्मारिका का विमोचन किया गया । इस अवसर पर श्री श्री आनन्दमयी संघ के प्रधान सचिव स्वामीस्वरूपानन्दजी ने संयमसप्ताह की विशेषताओं पर प्रकाश डालते हुए कुछ शब्द कहे । (ब्रह्मचारिणी पुष्पदी) वर्तमान स्वामी भजनानन्द जी ने समयानुकूल भजन द्वारा सभा की शुरूआत की थी । निर्वाणी अखाड़ा के वयोवृद्ध महन्त श्री १०८ गिरिधर नारायण पुरीजी, कैलाश आश्रम, ऋषीकेश के पीठाधीश्वर श्री १००८ स्वामी विद्यानन्द गिरिजी, तथा दिव्यजीवन संघ के अध्यक्ष श्री १००८ स्वामी चिदानन्द जी ने अपने सारगर्भित शब्दों में संयम महाव्रत पर प्रकाश डालते हुए समारोह का शुभारम्भ किया । सन् १९८१ में श्री श्री माँ के दिव्य ख्याल से ३२ वें संयम महाव्रत के पहले दिन गीत के रूप में कुछ पद श्रीमुख से निःसृत हुए थे । उसमें स्वर संयोजन भी श्री श्री माँ के द्वारा ही किया गया था, जिसका आशय यह है कि "हे भगवान्, संयम महाव्रत में योगासन में बैठाने के लिये आपने ही बुलाया है -- इत्यादि", गीतश्री छबि वन्द्योपाध्याय को बुलाकर माँ ने यह गीत स्वर सहित सिखाया तथा १९८१ संयम महाव्रत की पूर्वसन्ध्या में माँ एवं महात्माओं की उपस्थितिमें इसको छबिदीदी ने मधुर स्वर में गाया था । आज भी संयम सप्ताह स्वर्णजयन्ती की पूर्वसन्ध्या में छबिदीदी ने इस भजन को गाकर उद्घाटन समारोह का समापन किया ।

१६ नवम्बर से संयम महाव्रत का अनुष्ठान प्रातः ५ बजे से उषाकीर्तन के साथ ही प्रारम्भ हो गया । प्रतिवर्ष से इस बार व्रतियों की संख्या अधिक थी । कुल ३०० व्रतियों ने भाग लिया था । कलकत्ते से अधिक संख्या में व्रतीगण उपस्थित हुए थे । प्रातः आठ से नौ तक ध्यान के बाद तीन अध्याय श्रीमद्भगवद्गीता एवं सप्तशती का पाठ हुआ । तदुपरान्त कैलासपीठाधीश्वर म. म. स्वामी विद्यानन्दजी ने उपनिषद् पर प्रवचन दिया । स्वामीजी महाराज इस वर्ष सप्ताह व्यापी प्रवचन न दे सके । आपको काठमांडु, नेपाल में विशेष कार्यक्रम में आमन्त्रित किया गया था । अपरान्ह तीन से चार ध्यान के बाद कैलाश आश्रम के संत स्वामी मेघानन्द पुरी जी शिवपुराण पर प्रवचन करते थे । पुराण प्रवचन के अनन्तर महात्माओं के प्रवचन होते थे । जगद्गुरु आश्रम के महामण्डलेश्वर स्वामी प्रकाशानन्दजी महाराज, भोलागिरि मठ के महामण्डलेश्वर स्वामी देवानन्द महाराज. गरीबदासी आश्रम के महामण्डलेश्वर स्वामी श्यामसुन्दर दासजी, स्वामी दयानन्दजी तथा योगशक्ति माताजी आदि महापुरुष गणों के अमृतवर्षण द्वारा साधकों को साधन मार्ग में निदर्शन प्राप्त होता था । स्वर्णजयन्ती के उपलक्ष्य में कलकत्ते से विद्वत् प्रवर डा. श्री गोविन्द गोपाल मुखोपाध्याय जी को विशेष रूप से आमन्त्रित किया गया था । आप पश्चिमबंगाल के ख्याति प्राप्त विद्वान् हैं. साथ ही

श्री श्री माँ के साथ आपका अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध भी है । पूज्य म. म. श्री विद्यानन्दजी की अनुपस्थिति में उपनिषद् व्याख्या आपके द्वारा सम्पन्न हुई । केनोपनिषद् पर आधारित चर्चा चल रही थी ।

श्री श्री आनन्द ज्योतिपीठ की सान्ध्य आरती के उपरान्त सत्संग हॉल में सन्ध्या कीर्तन होता था । सन्ध्या कीर्तन के बाद, पूज्यपाद स्वामी चिदानन्दजी का सत्संग होता था, साधना की प्रतिमूर्ति पू. स्वामीजी अपने अनुभवी प्रवचन तथा गुरुमहाराज श्री १००८ स्वामी शिवानन्द जी के दिव्य जीवन के दिव्य दृष्टान्तों से साधकों को प्रबोधित करने का प्रयास करते थे । बीच-बीच में भगवन्नाम संकीर्तन के माध्यम से नवचेतना जागृत करते थे । संयम सप्ताह महाव्रत में पू. स्वामी चिदानन्द (दिव्य जीवन संघ) जी का सहयोग अविस्मरणीय रहेगा ।

व्रतियों ने इस महाव्रत में उत्साह पूर्वक योगदान किया । रात्रि नौ बजे के उपरान्त मातृ-सत्संग का कार्यक्रम होता था, जिसमें श्री श्री माँ की उपस्थिति हुए में अपने-अपने अनुभव अर्थात् मधुर स्मृतियों को भक्तगण सुनाते थे । पहले दिन कन्यापीठ की वरिष्ठ अध्यापिका ब्रह्मचारिणी डा. गीता बनर्जी ने मातृ-कथा श्रवण करायी । कार्यक्रम की यह श्रृंखला सात दिनों तक चली । सप्ताह के अंतिम दिन शाम को श्री श्री माँ आनन्दमयी विद्यापीठ के छात्रों ने अपना कार्यक्रम प्रस्तुत किया । मातृप्रसंग के समय डा. गोविन्द गोपाल मुखोपाध्याय की उपस्थिति में आनन्दमयी कन्यापीठ की छात्राओं के द्वारा संस्कृत में संयम पर आधारित भाषण आदि कार्यक्रम प्रस्तुत किये गये । तदन्तर डा. मुखोपाध्यायजी ने आनन्दमयी स्मृति के मधुर प्रसंग सुनाये ।

श्री श्री माँ के मधुर प्रसंग को हृदयङ्गम कराते हुये गीत श्री छबि दीदी ने भक्तिरस पूर्ण कण्ठ से भक्ति की गंगा प्रवाहित कर साधक व्रतियों को भक्तिरस में सराबोर कर दिया, भक्ति रस में डुबकी लगाते हुये पौने बारह से सवाबारह महानिशा के ध्यान का समय उपस्थित हो गया । महामिलन के रसास्वाद के लिये उत्सुक साधकगण मौनव्रत में समाधिस्थ हो गये आधे घंण्टे के बाद गम्भीर मंत्रोच्चारण के स्वर के साथ ही सभी बिजली की बत्तियाँ प्रज्वलित कर दी गयी, आँखों के खुलते ही सामने श्री श्री माँ के करुणामृतवर्षी स्वरूप का दर्शन हुआ, अपनी सप्ताहव्यापी साधना को श्री श्री माँ के चरणों में अर्पण करने हेतु सबने मस्तक झुकाया, कविगुरु रवीन्द्रनाथ ठाकुर की पंक्तिया सजग हो उठीं "आमार माथा नत कोरे दाओ हे तोमार चरण धूलार परे" अथात् आपके चरण धूलि पर मेरा मस्तक झुका दो ।

व्रतियों की साधना सफल हुई, सामने ही सिद्ध साधक तपस्वीजन फल प्रसाद देने के लिये विराज मान थे । दिव्य जीवन संघ के अध्यक्ष यति श्रेष्ठ स्वामी चिदानन्द जी से सबने प्रसाद ग्रहण किया ।

दूसरे दिन हवन द्वारा संयम सप्ताह महायज्ञ की पूर्णाहुति सम्पन्न हुई । इसके उपरान्त सभी ने श्री श्री माँ के मन्दिर में प्रणामाञ्जलि अर्पित कर महाव्रत की स्वर्णजयन्ती के स्मृति स्वरूप स्मारिका. प्रसाद सहित रूमाल तथा आश्रम स्थित रुद्राक्ष वृक्ष का एक एक रुद्राक्ष प्राप्त किया ।

स्वर्ण जयन्ती के उपलक्ष्य में निमन्त्रित महात्माओं को "संयम महाव्रत स्वर्णजयन्ती" के चिन्हित उत्तम कम्बल, वाराणसी में अनुष्ठित अखण्ड सावित्री महायज्ञ के भस्म का गोला, "संयम महाव्रत स्वर्णजयन्ती १९९९" लिखित स्वर्णिम पदक दिये गये थे ।

२४ नवम्बर पूर्णिमा को सायं काल नामयज्ञ का अधिवास प्रारम्भ हुआ, अहोरात्र नाम संकीर्तन चलता रहा । २५ ता. सायंकाल नाम यज्ञ की परिसमाप्ति हुई ।

कबीर की पंक्तियाँ गूँज उठती हैं –

"देखो भाई आई ज्ञान की आँधी ।
सभै उड़ानी भ्रम की टाटी, रहै न माइया बांधी ।।
दुचिते की दुइ थूनी गिरानी, मोहू बलेंडा टूटा ।
तिसना छानि परी घर ऊपरि, दुरमति भाँडा फूटा ।।
आँधी पाछे जो जलु बरखै. तिहि तेरा जनु भीना ।
कहि कबीर मन भइया, पगासा उदै भानु जब चीना ।।

इस प्रक़ार २४ नवम्बर १९९९ में संयमसप्ताहमहाव्रत की पूर्णाहुति हुई ।

२) वाराणसी–

भूतभावन, पतितपावन, आशुतोष भगवान विश्वनाथ की पावन नगरी वाराणसी में अवस्थित श्री श्री माँ के आश्रम में प्रतिवर्ष की तरह ७ नवम्बर को कालीपूजा व ८ नवम्बर को अन्नकूट महोत्सव सुसम्पन्न हुआ ।

श्री श्री माँ की जन्मशती के उपलक्ष में सन् १९९५ को काशी धाम में रामकथा का प्रवचन करने के लिए श्रद्धेय संत मोरारी बापू का आगमन हुआ था । उसी समय श्री श्री माँ आनन्दमयी अस्पताल की तीसरी मंजिल का शिलान्यास उनके हाथों सुसंपन्न हुआ । वह भवन अब नाना-प्रकार की आधुनिक सुविधाओं द्वारा सुसज्जित होकर तैयार हुआ है ।

इस बार विगत ४ दिसंबर से १२ दिसंबर तक पुनः काशीधाम में रामकथा का प्रवचन करने के लिए संत मोरारी बापू का शुभागमन हुआ । अस्पताल के प्रबन्धकों के अतिशय आग्रह के कारण सन्त मोरारी बापू के द्वारा ही अन्तरंग विभाग के उद्घाटन का दिन १० दिसंबर को निर्धारित किया गया ।

१० दिसंबर को संत श्री मोरारी बापू ने सर्वप्रथम श्री श्री माँ के आश्रम में श्री श्री माँ को प्रणाम किया । कन्यापीठ की ब्रह्मचारिणियों ने कीर्तन ध्वनि के द्वारा उनका स्वागत किया । इसके पश्चात उन्हें फल की टोकरी, चन्दन की माला, गरम शॉल अर्पित की गई, कन्यापीठ की एक छोटी कन्या ने भागवत के श्लोक उन्हें सुनाया फिर कीर्तन ध्वनि के साथ ही वे अस्पताल पधारे वहाँ उन्होंने तीसरी मंजिल में अन्तरंग विभाग का उद्घाटन किया एवं रोगियों का निरीक्षण किया । सब रोगियों को फल वितरण किया गया, नीचे आकर कन्यापीठ की ब्रह्मचारिणियों ने स्वागत गान एवं शिवस्तोत्र का गान किया । इसके पश्चात विशिष्ट व्यक्तियों ने उन्हें माल्यार्पण किया । इस उपलक्ष

में वाराणसी के कमिशनर तथा अन्य गण्य-मान्य व्यक्ति भी उपस्थित थे । अस्पताल की ओर से वरिष्ठ एवं अभीज्ञ चिकित्सक डॉ. श्री के.पी. सिंह ने स्वागत भाषण दिया ।

पूज्य मोरारी बापू ने अपने भाषण में बताया कि "श्री श्री माँ यथार्थ वैद्य हैं । क्योंकि माँ भवव्याधि से आरोग्य प्रदान करती है श्री श्री माँ करुणा की प्रतिमूर्ति हैं । यहाँ दवा, दुआ. तथा दया ये तीनों एक साथ मिलती है । यहाँ स्वच्छता, शुद्धता एवं पवित्रता विद्यमान है । यहाँ हर तरह की चिकित्सा सुलभ है । यह आनन्द का विषय है । उनके भाषण के पश्चात 'श्री राम जय राम जय जय राम" इस कीर्तन के द्वारा अनुष्ठान की समाप्ति हुई ।

१६ दिसंबर से १९ दिसंबर तक गीता जयन्ती महोत्सव प्रारंभ हुआ परंपरा के अनुसार प्रतिदिन ६ अध्याय गीता पाठ एवं शाम को गीता की व्याख्या होती है । एकादशी के दिन संपूर्ण गीतापाठ एवं १८ प्रदीप जलाकर, १८ थालियों में १८ प्रकार के फल मिठाइयाँ सजाकर भगवान पार्थ-सारथी की पूजा की जाती है ।

३) विन्ध्याचल–

सत्य स्वरूप भगवान की प्राप्ति से ही शाश्वत् शान्ति तथा परमानन्द की प्राप्ति होती है तभी मनुष्य जीवन सार्थक है । अतः इसी उद्देश्य से मिर्जापुर वासी कुछ मातृभक्तों ने प्रत्येक रविवार को विन्ध्याचल स्थित माँ के आश्रम में सत्संग करने का संकल्प किया है । विगत ३ महीने से यह सत्संग चल रहा है । मिर्जापुर वासी भक्तों में विशेषतः श्री मुरलीधर गोयंका जी इस सत्संग के प्रमुख आयोजक हैं । प्रातः ८.३०, बजे से सत्संग प्रारंभ होता है और मध्याह्न ग्यारह बजे तक अखंड रूप स चलता है । सत्संग निम्नलिखित क्रम से चलता है :–

क) श्री श्री माँ के चरणकमलों में पुष्प एवं माल्यार्पण, ख) स्तव स्तुति पाठ, ग) संक्षिप्त भजन कीर्तन, घ) श्री श्री मातृवाणी पाठ एवं व्याख्या, ङ) श्रीमद्भागवत का एक अध्याय समवेत पाठ, च) गीता की-आध्यात्मिक व्याख्या व्याख्याकार– श्रीमुरलीधर गोयंका, छ) समवेत ध्यान, प्रायः ३० मी. तक, ज) प्रणाम मंत्र पाठ, झ) फल मिठाई एवं प्रसाद वितरण ।

मध्याह्न तीन बजे कुछ भक्त लोग अपने हाथ से दाल, चावल, सब्जियों को एक साथ मिलाकर ब्रह्म खिचड़ी पकाते हैं, फिर भोग प्रसाद पाते हैं । कुछ देर विश्राम के बाद पुनः शाम को सत्संग प्रारंभ होता है । उसकी तालिका निम्न प्रकार हैं–

क) भजन, कीर्तन, ख) श्री श्री माँ के ऊपर लिखित ग्रन्थ पाठ एवं आलोचना, ग) तुलसी रामायण सुन्दर कांड, पाठ, घ) भागवत पाठ एवं आलोचना प्रायः सायंकाल पर्यन्त यह सत्संग चलता रहता है ।

विगत १९ दिसंबर को विन्ध्याचल आश्रम में सुन्दर रूप से गीता जयन्ती उत्सव मनाया गया । यह उल्लेखनीय है कि श्री श्री माँ की उपस्थिति में सर्वप्रथम विन्ध्याचल आश्रम में ही श्री गोपाल ठाकुर के द्वारा गीता जयन्ती महोत्सव का शुभारम्भ हुआ था । अतः भक्तों की इच्छा से गीता जयंती का यह अनुष्ठान सुन्दर ढंग से मनाया गया ।

प्रतिदिन रात को माँ के कमरे में सायं ७:३० बजे से रात्रि ९ बजे तक भजन कीर्तन, मौन आदि का यथारीति पालन किया जाता है ।

४) कलकत्ता :–

कलकत्ता में आगरपाड़ा श्री श्री माँ के आश्रम में २८ जुलाई को गुरुपूर्णिमा का उत्सव पूजा, साधुसेवा एवं सांस्कृतिक अनुष्ठान धूमधाम से सुसंपन्न हुआ ब्रह्मचारी निर्वाणानन्द जी के वहाँ उपस्थित होने से भक्तों को दीक्षा ग्रहण की सुविधा प्राप्त हुई ।

१६ सितंबर से २३ सितंबर तक आश्रम के नाम मंदिर में भागवत सप्ताह का पारायण हुआ । श्री नवव्रत ब्रह्मचारी ने कथा तथा संगीत के माध्यम से भागवत कथा सुनाई ।

१५ अक्टूबर से २० अक्टूबर तक आश्रम में श्री शारदीया दुर्गापूजा सुचारु ढंग से संपन्न हुई । यद्यपि उस समय, में जोरों से वर्षा हो रही थी फिर भी प्राकृतिक बाधाओं को न मानकर अनेक भक्तों ने दुर्गापूजा में योगदान दिया । सबने पुष्पांजलि प्रदान की एवं सबने प्रसाद पाया । महाष्टमी के दिन दरिद्रनारायण की भी सेवा की गई ।

२४ अक्टूबर को श्री लक्ष्मीपूजा हुई । ७ नवंबर कीं रात को माँ.काली की पूजा एवं ८ ता. को अन्नकूट भलीभाँति सुसंपन्न हुआ ।

गत वर्ष की भाँति इस बार भी दुर्गापूजा के पश्चात् ३१ अक्टूबर रविवार को आश्रम के सभापति श्री अनिलकुमार देवानजी तथा स्वामी अरूपानन्दजी के द्वारा भारतसेवाश्रम संघ को २०,००० रू. की धनराशि बाढ़-पीड़ितों की सहायता के लिए अर्पित की गई । इसके अतिरिक्त १४० कि. चावल, १६० नयी धोती, एवं नयी साड़ियाँ, हजारों से भी अधिक पुराने उत्तम वस्त्र, शर्ट, पैन्ट, बच्चों के कपड़े तथा कुछ आवश्यक दवाइयों का बाक्स बाढ़ पीड़ित व्यक्तियों की सेवा के लिए अर्पित किया गया । उड़ीसा में हुए भयानक तूफान के पश्चात् ही इस सामान्य अनुदान को भारत सेवाश्रम संघ ने सादर स्वीकार किया ।

विगत २५ एवं २६ दिसंबर को आश्रम का वार्षिक नामयज्ञ अनुष्ठत हुआ ।

५) भोपाल, बैरागढ़ :–

मध्यप्रदेश स्थित इस आश्रम में नवरात्र पर नित्यप्रतिदिन चण्डी पाठ, तथा कलश स्थापन कर देवी पूजन हुआ, नवरात्र पर देवीभागवत का पाठ भी हुआ । प्रतिदिन अपरान्ह को स्थानीय महिलाओं द्वारा भजन कीर्तन होता था । नवमी को नौ कन्याओं को भोजन कराया गया । अंतिम दिन हवन कार्यक्रम द्वारा उत्सव की परिसमाप्ति हुई ।

दीपावली के अवसर पर यहाँ कलकत्ते से कुछ मातृ भक्त पधारे थे । मध्यरात्रि को श्री श्री माँ के पूजन के समय बहुत सुन्दर कीर्तन हुआ । ९ नवम्बर को अन्नकूट का उत्सव धूमधाम से मनाया गया । अभी तीन वर्ष से अन्नकूट का उत्सव यहाँ अनुष्ठित हो रहा है । इस दिन अन्यान्य उपकरणों के साथ सवामन लड्डुओं का भोग लगाया जाता है । इस दिन गोवर्धन पूजन के साथ सवत्स गौओं की पूजा भी होती है । इस अवसर पर स्थानीय भक्तगणों ने भी योगदान किया ।

इस आश्रम में "श्री श्री माँ आनन्दमयी शिक्षा उपवन" नाम से एक शाला भी प्रारम्भ की गयी है ।

६) उत्तरकाशी :–

हिमालय के चरण तल पर अवस्थित श्री माँ के आश्रम में विगत ७ नवम्बर को दीपावली के दिन काली मंदिर में रात को माँ काली की विशेष पूजा एवं कुमारी पूजा होम आदि हुए । ८ नवम्बर को अन्नकूट के उपलक्ष्य में साधु भंडारा, तथा सवको प्रसाद वितरण किया गया । सभी कार्य स्वामी संविदानन्द जी के संचालन में सुंदर ढंग से संपन्न हुआ ।

७) राँची :–

श्री श्री माँ के राँची आश्रम में भी ७ नवम्बर को काली पूजा, भोग, आरती, कुमारी पूजा, हवन इत्यादि यथारीति अनुष्ठित हुई । दूसरे दिन अन्नकूट का भोग हुआ एवं सबको प्रसाद दिया गया ।

८) दिल्ली :–

कालकाजी स्थित श्री श्री माँ के दिल्ली आश्रम में ७ नवम्बर काली पूजा के दिन माँ काली की प्रतिमा पर षोडशोपचार पूजन, तदुपरान्त हवन भोग, आरती इत्यादि यथारीति अनुष्ठित हुई । ८ नवम्बर को अन्नकूट के दिन अनेक प्रकार के फल मिठाई तथा नाना प्रकार के व्यंजनों से अन्नकूट का भोग सुसंपन्न हुआ । अनेक भक्त सम्मिलित हुए । सबने प्रसाद पाया ।

९) जमशेदपुर :–

श्री श्री माँ की कृपा से प्रतिष्ठित विहार के अन्तर्गत जमशेदपुर के आश्रम में विगत २८ जुलाई बुधवार गुरुपूर्णिमा के पवित्र तिथि में श्री श्री माँ की विशेष पूजा हुई । पूजनोपरान्त सब भक्तों ने श्री माँ के चरणों में पुष्पांजलि अर्पित की । भोग आरती के पश्चात सबने प्रसाद पाया । इस अवसर पर भजन, आदि के कार्यक्रम भी हुई थे ।

१८ अगस्त को १००८ स्वामी मुक्तानन्द गिरि जी के तिरोधान तिथि का अनुष्ठान भी अनुष्ठित हुआ । २७ अगस्त को कई सालों से यहाँ सत्संग नियमित रूप से होता आ रहा है । इसमें समयोपयोगी कीर्तन, श्री श्री माँ की कथा, श्री श्री माँ की श्रीमुख-निसृत संगीत आदि होता हैं ।

इसके अतिरिक्त महीने में हर पूर्णिमा के दिन सब भक्त एकत्रित होकर सत्संग करते हैं ।

७ नवम्बर को नवनिर्मित काली मंदिर में काली पूजा एवं ८ नवम्बर को अन्नकूट भलीभाँति संपन्न हुआ ।

●

श्री श्री आनन्दमयी संघ

(एक संक्षिप्त इतिहास)

उन्नीसवीं शताब्दी के दूसरे दशक का उत्तरार्द्ध था । ब्रिटिश साम्राज्य का बोलबाला था। पर भारतीय संस्कृति अक्षुण्ण थी । "तत्त्वमसि" की चेतना "असतो मा सद्गमय" की प्रार्थना "त्वमेव माता च पिता त्वमेव" की भावना भारत के कण-कण में व्याप्त थी । "अमृत के पुत्र उठो जागो" का अनहत नाद निरन्तर प्रतिध्वनित हो रहा था । भारत का दर्शन जागरूक था । भारतीय दार्शनिक अपने लक्ष्य पर पहुँचने को आतुर थे ।

पूर्व बंगाल के ऐसे ही एक दार्शनिक प्रातः भ्रमण के लिये शाहबाग के सघन वृक्ष लताओं से घिरी वीथिका में टहल रहे थे, वर्षा का मौसम था । छिटपुट मेह बरसने लगा । महाशय एक सघन वृक्ष के नीचे खड़े हो गये । पास ही एक और युवक चिन्तामग्न खड़े थे । दार्शनिक महाशय की दृष्टि ने युवक की चिन्ता पर सहानुभूति प्रकट की । पूछने पर पता चला युवक शाहवाग के नवनियुक्त संरक्षक हैं । तथा अपनी नवपरिणीता स्त्री के विशेष प्रकार के हाव-भाव के कारण चिंतित हैं । नाम है श्री रमणी मोहन चक्रवर्ती, वर्तमान निवास शाहबाग ही है । "हावभाव" का वर्णन सुनने के बाद दार्शनिक महाशय ने युवक को चिन्तामुक्त करते हुये कहा–"चिन्ता का कोई कारण नहीं है । यह तो दैवी भाव हैं । आपकी धर्मपत्नी असाधारण महिला है ।"

ढाका के श्री प्राणगोपालमुखोपाध्याय उस समय दार्शनिक एवं साधक के रूप में जाने जाते थे । यद्यपि आप सद्गृहस्थ थे तथा पूर्व बंगाल में पोस्टमास्टर जनरल के पद पर कार्यरत थे, पर दार्शनिक विचार गोष्ठी आपके यहाँ होती रहती थी । उक्त दार्शनिक डा. नलिनी ब्रह्म ने शाहवाग की चर्चा प्राणगोपाल बाबू से की । प्राणगोपाल बाबू देवघर के बालानन्दस्वामीजी के शिष्य थे एवं अध्यात्म दर्शन के पुजारी थे ।

एक दिन श्री रमणी मोहन जी से समय निश्चित कर आप उनकी धर्मपत्नी के दर्शनार्थ गये । भारतीय परम्परा की साक्षात् प्रतिमूर्ति कुलवधू निर्मला सुन्दरी का सम्पूर्ण श्री अंग वस्त्रावृत था । दिव्य मुखमण्डल पर घूँघट डला था । पतिदेव श्री रमणी मोहन जी के कहने पर आगन्तुक सज्जनों के द्वारा पूछे गये कुछ दार्शनिक प्रश्नों का ऐसा सहज सरल समाधान इन अवगुण्ठनवती कुलांगना द्वारा किया गया कि इस कुलवधू की दिव्यता पर कोई संदेह न रहा ।

धीरे-धीरे शाहबाग की माँ की ख्याति आस-पास एवं दूर-दूर फैलने लगी । १९२४ में ढाका के सरकारी कृषि विभाग के उच्चपदस्थ अफसर श्री ज्योतिषचन्द्रराय माँ के सम्पर्क में आये । "शाहबाग की माँ **"श्री श्री माँ आनन्दमयी"** के रूप में प्रतिष्ठित हुईं ।

श्री ज्योतिषचन्द्र राय ने श्री श्री माँ से प्रार्थना की "शाहबाग में तो आगे-पीछे सत्संग कीर्तनादि नहीं चल सकते एक आश्रम की विशेष आवश्यकता है । श्री श्री माँ ने कहा, **"पूरा विश्व ही तो**

आश्रम है, नया आश्रम बनाकर क्या करोगे ? श्री ज्योतिष चन्द्रराय की विनती थी "हमलोग अधिक कुछ नहीं चाहते, केवल ऐसा एक स्थान चाहिये जहाँ आपके चरणों के चारों ओर हम सब मिलकर कीर्तन कर सकें ।" श्री श्री माँ ने ढाका के रमना के मैदान में एक स्थान निर्दिष्ट करते हुए कहा, **"यदि ऐसा कुछ करो, तब वह जो टूटा शिव मन्दिर देख रहे हो वह स्थान ही प्रशस्त है । वही तुमलोगों का पुराना घर है ।"**

सन् १९२९ में रमना के मैदान में अति प्राचीन काली मंदिर संलग्न शिव-बाड़ी के प्रांगण में श्री श्री माँ के नाम पर एक विशाल आश्रम स्थापित हुआ । इसी बीच १९२६ के पूर्वार्द्ध में ही ढाका के सिविल सर्जन श्रीशशांक मोहन मुखर्जी अपनी कन्या आदरिणी के साथ श्री श्री माँ के सम्पर्क में आये और सदा के लिये माँ के ही होकर स्वामी अखण्डानन्द गिरि तथा गुरुप्रिया देवी के नाम से परिचित हुए । श्री अखण्डानन्द जी ने श्री श्री माँ के ख्याल को देखते हुये सिद्धेश्वरी की पवित्र भूमि में निजी खर्च से दो कुटियाओं का निर्माण श्री श्री माँ के लिये करवाया जहाँ सर्वप्रथम वासन्ती पूजा हुई थी । श्री श्री माँ के लिंए भक्तों द्वारा निर्मित यही सर्वप्रथम स्थान है । यह १९२६ की घटना है ।

१९३२ में श्री श्री माँ उत्तराखंड पधारीं । श्री श्री माँ का पहला विश्राम देहरादूरन से थोड़ी दूर पहाड़ों के बीच रायपुर नामक गाँव में एक जीर्ण शिवमंदिर था यहीं से उत्तर भारत के लोग श्री श्री माँ के सम्पर्क में आये । जिनमें श्री हरिराम जोशी प्रमुख थे तथा इनके ही माध्यम से भारत के तत्कालीन विशिष्ट राजनैतिक परिवार की मुख्य महिलायें श्रीमती स्वरूपरानी तथा पुत्रवधू कमला नेहरू माँ के सम्पर्क में आयीं । सन् १९३४ में श्री श्री माँ सोलन पधारीं (जो बाघाट स्टेट के अन्तर्गत आता है) एवं बाघाट नरेश श्री दुर्गा सिंह जी ने मातृदर्शन प्राप्त किया । कालान्तर में "योगी भाई" के नाम से परिचित हुए । आपके माध्यम सर्वप्रथम टिहरी गढ़वाल की राजमाता श्रीमती कमलेन्दुमती शाह ने मातृ दर्शन का लाभ उठाया । श्री श्री माँ ने आपको "आनन्दप्रिया" की संज्ञा दी । भक्त परिवार में आप इसी नाम से परिचित हुई । इस प्रकार देश के प्रायः सभी राजपरिवारों को मातृसंग का सौभाग्य मिला । धीरे-धीरे भक्तों की परम्परा बढ़ने लगी, आश्रम श्रृंखला में भी वृद्धि हुई ।

कई महत्वपूर्ण घटनायें घटी । सन् १९३७ में बाबा भोलानाथ, भाईजी, गुरुप्रियादीदी, स्वामी अखण्डानन्दजी एवं भक्तों के सहित श्री श्री माँ का कैलास-मानसरोवर गमन, लौटते हुए अलमोड़े में श्री ज्योतिषचन्द्र राय (भाईजी) का महाप्रयाण, १९३८ मई में बाबाभोलानाथ का महाप्रयाण, सितम्बर १९३८ में ही कन्यापीठ एवं विद्यापीठ प्रतिष्ठा, साधनोपयोगी स्थानों पर यथा– विन्ध्याचल, उत्तरकाशी, अल्मोड़ा, देहरादून, भीमपुरा (नर्मदातट) जगन्नाथ पुरी, वाराणसी आदि स्थानों पर श्री श्री माँ के नाम पर आश्रमों की प्रतिष्ठा इत्यादि । कहना न होगा यह सभी व्यवस्थायें, तथा श्री श्री माँ के श्री शरीर की सेवा का भार एक मात्र ब्रह्मचारिणी गुरुप्रिया दीदी पर ही था । साथ ही श्री श्री माँ की दिव्य दिनचर्या को लिपिबद्ध करना भी वे अपना कर्त्तव्य समझती थीं । गुरुप्रिया दीदी की अद्भुत कार्यक्षमता देख श्री श्री माँ के सान्निध्य में आने वाले सभी व्यक्ति

हतवाक् रह जाते थे । सन् १९३९ में गंगोत्री यात्रा के समय स्वामी परमानन्दजी भी श्री श्री माँ के सान्निध्य में आये एवम् आश्रम सेवा का भार ग्रहण कर गुरुप्रिया दीदी का हाथ बँटाया ।

सन् १९४७ से १९५० पर्यन्त श्री श्री माँ के ही ख्याल से वाराणसी आश्रम में अखण्ड सावित्री महायज्ञ का तीनवर्ष व्यापी अनुष्ठान हुआ, जिसमें देश के सभी प्रान्त से विराट् जन समागम हुआ था । इस महदनुष्ठान की मुख्य उद्योक्तृ गुरुप्रिया दीदी ही थीं ।

उत्तरोत्तर वृद्धिपानेवाली आश्रम, अनुष्ठान एवं विशाल भक्त परम्परा को देखते हुए गुरुप्रिया दीदी ने श्री श्री माँ से कहा, **"इतने आश्रम हो रहे हैं एक श्रृंखला तो चाहिये ।"** इस पर माँ ने कहा– **"मेरी तो एक ही बात है, तुमलोग सब मिलकर जिससे तुमलोगों का आध्यात्मिक कल्याण हो वही करना, और जो देखना, जो होना है होता ही जायगा ।"**

इस समय तक आश्रम वासियों की संख्या में भी वृद्धि हुई थी । शिक्षित एवम् कर्मठ नवयुवकों ने भी श्री श्री माँ के चरणों का आश्रय लिया था । विभिन्न वर्ग के लोग-अधिकारी वर्ग, विद्वत् समाज, चिकित्सकगण, राजन्य वर्ग, धनाढ्य व्यक्ति सभी श्री श्री माँ के सान्निध्य में आ चुके थे । तीन वर्ष व्यापी अखण्ड सावित्री यज्ञ ने मानो एक विशालछत्र के नीचे सबको एकत्रित कर दिया था ।

श्री श्री माँ के दिव्यजीवन के आलोक से विश्वसमाज आलोकित हो सके इस भावना से भावित हो श्री श्री माँ की सेवा के उद्देश्य से १९५० जनवरी के अन्तिम सप्ताह में **"श्री श्री आनन्दमयी संघ"** नाम से एक संगठन का निर्माण किया गया । सरकारी तौर पर इसे सोसाइटी एक्ट के अन्तर्गत रजिस्टर्ड भी कराया गया । इस संगठन के विधिविधानों का भी निर्माण किया गया । इस कार्य में दीदी गुरुप्रिया के भाई श्री जितेन्द्र मुखोपाध्याय का विशेष सहयोग था । आप उस समय इलाहाबाद उच्च न्यायालय के वरिष्ठ न्यायविद् के रूप में माने जाते थे । इस संगठन में जन-जनार्दन की सेवा को प्रधानता दी गयी ।

टिहरी गढ़वाल राजमाता श्रीमती कमलेन्दु शाह (आनन्दप्रिया जी) इस संस्था की प्रथम अध्यक्षा निर्वाचित हुईं । सचिव के रूप में लखनऊ विश्वविद्यालय के प्रख्यात अध्यापक श्री आशुतोष भट्टाचार्य ने पदभार ग्रहण किया । सहसचिव के पद पर आश्रम वासी श्री कुसुम ब्रह्मचारी (ब्र. निर्वाणानन्द) तथा संयुक्त सचिव के पद पर बाद में श्री कमलमहाराज (विरजानन्दजी) नियुक्त हुये ।

"तत् ज्ञान में जन-जनार्दन सेवा," "पवित्र क्रिया से सद्भाव जाग्रत् होता है ।" श्री श्री माँ की वाणी के आधार पर श्री श्री माँ की पवित्र उपस्थिति में कार्य परम्परा प्रारम्भ की गयी ।

श्री श्री आनन्दमयी संघ के प्रारम्भिक आठ वर्ष में संस्था की विधिवत् रूपरेखा बनाने तथा संगठित कराने के लिये श्री कमल महाराज की प्रचेष्टा एवम् दिये गये अवदान कभी भुलाये नहीं जा सकते ।

विभिन्न प्रदेशों में सभी आश्रम एवं मन्दिरों की देखरेख एवं संचालन का कार्य संघ के अन्तर्गत रखा गया । श्री श्री माँ के विविध आश्रमों में स्थायी रूप से रहने वाले सभी आश्रमवासियों के सुख सुविधा का भार भी संघ को ही सौंपा गया । इस प्रकार **"श्री श्री आनन्दमयी संघ"** का सूत्रपात हुआ ।

"श्री श्री माँ आनन्दमयी कन्यापीठ" एवं बालकों के लिये **"श्री श्री माँ आनन्दमयी विद्यापीठ"** इन दोनों शिक्षण संस्थाओं की स्थापना तो पहले ही हो चुकी थी। संघ के कार्य परम्परा के अन्तर्गत इनका भी समावेश किया गया।

सन् १९५१ में वाराणसी के प्रमुख चिकित्सक डा. गोपालदास गुप्त के उत्साह तथा राजमाता श्रीमती कमलेन्दुमती शाह जी के अनुदान से दातव्य औषधालय शिशु कल्याण की प्रतिष्ठा हुई। सन् १९५६ में **"आनन्दमयी करुणा"** के नाम से एक नये भवन का उद्घाटन हुआ। सन् १९६५ में वाराणसी में **"माता आनन्दमयी अस्पताल"** की स्थापना हुई ज़ो आज वाराणसी के प्रमुख चिकित्सालयों में माना जा रहा है। सन् १९६८ में तत्कालीन प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी द्वारा श्री श्री माँ की उपस्थिति में इसका उद्घाटन हुआ था। इसका अलग ही इतिहास है।

श्री श्री माँ की दिव्य वाणी तथा दिव्य जीवनालोक का लाभ जन-जन को प्राप्त हो इस आशय से १९५३ में प्रकाशन विभाग भी प्रारम्भ किया गया। तथा पहली त्रैमासिक पत्रिका. **"आनन्दवार्ता"** के नाम से बंगला अंग्रेजी में प्रकाशित हुई। हिन्दी का भी समावेश हुआ। वर्तमान में यह पत्रिका **"अमृतवार्ता"** के नाम से प्रकाशित हो रही है। साथ ही श्री श्री माँ का जन्मोत्सव श्री श्री दुर्गापूजा एवं संयम महाव्रत यह तीन मुख्य अनुष्ठान का विधिवत् आयोजन संघ द्वारा निर्धारित किया गया।

श्री श्री आनन्दमयी संघ अपनी ५० वर्ष की यात्रा को पूरी करते हुये आज अर्द्धशताब्दी के सोपान पर खड़े होकर अनन्त की ओर दृष्टि डाल रहा है। यह यात्रा युग युगान्तर की है इसका अन्त नहीं है। केवल चलते रहना है श्री श्री माँ की अमर वाणी का सहारा लेकर

श्री श्री माँ के शब्द हैं– **"अमर पथ के यात्री अमर होना, अपने को जानना अपने को पाना"**

"मनुष्य जीवन सफल बनाना" ही संस्था का मुख्य उद्देश्य है। आशा की जाती है यही सदैव रहेगा।

सन् १९५० से २००० पर्यन्त श्री श्री आनन्दमयी संघ के अध्यक्ष, सचिव, सहसचिव, तथा साधारण सचिवों की सूची पाठकों की जानकारी के लिए दी जा रही है–

अध्यक्ष

1.	**राजमाता कमलेन्दुमती शाह, टिहरी गढ़वाल**	...	**जनवरी, १९५० से –**
2.	**राजा दुर्गा सिंह जी, सोलन**	...	**१९५३ से मार्च, १९७७**
3.	**श्री बी. के. शाह, बम्बई**	...	**१९७७ से सितम्बर, १९९५**
4.	**श्री गोविन्द नारायण जी, नई दिल्ली**	...	**१९९५ से आज तक**

प्रथम सचिव

प्रो. आशुतोष भट्टाचार्य,
लखनऊ ... जनवरी, १९५० से दिसम्बर, १९५८

प्रथम संयुक्त सचिव

श्री कमल भट्टाचार्य (विरजानन्द जी) ... जनवरी, १९५० से जून, १९५८

प्रथम सह-सचिव

ब्रह्मचारी कुसुम (निर्वाणानन्दजी) ... जनवरी, १९५० से –

साधारण सचिव
(जनरल सेक्रेटरी)

1. प्रोफेसर आशुतोष भट्टाचार्य ... जनवरी, १९५९ से दिसम्बर, १९६१
2. श्री पानु ब्रह्मचारी ... जनवरी, १९६२ से फरवरी, १९७१
3. स्वामी चिन्मयानन्द जी ... फरवरी, १९७१ से दिसम्बर, १९७३
4. स्वामी परमानन्द जी ... जनवरी, १९७४ से फरवरी, १९८३
5. स्वामी स्वरूपानन्दजी ... सन १९८३ से आज तक

सह साधारण सचिव
(एसिस्टेंट जनरल सेक्रेटरी)

1. श्री पानु ब्रह्मचारी ... जनवरी, १९५९ से दिसम्बर, १९६१
2. स्वामी चिन्मयानन्द जी ... जनवरी, १९६२ से दिसम्बर, १९६७
3. ब्रह्मचारी निर्मलानन्द ... जनवरी, १९६८ से नवम्बर, १९७२
4. श्री शैलेन ब्रह्मचारी ... जनवरी, १९७४ से नवम्बर, १९८२

प्रथम अतिरिक्त साधारण सचिव

1. स्वामी स्वरूपानन्दजी ... सन् १९८० से १९८३

●

"हरि कथा ही कथा, और सब वृथा व्यथा"

—**श्री श्री माँ आनन्दमयी**

अमेरिका के पेन्सीलवेनिया राज्य में स्थायी रूप से पंजीकृत संस्था **माँ आनन्दमयी सेवा समिति (Mass, INC)** के स्वयं सेवकों की ओर से परमाराध्या श्री श्री माँ के सभी भक्तजनों को सप्रेम **"जय माँ"** ।

इस संस्था का उद्देश्य श्री श्री माँ की जीवन लीला रहस्य की सेवा, धार्मिक कार्य, सत्संग एवं जनसेवा सहित सनातन धर्म तथा श्रीमद् भागवत् धर्म युक्त प्रक्रिया है ।

अमेरिका सरकार द्वारा इस समिति के लिये सम्पूर्ण कर मुक्ति (Tax - exemption) प्राप्त है । जिसका नम्बर है 23-2967597 जो IRS Code 501 (C) (3) के अनुसार कार्यों के लिये है ।

अमेरिका एवं आस-पास के देशों में स्थायी रूप से निवास करने वाले मातृभक्तों से विनती है कि **"माँ आनन्दमयी अमृतवार्ता"** (त्रैमासिक पत्रिका) जो चार भाषाओं (हिन्दी, बगंला, गुजराती एवं अंग्रेजी) में श्री श्री माँ की दिव्य जीवन लीला सम्बन्धी गाथा एवं अमूल्य वाणी के संकलन के रूप में प्रकाशित होती है MASS, INC से प्राप्त कर सकते हैं । पत्रिका का वार्षिक चन्दा 12/- बाहर डॉलर मात्र है ।

अन्य विस्तृत जानकारी के लिये निंम्नलिखित पते पर कृपया सम्पर्क कीजिये :–

Mahadev R. Patel
President, Ma Anandamayee Seva Samiti, INC
212, Moore Road
Wallingford, PA 19086-6843
Tel : 610-876-6862 Fax : 610-876-1351
email : devpatel @ netscape. net.

जय माँ

प्रकाशन सूची

श्री श्री आनन्दमयी संघ द्वारा प्रकाशित श्री श्री माँ से सम्बन्धित कुछ अमूल्य प्रकाशन संघ के प्रायः सभी शाखा आश्रमों में विक्रय के लिए उपलब्ध हैं ।

1. PICTORIAL BIOGRAPHY OF MA ANANDAMAYEE—

श्री श्री माँ की सम्पूर्ण जीवन गाथा शब्दों तथा चित्रों में अंकित, यह एक निराला ग्रन्थ है । उत्तम कागज पर छपा एवं बहुसंख्यक आर्ट प्लेट्स से युक्त । सजिल्द, मूल्य, ४५०/-

2. आनन्दज्योति (शताब्दी स्मारिका)

यह एक उच्च कोटि का संस्करण है, जिसमें विभिन्न भाषाओं–संस्कृत, हिन्दी तथा अंग्रेजी में श्री श्री माँ की पवित्र जीवनानुक्रमणिका (१८९६ से १९९२), १०० अमूल्य वाणियों एवं श्री श्री माँ के विभिन्न आश्रम एवं संस्थाओं का इतिहास, साथ ही स्वनामधन्य विद्वानों के लेख, विशेष संदेश एवं श्रद्धाञ्जलि सहित श्री श्री माँ के कतिपय मूल्यवान् चित्रों का संकलन है । अति उत्तम कागज पर छपा है । पेपर बैक, मूल्य रु. १००/-

3. माँ आनन्दमयी दिव्यालोक वार्ता–

हिन्दी भाषा में ब्र. गुणीता द्वारा लिखित माँ की जीवन-कथा का संक्षिप्त चित्रण तथा शतवाणी । पेपर बैक, मूल्य १०/-

4. सद्वाणी–

हिन्दी में अनूदित श्री श्री माँ की मूल्यवान वाणियों का संग्रह । श्री ज्योतिषचन्द्र राय द्वारा संकलित । पेपर बैक, मूल्य रु. १०/-

5. माँ आनन्दमयी–

डॉ. पन्नालाल, आई. सी. एस. (रिटायर्ड) द्वारा हिन्दी में लिखित माँ का अपूर्व जीवन चरित । पेपर बैक, मूल्य रु. २०/-

6. IN YOUR HEART IS MY ABODE—

डॉ. बीथिका मुखर्जी द्वारा अंग्रेजी में लिखित श्री श्री माँ का संक्षिप्त जीवन चित्र । पेपर बैक, मूल्य २०/-

7. MATRI VANI—

श्री श्री माँ की अमूल्य वाणियों का संग्रह । पेपर बैक, मूल्य रु. १५/-

8. WORDS OF ANANDAMAYEE MA—

श्री श्री माँ की अमूल्य वाणियों का संग्रह । आत्मानन्द (मिस ब्लैंका श्लाम) द्वारा संकलित एवं अंग्रेजी में अनूदित । पेपर बैक, मूल्य रु. ३०/-

9. MOTHER AS SEEN BY HER DEVOTEES—

श्री श्री माँ के सम्बन्ध में स्वनामधन्य विद्वानों तथा माँ के विशिष्ट भक्तों द्वारा लिखित मूल्यवान् निबन्धों का संग्रह । पेपर बैक, मूल्य रु. ३०/-

●

माँ आनन्दमयी

अमृत वार्ता

VOL. 4 APRIL

SHREE SHREE ANANDAMAYEE SANGHA

❄ Branch Ashrams ❄

1. AGARPARA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P. O. Kamarhaiti, Calcutta-700058 (Tel : 5531208)
2. AGARTALA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Palace Compound, P.O. Agartala-799001. West Tripura
3. ALMORA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Patal Devi, P.O. Almora-263602, U.P. (Tel : 23313)
4. ALMORA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Dhaul-China, Almora-263881, U.P.
5. BHIMPURA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Bhimpura, P.O. Chandod, Baroda-391105, (Tel : 33208)
6. BHOPAL : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Bairagarh, Bhopal-462030, M.P. (Tel : 521227)
7. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Kishenpur, P.O. Rajpur, Dehradun-248009
U.P. (Phone: 684271)
8. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Kalyanvan, 176, Rajpur Road,
P.O. Rajpur, Dehradun-248009, U.P.
9. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram.
P.O. Raipur Ordnance Factory, Dehradun-248010
10. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
47/A Jakhan, P.O. Rajpur, Dehradun, U.P.
11. JAMSHEDPUR : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Near Bhatia Park, Kadma, Jamshedpur-831005, Bihar
12. KANKHAL : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O.Kankhal, Hardwar-249408, U.P. (Tel: 416575)
13. KEDARNATH : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram. Near Himlok,
P.O. Kedarnath, Chamoli-246445, U.P.
14. NAIMISHARANYA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Puran Mandir,
P.O. Naimisharanya, Sitapur-261402, U.P.

माँ आनन्दमयी

अमृतवार्ता

श्रीश्री माँ आनन्दमयी के दिव्यजीवन
तथा
दिव्यवाणी की वाहिका त्रैमासिक पत्रिका

वर्ष–४ | अप्रैल, २००० | सं.–२

वार्षिक चंदा (डाकव्यय सहित)
भारत में – ६० रुपये
विदेशों में – १२ डॉलर/या ४५० रुपये
एक प्रति – २०/- रुपये

साधारण नियम

यह त्रैमासिक पत्रिका चार पृथक भाषा–हिन्दी, बंगला, गुजराती तथा अंग्रेजी में जनवरी अप्रैल, जुलाई तथा अक्टूबर में प्रकाशित होती है । वर्ष का प्रारम्भ जनवरी से होता है ।

पत्रिका में मुख्यतया श्री श्री माँ पर आधारित लेखों को ही प्रधानता दी जाती है । इनके अतिरिक्त आध्यात्म पर आधारित हृदयस्पर्शी लेख; किसी भी देश तथा किसी भी सम्प्रदाय या धर्म के महापुरुषों की उपदेशात्मक शिक्षावलियों का भी पत्रिका में स्वागत है ।

जो भक्तगण माँ के सम्पर्क में आये हैं वे एकान्त व्यक्तिगत अनुभवों को छोड़कर ऐसे अनुभवों को आकलित कर सकते है जो कि श्री श्री माँ के लौकिक व्यवहार के प्रति आलोकपात करने वाले हों ।

सभी लेख फुलस्केप कागज के एक पृष्ठ पर टंकित या स्पष्ट लिखित होने चाहिये । लेखों की एक प्रति अपने पास अवश्य रखें । मनोनीत न होने पर लेखों को वापस भेजना कार्यालय के लिए असुविधाजनक है । सभी लेख सम्पादक के नाम भेजें ।

अग्रिम वार्षिक चंदा मनीआर्डर या बैंक ड्राफ्ट के माध्यम के "Shree Shree Anandamayee Sangha—Publication A/C".नाम पर भेजें ।

पत्रिका सम्बन्धी सभी प्रकार के पत्रादि व्यवहार तथा वार्षिक चंदा भेजने का पता :

कार्यकारी सम्पादक, "माँ आनन्दमयी - अमृतवार्ता"
माता आनन्दमयी आश्रम
भदैनी, वाराणसी -२२१००१

पत्रिका में विज्ञापन देने का नियम :–

सम्पूर्ण पृष्ठ – २०००/- पूरे वर्ष के लिये
आधा पृष्ठ – १०००/- पूरे वर्ष के लिये

अग्रिम शुल्क के साथ विज्ञापन का विषय (Matter) उपर लिखित पते पर भेजें ।

स्वामी श्री श्री आनन्दमयी संघ की ओर से मुद्रक तथा प्रकाशक श्री पानु ब्रह्मचारी द्वारा श्री श्री आनन्दमयी संघ, भदैनी, वाराणसी–२२१००१ (उ. प्र.) से प्रकाशित तथा रत्ना प्रिंटिंग वर्क्स, बी. २१/४२ कमच्छा, वाराणसी-१० (उ. प्र.) से मुद्रित । सम्पादक–श्री पानु ब्रह्मचारी ।

विषय-सूची

साधारण नियम

यह त्रैमासिक पत्रिका चार पृथक भाषा–हिन्दी, बंगला, गुजराती तथा अंग्रेजी में जनवरी अप्रैल, जुलाई तथा अक्टूबर में प्रकाशित होती है। वर्ष का प्रारम्भ जनवरी से होता है।

पत्रिका में मुख्यतया श्री श्री माँ पर आधारित लेखों को ही प्रधानता दी जाती है। इनके अतिरिक्त आध्यात्म पर आधारित हृदयस्पर्शी लेख, किसी भी देश तथा किसी भी सम्प्रदाय या धर्म के महापुरुषों की उपदेशात्मक शिक्षावलियों का भी पत्रिका में स्वागत है।

जो भक्तगण माँ के सम्पर्क में आये हैं वे एकान्त व्यक्तिगत अनुभवों को छोड़कर ऐसे अनुभवों को आकलित कर सकते है जो कि श्री श्री माँ के लौकिक व्यवहार के प्रति आलोकपात करने वाले हों।

सभी लेख फुलस्केप कागज के एक पृष्ठ पर टंकित या स्पष्ट लिखित होने चाहिये। लेखों की एक प्रति अपने पास अवश्य रखें। मनोनीत न होने पर लेखों को वापस भेजना कार्यालय के लिए असुविधाजनक है। सभी लेख सम्पादक के नाम भेजें।

अग्रिम वार्षिक चंदा मनीआर्डर या बैंक ड्राफ्ट के माध्यम के "Shree Shree Anandamayee Sangha—Publication A/C".नाम पर भेजें।

पत्रिका सम्बन्धी सभी प्रकार के पत्रादि व्यवहार तथा वार्षिक चंदा भेजने का पता :

कार्यकारी सम्पादक, "माँ आनन्दमयी - अमृतवार्ता"
माता आनन्दमयी आश्रम
भदैनी, वाराणसी -२२१००१

पत्रिका में विज्ञापन देने का नियम :–

सम्पूर्ण पृष्ठ – २०००/- पूरे वर्ष के लिये
आधा पृष्ठ – १०००/- पूरे वर्ष के लिये

अग्रिम शुल्क के साथ विज्ञापन का विषय (Matter) उपर लिखित पते पर भेजें।

स्वामी श्री श्री आनन्दमयी संघ की ओर से मुद्रक तथा प्रकाशक श्री पानु ब्रह्मचारी द्वारा श्री श्री आनन्दमयी संघ, भदैनी, वाराणसी–२२१००१ (उ. प्र.) से प्रकाशित तथा रत्ना प्रिंटिंग वर्क्स, बी. २१/४२ कमच्छा, वाराणसी-१० (उ. प्र.) से मुद्रित। सम्पादक–श्री पानु ब्रह्मचारी।

विषय-सूची

"हरि कथा ही कथा, और सब वृथा व्यथा"

—श्री श्री माँ आनन्दमयी

अमेरिका के पेन्सीलवेनिया राज्य में स्थायी रूप से पंजीकृत संस्था **माँ आनन्दमयी सेवा समिति (Mass, INC)** के स्वयं सेवकों की ओर से परमाराध्या श्री श्री माँ के सभी भक्तजनों को सप्रेम **"जय माँ"** ।

इस संस्था का उद्देश्य श्री श्री माँ की जीवन लीला रहस्य की सेवा, धार्मिक कार्य, सत्संग एवं जनसेवा सहित सनातन धर्म तथा श्रीमद् भागवत् धर्म युक्त प्रक्रिया है ।

अमेरिका सरकार द्वारा इस समिति के लिये सम्पूर्ण कर मुक्ति (Tax - exemption) प्राप्त है । जिसका नम्बर है 23-2967597 जो IRS Code 501 (C) (3) के अनुसार कार्यों के लिये है ।

अमेरिका एवं आस-पास के देशों में स्थायी रूप से निवास करने वाले मातृभक्तों से विनती है कि **"माँ आनन्दमयी अमृतवार्ता"** (त्रैमासिक पत्रिका) जो चार भाषाओं (हिन्दी, बगंला, गुजराती एवं अंग्रेजी) में श्री श्री माँ की दिव्य जीवन लीला सम्बन्धी गाथा एवं अमूल्य वाणी के संकलन के रूप में प्रकाशित होती है MASS, INC से प्राप्त कर सकते हैं । पत्रिका का वार्षिक चन्दा 12/- बाहर डॉलर मात्र है ।

अन्य विस्तृत जानकारी के लिये निम्नलिखित पते पर कृपया सम्पर्क कीजिये :-

Mahadev R. Patel
President, Ma Anandamayee Seva Samiti, INC
212, Moore Road
Wallingford, PA 19086-6843
Tel : 610-876-6862 Fax : 610-876-1351
email : devpatel @ netscape. net.

जय माँ

मातृ-वाणी

अपना इष्ट सबके इष्ट में देखो, सिर्फ रूप दूसरा है, दूसरे के इष्ट में अपना इष्ट देखो, वह उन्हीं का ही दूसरा रूप, उल्टी बात लगे तो समझो सब कुछ भगवान् है, यह उल्टा भगवान् है ।

* * *

कभी राम गुफा - कभी कृष्ण गुफा, हरि कभी भी किसी के लिये दुखी नहीं हो सकते, नित्य मुक्त - वह कर्म में भी नहीं आते–शरीर नहीं रखते । उनको देखने के लिये दूसरी दृष्टि चाहिये ।

* * *

दुनिया से खेल करना चाहते हैं । आत्मा ही तो है । आत्मा राम-जिस से सुख दुःख, जो तुम रम रहे हो, पैरो में, कपड़े में, निद्रा में, भोजन में- वही । शरीर माने जड़ । भगवान् में ही सारा वही सब कुछ ।

* * *

अपना कौन है - आत्मा - आत्मा माने मय, विश्वमय अभिन्न रूप जान रहा भिन्न । जो गति वही जगत् । जहाँ जीव कहते - वहीं जगत् । जीव परिवर्तनशील हैं । जो जगत् के बीच बन्धन में हैं ।

* * *

जीव का स्वभाव है जिज्ञासा करना, तृप्ति के लिये नहीं । स्वभाव से ही ।

* * *

परमार्थ चिन्तन और भगवद्बुद्धि से सेवा, और सब तो आवागमन के लिये गठड़ी बाँधते हैं । विषय है - विषय का क्षणिक सुख क्षणिक दुःख अनन्तरूप में प्रकट रूप । प्राकृत रूप में जहाँ हैं वहीं दुःख ।

* * *

कीर्तन जप ध्यान बनते बनते हो जाता है । हों नहीं रहा यह तड़पना होना चाहिये । दुनिया के लिये कितना तड़पना सुख के लिये भगवान् प्रकट के लिये कितना- - - - भगवान् के लिये तड़पना जब तक न आये - - - भगवान के लिये तड़पने से वासना कामना जल जाती है ।

* * *

भगवत् चिन्तन कैसे होवे - कैसे लगन लगे - जितनी बुद्धि है जितना विचार है इस ढंग से दफा दफा (बार-बार) फिसल जाता है । फिर चलता है कोशिश करता है । माँगना चाहिये भगवत प्रेम ।

*   *   *

भगवान् तो पिता माता सखा बन्धु सब कुछ है । और हम दुनिया चाहते हैं । दुनिया का सुख चाहते हैं। सिर्फ तुमको चाहिये । तुम मिलने से सब कुछ मिलता है । परम पिता, परम माता, परम सखा, अपना सब कुछ । राम कहो, कृष्ण कहो, सब में सब- भगवान् में माता पिता सखा सब कुछ । सब में भगवान् है । माँगना चाहिये - एक । हमको क्या चाहिये हम नहीं जानते ।

*   *   *

बाहर की सफाई तो जमादार करता है, और बरतन तो नौकर माँजते है, पर मन की मैल तो भगवान् के सिवाय कोई नहीं सफा कर सकता । जैसे माँ सृष्टि करती जन्म देती है और मां ही सेवा करती हैं और कोई नहीं, वैसे ही सिर्फ भगवान सफाई कर सकते हैं और कोई नहीं - अपनी सेवा आपन ।

*   *   *

कौन खींचता - जो खींचता भगा दो, बस हटाके भगवान् का ध्यान लगाओ, दफा दफा खूब जप ध्यान लगाओ । खाते-पीते चलते फिरते जहाँ रहो मन में स्मरण करते रहो । दिन जा रहा - अभी लगाओ खूब जोर से खूब जप ध्यान करो ।

*   *   *

जो अन्दर है वही बाहर है । लड़ाई होता है - हो रहा है - और हो गया है । अन्दर में सारा । जो भूत में है स्थूल में है । मूल में ना रहे तो स्थूल में प्रकाश कैसे होय बीज में वृक्ष रहता है, तभी तो प्रकाश होता है । जिसके अन्दर ज्ञान है उसके बाहर भी ज्ञान है । जो लीला में है वही ब्रह्माण्ड में है । अन्दर न रहे तो बाहर प्रकाश कैसे हो ।

*   *   *

अच्छा है जो भगवत् भाव के लिये रोता है । भगवत् भाव के लिये सबको रोना है । यही तो इष्ट का रास्ता है । और दुनिया के लिये रोना, मर जाना-फँसने, का है । दुःख बढ़ाना है । गाँठ बाँधने और गाँठ खोलने के लिये । भगवत् भाव के लिये जो दुःख लगता है वह अपने को पाने के लिये रास्ता खुलता है ।

●

सहस्राब्दी का मनन

एक रास्ता नहीं अनन्त रास्ता, मन तो सबेरे से लेकर रात तक जीव जगत में बन्दी हो रहा है । कहते हैं जीव स्वभाव हर समय क्रिया शील गति है । जीव और जगत् २४ घन्टा परिवर्तन हो रहा है । इतना बच्चा जो था वह बड़ा कैसे होता है । परिवर्तन इसलिये अनन्त रख दिया । कौन गति से एक-एक अनन्त गति से एक-एक में अनन्त गति घिसते घिसते कौन स्थिति में आकर आग जलेगी कह नहीं सकते । कौन सा ऐसा Point आ जाय, पत्थर से टक्कर लग के आग लग गयी ।

जप ध्यान करते करते -नेति नेति विचार करते करते, जिस लाईन में जो चले - ऐसा Point है उस स्थिति में आने से जलने वाला जल जायेगा, गलने वाला गल जायेगा । अभ्यास योग तुम्हारे बीच युक्त रहा । तुम जो चाहते हो । लक्ष्य में स्थित रह सके तो अभ्यास योग में परिणत होने का पक्का रास्ता खुल जाता है । कच्चा नहीं पक्का । जप ध्यान और स्मरण । ग्रन्थ पढ़ना, और पूजा करना ।

— श्री श्री माँ आनन्दमयी

करें नयी सदी की अगवानी

करें नयी सदी की अगवानी सुनायें सत्य ज्ञान और अनन्त की कहानी,
सत्य है वहाँ सत्यस्वरूप भगवान् जहाँ
अज्ञान नहीं अभिमान नहीं ज्ञान का प्रकाश वहाँ
आदि नहीं अन्त नहीं, है अनन्त की कहानी । करें नयी - - -
सत्यानुसन्धान करो, मनुष्य जीवन सफल बनाओ,
अपने को जानो अपने को पाओ, तत् बुद्धि से जन सेवा करो ,
ज्ञान की ज्योति जलेगी तभी अनन्त की महिमा दीखेगी । करे नयी - -
सत्य सुनो सत्य कहो सत्य देखो रे
ज्ञान को खोजो ज्ञान को पाओ ज्ञान की ज्योति जलाओ रे,
अनन्त रूप में अनन्त की अन्त हीन सेवा करो रे ।
करें नयी सदी की अगवानी

(मातृवाणी के आधार पर)

श्री श्री माँ आनन्दमयी वन्दना

— पं. श्री. डी.पी. अवस्थी
रामानन्द कालेज, भोपाल

अद्वैत भाव भविता भगवत्स्वरूपा
तापत्रयं विदलने सततं समर्था ।
सर्वत्र या विहरति संमदृष्टि युक्ता
आनन्ददां भगवतीं वचसा गृणामि ।।
रोगान् विनाशयति याऽखिल मानवानाम्
मानं विवर्धयति या शरणागतानाम्
कामप्रदाविविधभावधरां वरेण्याम्
आनन्ददां भगवतीं प्रणमामि नित्यम् ।।
देहाभिमान रहितां भवभीतिहन्त्रीं,
संसारसागरतरीं-जन पालयित्रीम् ।
त्रैलोक्यपावनकरीं मनसा प्रसन्नां,
आनन्ददां भगवतीं प्रणमामि नित्यम् ।।
संसाधयति सर्वं या गृहकार्यलग्ना
लोकान् विमोहयति या हरिकीर्तनस्था ।
धान्यंधनं वसनभूषण वस्तु जातं
दीनान् प्रयच्छति या किल लोकमान्या
आनन्दां भगवतीं प्रणमामि नित्यम् ।।

●

श्री श्री माँ आनन्दमयी प्रसंग

—स्व. अमूल्य कुमार दत्त गुप्त

ज्योतिष बाबू का "भाईजी" नामान्तरण—

२४ अषाढ़, मंगलवार, आज दिन के दस बजे आश्रम पहुँचा । श्रीमद्भगवद्गीता पाठ एवं कीर्तनादि के उपरान्त "कमलाकान्त" ब्रह्मचारी अपना स्वरचित "मातृ प्रसंग" पढ़ कर माता जी को सुना रहे थे । सुनने में आया कमलाकान्त दादा इस प्रकार माताजी के बारे में प्रायः चर्चा करते हैं तथा माताजी भी इस प्रसंग के चलते पुरानी बाते कहती हैं । आज भी कमलाकान्तदादा के आलोच्य विषय को उपलक्ष्य कर ज्योतिषबाबू का नाम भाई जी किस प्रकार हुआ यह प्रसंग माता जी ने सुनाया । माताजी ने कहा, "ज्योतिष जब यक्ष्मा रोग से पीड़ित था उस समय पूर्णकुम्भ के उपलक्ष्य में हमलोग हरिद्वार गये थे । उन दिनों दो तार हमारे पास पहुँचे । एक में ज्योतिष की गिरती हालत तथा दूसरे में भोलानाथ जी के निकट सम्बन्धी कुशारी महाशय की अस्वस्थता का उल्लेख था । ज्योतिष की बीमारी की खबर से भोलानाथ जी बहुत घबड़ा गये । तार पाने के बाद ही हमलोग ऋषीकेश चले गये । ऋषिकेश में हमलोग काली कमली वाले की धर्मशाला में थे । वहाँ एक दिन देखती हूँ कि यह शरीर पैर फैला कर बैठा है । भोलानाथ भी पास खड़े हैं और ज्योतिष इस शरीर की गोद में बैठा है । इस दर्शन की बात भोलानाथ जी से कहने पर वह यह सुनकर बड़े आनन्दित हुये तथा ज्योतिष जीवित नहीं रहेंगे इस प्रकार का जो उन्हें भय था वह तभी चला गया ।

"इसके बाद जगह जगह घूम कर हमलोग ढाका चले आये । इधर ज्योतिष भी धीरे-धीरे स्वस्थ होकर अपने काम में लग गया । इस प्रकार दो-तीन साल बीत गये । इन दिनों बाबा भोलानाथ मौन रहकर सिद्धेश्वरी आश्रम में साधन-भजन कर रहे थे । यह शरीर रमना के आश्रम में रहता था एवं ज्योतिष रोज सुबह इस शरीर को लेकर रमना के मैदान में टहलता था । शामको दफ्तर से लौटते समय वह कुछ देर भोलानाथ के पास बैठ फिर घर चला जाता था । यही उसका नितनेम था । इसी बीच खाँसी के साथ खून गिरते देख ज्योतिष डर गया उसने भोलानाथ जी से जाकर कहा, भोलानाथ जी ने इशारे से, इस शरीर को लेकर सिद्धेश्वरी में आने को कहा । भोलानाथ जी के कथनानुसार उसने दूसरे दिन वैसे ही किया । हमलोग रमना के मैदान से टहलते टहलते सिद्धेश्वरी जा पहुँचे । भोलानाथ जी, सिद्धेश्वरी के आश्रम में आसन के सामने बैठ कर जप कर रहे थे । इस आसन के चारों ओर जो लकड़ी की रेलिंग है, वह तो तुमलोगों ने देखा ही है । भोलानाथ जी ने इशारे से ज्योतिष को कुर्ता खोलकर बैठने को कहा । ज्योतिष कभी भी इस शरीर के सामने नहीं बैठता था; जब तक वह ढाका में था तब तक कभी भी उसे इस शरीर के सामने बैठते नहीं देखा । भोलानाथ की बातों से वह बैठने को तैयार हुआ, सामान्य रूप से न बैठकर वह

घुटने टेक कर बैठा तथा अपना कुर्ता खोलकर रख दिया । इस शरीर के सामने बैठने के कारण उसके केशरहित सिर पर पहली बार दृष्टि पड़ी । उसके सिर पर योगी के लक्षण देखकर मैंने कहा, "इसके मस्तक पर तो योगी के लक्षण दिखाई पड़ रहे हैं ।"यह सुनकर भोलानाथ ने भी उक्त लक्षण देखना चाहा । मैंने ज्योतिष के मस्तक पर हाथ रखकर लक्षण दिखा दिया । इस उपलक्षय में भोलानाथ ने भी हाथ से ज्योतिष का मस्तक स्पर्श किया । इसके बाद अचानक भोलानाथ ज्योतिष को पीठ पर लेकर एक जगह पर ही घूमने लगे । देखकर लगा कि वह मानो इस प्रकार कुछ परिक्रमा कर रहे हों, भोलानाथ स्वयं भी एक भाव की मूर्ति थे । वे जब ऐसा कर रहे थे तब मैं रेलिंग से हटकर एक लकड़ी की अलमारी पर बैठ गयी । इस अलमारी में कभी रमना आश्रम की काली मूर्ति को रखा गया था । उसी अलमारी पर मैं पैर लटका कर बैठी थी । भोलानाथ ने कुछ देर तक ज्योतिष को उसी प्रकार घुमाकर पीठ से उतार मेरी गोद में बैठाते हुए कहा, "यह तुम्हारा धर्म पुत्र है, देखना यक्ष्मा रोग से न मरे ।" वास्तव में ज्योतिष की मृत्यु उक्तरोग से नहीं हुई । कुछ देर तक सहमकर मेरी गोद में बैठने के उपरान्त वह मुझे साथ लेकर रमना आश्रम गया । मुझे वहाँ पहुँचाकर वह घर चला गया । हृषीकेश में जो दर्शन हुआ था वह इस प्रकार हो गया ।

"उस दिन की घटना ने ज्योतिष के हृदय में परम आनन्द ला दिया था । एक तो मेरे तथा भोलानाथ के हाथों ने उसके मस्तक का स्पर्श किया था इस बात का आनन्द था, तिस पर मेरी गोद में बैठने का अवसर मिला इस बात की भी खुशी थी । इस आनन्द की स्मृति को स्थायी रखने के लिये उसका ख्याल हुआ वह फिर से गोद में बैठकर फोटो खींचवायेगा । वीरेन सोम नामक एक व्यक्ति जो उसके परिचित थे और उसी दफ्तर में काम करते थे एवं वह तस्वीर खींचना जानते थे । उनकी सहायता से ज्योतिष इस काम को करेगा ऐसा निश्चय कर उसने यह योजना एक दिन सुबह मुझे बतायी । मैंने उससे कहा वह जो मेरी गोद में बैठा था यह भोलानाथकी इच्छा से हुआ था । इसीलिये इस विषय में वह भोलानाथ जी के साथ सलाह करे । भोलानाथ जी के पास यह सलाह रखने पर उन्होंने केवल मात्र उत्साह से स्वीकृति दे दी ।

"इसके बाद एकदिन ज्योतिष वीरेन सोम तथा इस शरीर को लेकर सिद्धेश्वरी आश्रम में गया । वहाँ तीन चित्र लिये गये । पहला वह मेरे सामने घुटने टेक कर बैठा था और मैं रेलिंग पकड़ कर खड़ी थी, दूसरे में भोलानाथ और मैं उनके मस्तक को स्पर्श किये हुये । तीसरा चित्र लेते समय वीरेन ने थोड़ी विपत्ति करते हुये कहा था इस प्रकार चित्र लेने पर दूसरे लोग इसे देख कर इसका अन्य अर्थ भी कर सकते हैं । पर यह सुनकर ज्योतिष ने कहा था, "कौन देखेगा ? मैं इसे मेरी पेटी में छिपा कर रखूँगा ।" इस समय मेरे मुँह से निकला था, "क्यों, यह चित्र माँ ही (अर्थात् ज्योतिष बाबू की पत्नी) देखेंगी ।" जो भी हो इस प्रकार तीन चित्र लिये गये, ज्योतिष ने इन चित्रों को अपनी पेटी की नीचली तह में कपड़ों के भीतर रख दिया था ।

"इधर ज्योतिष जो आश्रम में माँ के पास इतना आना जाना करता था उनकी पत्नी पसन्द नहीं करती थी । अपने पति को बाधा देने में असमर्थ हो तथा एकदिन उपर्युक्त चित्रों के बारे में जानकारी प्राप्त कर ईर्ष्यावशतः उसने जिस चित्र में ज्योतिष माँ की गोद में बैठा था उस चित्र को हटाकर रख लिया, बाद में उस चित्र से कुछ नये चित्र ले लिये पहले के चित्र में ज्योतिष मेरी गोद

में बैठे रहने पर भी भोलानाथ वहाँ उपस्थित थे यह था । पर नयी फोटो जो बनायी गयी थी उसमें भोलानाथ की मूर्ति नहीं थी, केवल ज्योतिष मेरी गोद में बैठा है । यह नया चित्र कालेज के बच्चों को दिखा कर प्रचार किया जाने लगा कि वे लोग तथा और भी जो व्यक्ति माँ के पास (अर्थात् इस शरीर के पास) जाते हैं वे इस चित्र को देखते ही समझ जायेंगे कि माताजी किस तरह की हैं । चारों ओर विशेषतः कालेज के बच्चों में इस चित्र को लेकर एक आन्दोलन चलने लगा । अतुल (दत्त) बाबू की पत्नी ने अपने लड़के की मुहँजबानी इस चित्र की बात सुनकर मेरे पास रोते-रोते सारी बात सुनायी । वे बेहाल होकर रो रही थी । मानो दुःख से दबी जा रही हों । उनसे पूरी बात सुनकर मैंने भोलानाथ से सब बातें कही । यह सुनकर भोलानाथ भी हतवाक् हो गये । इतने दिनों के बाद उन्हें समझ आयी कि भावुकता के आवेग में उन्होंने जो करने की स्वीकृति प्रदान की है एवं आग्रह दर्शाया है वह कदापि सम्यक् नहीं हुआ । ज्योतिष को भी यह बात कही गयी । पहले ही कह चुकी हूँ कि ज्योतिष प्रतिदिन प्रातः इस शरीर को लेकर रमना के मैदान में टहलने जाते थे । एक दिन टहलते-टहलते मैंने उसको सारी बात बतायी, मेरी बातों को सुनकर उसकी जो हालत हुई वह तुमलोगों को समझाना कठिन है । यह सुनकर वह सोचने लगा, "पृथ्वी, आप दो भागों में बँट जाओ, मैं तुम्हारे भीतर प्रवेश करूँ ।" मैं आगे-आगे जा रही थी और ज्योतिष मेरे पीछे-पीछे आ रहा था, पर आगे रहकर भी मैं समझ रही थी कि शोक दुःख से उसके हृद्‌यन्त्र की क्रिया बन्द होती जा रही थी, इतना आघात पाने पर भी उसकी आँखों में आँसू नहीं थे । यदि आँखों में पानी आता तो उसके अन्दर का दर्द काफी हल्का हो जाता, परन्तु ऐसा न होकर उसकी साँस बन्द होती आ रही थी । वह अपने आप ही कहने लगा, "जिस चरित्र में बिन्दु मात्र भी कालिमा नहीं है, आखिर मेरे कारण उस चरित्र में स्याही का दाग पड़ा ? और जो पत्नी इतने वर्षों तक मेरे साथ रहकर मुझे देखती आ रही है दूसरे दोष तो दूर की बात है, जिसने कभी एक सिगरेट भी मुँह से लगाते नहीं देखा, आखिर उसी पत्नी ने मेरे बारे में यह अपवाद प्रचार कर दिया ? इसके बाद यहाँ मेरे लिये सूर्य उदय न हों ।" भाषा प्रयोग के दूसरे दिन ही सूर्य उदय के पहले ही वह घर द्वार छोड़कर एक ओर चले जायेंगे । वह सोचते थे कि इस शरीर के पास रहना ही माँ के पास रहना हुआ ऐसी बात नहीं है । माँ तो सर्वव्यापी हैं । जहाँ भी जाना क्यों न हो माँ का संग उसका छूटेगा नहीं । मैंने ज्योतिष को समझाने का प्रयास नहीं किया । जो हुआ है उसकी भी आवश्यकता थी इसीलिये हुआ । ऐसा न होने पर वह नहीं होता । इसीलिये दुःख करने की कोई बात नहीं है । वह यह याद रखे सत्य की विजय हर समय होती है । जो मिथ्या है वह नष्ट होने को बाध्य ।

"जो भी हो उसके मन की इस अवस्था को जानते हुये मैंने ख्याल से भोलानाथ से संध्या के समय सब बाते कहीं । यह सुनकर भोलानाथ अत्यन्त व्याकुल हो उठे । उन्होंने तुरन्त कमलाकान्त को ज्योतिष के पास भेज दिया तथा कहलवाया कि दूसरे दिन सुबह ज्योतिष भोलानाथ जी का वस्त्र लेकर आश्रम आये । शायद भोलानाथ का कोई वस्त्र ज्योतिष के पास रखा था । उसी वस्त्र को लेकर आश्रम आने को कहा गया । भोलानाथ ने कमलाकान्त को इन सब के बारे में कुछ नहीं कहकर केवल इतना ही कहा ज्योतिष यदि उनकी बात सुनकर आश्रम आने को राजी हो तो वह चला आये, कारण एकबार हामी भर देने से ज्योतिष उसका पालन करेगा ही । पर उसकी बात

सुनकर ज्योतिष यदि कुछ न कहे, तो कमलाकान्त ज्योतिष के घर पर जागते हुये ज्योतिष की गतिविधि पर ध्यान रखे । कमलाकान्त के द्वारा ज्योतिष को भोलानाथ की बात कहने के साथ ही वह दूसरे दिन वस्त्र लेकर आश्रम आने को राजी हो गये, अतः कमलाकान्त ज्योतिष के घर न रहकर आश्रम लौट आया ।

"ज्योतिष की पत्नी के इस काम का फल यह हुआ कि संसार के प्रति ज्योतिष का जो वैराग्य भाव था वह और भी सुदृढ़ हो गया तथा पत्नी के साथ बात-चीत भी प्रायः बन्द हो गयी । इसके कुछ दिन बाद ही ज्योतिष की पत्नी ने भगवान ब्रह्मचारी नामक एक तान्त्रिक से दीक्षा लेने का प्रस्ताव ज्योतिष के सामने रखा ज्योतिष ने व्यक्ति के माध्यम कहलवाया इसमें उनकी कोई आपत्ति नहीं है । इस दीक्षा के उपलक्ष्य में वनदुर्गा की पूजा इत्यादि के सिलसिले में ज्योतिष का काफी खर्चा हो गया । पैसे को खर्च होते देख ज्योतिष को कोई परेशानी नहीं थी । उसने सोचा था सत् संग के प्रभाव से शायद उसकी पत्नी की मति गति में परिवर्तन आ जाय । पर इस दीक्षा का फल विपरीत ही हुआ । कारण ज्योतिष की पत्नी को इस गुरु से इस प्रकार के उपदेश मिलते रहे जिस कारण पति-पत्नी की दूरी बढ़ती ही गयी । जिसके फलस्वरूप ज्योतिष की जीवितावस्था में पति पत्नी की भेंट न हो सकी । ज्योतिष की आखिरी अस्वस्थता का संवाद देकर जब उसकी पत्नी को आने के लिये कहा गया तब भी स्वयं न आकर उन्होंने एक पुराना नौकर भिजवा दिया और नौकर से कहलवाया कि वह (ज्योतिष की पत्नी) इस अस्वस्थता को एक विशेष घटना नहीं मानती है, कारण उनके गुरुदेव ने कहा है कि वह सुहागिन अवस्था में सद्गति को प्राप्त करेंगी । पर जब ज्योतिष की मृत्यु हुई तथा अन्यान्य घटनाओं द्वारा भी जब उसने देखा कि उन्होंने गुरुदेव को जो सोचा था वह वैसे नहीं है । तब गुरु के प्रति उसकी सारी श्रद्धा चली गयी, धीरे-धीरे उसने समझा जीवन में कितनी बड़ी गल्ती की है उसने । इस शरीर के प्रति जो उसका विरुप भाव था अब नहीं है । इस शरीर के बारे में उन्होंने बाद में जो जो बातें कही हैं उसे सुनकर अनेक व्यक्तियों ने कहा है कि ज्योतिष की पत्नी के मुँहजबानी वे ऐसी बातें सुनेंगे ऐसी आशा उनकी नहीं थी । वे बातें अभी ख्याल में नहीं आ रही हैं अच्छी ही हैं खराब नहीं । इसलिये पहले ही तुमलोगों से कहा गया जो मिथ्या है वह नष्ट होने को बाध्य एवं सत्य की जीत एकदिन न एक दिन होगी । "जो भी हो इन सब घटनाओं के काफी दिन बाद यह शरीर जब ज्योतिष एवं भोलानाथ को लेकर रायपुर था तब यदि कोई ज्योतिष का परिचय इस शरीर से पूछता तो यह शरीर भोलानाथ के पूर्वकथानुसार ज्योतिष को इस शरीर का धर्मपुत्र कहकर परिचय देता था । यह सुनकर इधर के लोग ज्योतिष को "भाईजी" कहकर पुकारने लगे । इस प्रकार ज्योतिष सबके "भाई जी" हुए ।

इस प्रकार की बातों में दोपहर के बारह बज गये ।

(क्रमशः)

●

मेरी दीक्षा का एक छोटा सा विवरण

—स्वामी नारायणनन्द तीर्थ

बंगाल 1350 साल के प्रचण्ड ग्रीष्म के समय श्री श्री माँ के साथ हम लोग अल्मोड़ा जा रहे थे। काठगोदाम से अल्मोड़ा जाने पर चौरासी मील का रास्ता बस द्वारा तय करना पड़ता है। देवादिदेव महादेव के प्रिय निवास कैलास से लौटते समय इस उत्तराखण्ड की तपोभूमि मे माँ के परम भक्त भाई जी ने महासमाधि में चिरन्तन विश्राम पाया था। अल्मोड़े की सीमा में स्थित पाताल देवी के मन्दिर के सामने उनको समाधिस्थ किया गया था। उनकी समाधि पर सोलन के राजा साहब श्री दुर्गा सिंह जी ने एक सुरम्य मन्दिर बनवाकर उनकी स्मृति को अमर बनाया। बाद में उस मन्दिर में माँ के निर्देश सें शिव लिंग की स्थापना हुई एवं उनकी नित्य सेवा पूजा चलती आ रही है। पाताल देवी में तब तक माँ का कोई आश्रम नहीं बना था। समाधि मन्दिर के पूरब की ओर माँ के लिए एक छोटा सा कमरा था एवं उसी के दक्षिणांश में घिरे हुए बरामदे में माँ का भोग बनता था। उसके उत्तर की ओर के बरामदे से हिमालय के चिर तुषार मण्डित धवल गिरि श्रृंग दिखाई पड़ते हैं। माँ के परम भक्त देहरादून निवासी श्री परशुराम जी ने इसी स्थान पर मां के लिए एक आश्रम का निर्माण कराया है। जहाँ तक मुझे याद है उस समय माँ के साथ दीदी श्री गुरुप्रिया देवी, स्वामी परमानन्द जी एवं श्री अभय थे। संयोगतः उनके साथ रहने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ था। हम चारों लोग जो माँ के साथ अल्मोड़ा गये थे सभी रात को माँ के साथ माँ के छोटे से कमरे में ही रहते थे। माँ तखत पर सोती थी और हम सब जमीन पर ही लेटते थे। दिन को हम लोग प्रायः बरामदे में या तूत बृक्ष के नीचे रहते थे। बाद में जो लोग मातृ संग की इच्छा से वहाँ गये थे, उनमें से कोई कोई स्वामी हरिहरानन्दजी के समाधि क्षेत्र में अथवा पहाड़ के ऊपर किसी किराये के घर में रहते थे। प्रातः एवं सायं दोनों समय माँ का संग करते थे एवं नाना प्रकार की धर्मालोचना से आनन्दित होते थे। दीदी और मुझे नित्य गायत्री यज्ञ करने का निर्देश था उस बार जो लोग वहां उपस्थित थे, उन्होंने तय किया कि इस बार माँ का जन्मोत्सव अल्मोड़े में होगा। इस उत्सव के उपलक्ष में जो लोग वहाँ खड़े थे, उनमें से कई लोग सुप्रसिद्ध नृत्य कलाकार श्री उदय शंकर के सेन्टर एवं ब्रह्मचारी श्री आत्मस्वरूप जी (सत्येन्द्रनाथ सान्याल) के शैलावास में रहते थे। दूसरी कोई सुविधा न होने के कारण भाई जी के समाधि मन्दिर में ही श्री श्री माँ की तिथि पूजा का आयोजन किया गया था निश्चित हुआ कि भाई जी के मन्त्र शिष्य श्री हरिराम जोशी माँ की पूजा करेंगे। तिथि पूजा के दिन गुरुप्रिया दीदी हर समय उपवास रखती थीं। इस बार उन्होंने मुझे भी उपवास रखने को कहा।

शाम को देखा कि पाताल देवी के कुण्ड के किनारे बैठकर श्री हरिराम भाई पान खा रहे हैं। मैंने सहज भाव से जिज्ञासा की आप आज रात को माँ की पूजा करेंगे ? आप पान खा रहे हैं। उपवास नहीं किया ? मुझे लगा कि वे जानते नहीं हैं कि माँ की पूजा करने पर उपवास रखना

पड़ता है । शायद दीदी ने भी उनको इस बारे में कुछ नहीं कहा था । कहने पर वे अवश्य उपवास रखते दीदी ने शायद सोचा था कि हरिराम जब माँ की पूजा करेंगे तब अवश्य ही उपवास रखेंगे । इस बारे में दीदी क्या कहेंगी, पूजा करने वाले को उपवास रखना पड़ता है । मैंने जैसे सरल भाव से प्रश्न किया था उन्होंने भी सहज भाव से उत्तर दिया । मैं माँ की पूजा नहीं कर सकूंगा, क्योंकि मैंने भोजन किया है । मैं जानता नहीं था कि पूजा करने पर उपवास रखना पड़ता है । ये सब बातें गुरुप्रिया दीदी से कहने पर उन्होंने भी मुझे ही माँ की तिथि - पूजा करने को कहा कारण कि उन्हें मालूम था कि उनकी बात के अनुसार आज मैं निराहारी हूँ ।

मातृ पूजा का अधिकार पाकर मैं बहुत ही आनन्दित हुआ था इसमें थोड़ा भी संदेह नहीं है पर मुझे शालग्राम शिला पर नारायण पूजा के सिवाय अन्य कोई पूजा नहीं आती थी । दीक्षा न होने तक यज्ञोपवीत के उपरान्त ब्राह्मण शिव एवं नारायण पूजा कर सकते हैं । दूसरी कोई पूजा नहीं । यही मैं बचपन से बड़े बूढ़ों से सुनता आ रहा हूँ । शक्ति पूजा करने के लिए तान्त्रिक गुरु के पास विधिवत दीक्षा लेना आवश्यक है । दीदी को ज्ञात नहीं था कि मैंने दीक्षा नहीं ली है । जानने से कभी भी वह मुझे माँ की पूजा करने को नहीं कहतीं । इतने दिनों तक मैं अदीक्षित हूँ यह वे सोच भी नहीं सकती थीं ।

विश्वजननी श्री श्री माँ की तिथि पूजा पहले बाबा भोलानाथ करते थे । उनके देहावसान के उपरान्त कुछ वर्षो तक श्री मन्मथनाथ चट्टोपाध्याय ने यह पूजा की । इस बार मेरे जैसा अनधिकारी पूजा का भार प्राप्त कर बड़ी ही मुश्किल में पड़ गया । किसकी पूजा किस विधि से करने पर श्री श्री माँ वह ग्रहण करेंगी ? यह सब सोच विचार कर जब कुछ ठीक न कर पाया तब श्री श्री माँ सायंकाल जब समाधि मन्दिर के पास एकाकी टहल रही थी तब अवसर पाकर समाधान के लिए उन्हीं की शरण में आया । काफी देर तक तो माँ कुछ बोली नहीं बाद में जब मैंने बहुत ही बिनती की तब मेरी कातरोक्ति से दया पर वश होकर संक्षेप में श्री श्री माँ ने कहा "अपने अपने इष्ट की पूजा" उनके इस संक्षिप्त उत्तर से मैं समझा कि अपने इष्ट की पूजा करने से ही माँ की पूजा होती है । इसी को उन्होंने सूत्ररूप में मुझे समझा दिया । इससे यह भी समझा जा सकता है कि विश्व ब्रहमाण्ड में जितने भी देव देवी हैं सब ही श्री श्री माँ के विभिन्न रूप हैं । सब नाम एवं सब रूप में ही वे है और अनाम अरुप में भी वे हैं । उपासकों की उपासना की सुविधा और सिद्धि के लिए ही एक ब्रह्म के ही नाना रूपों की कल्पना की गई है । जैसे एक ब्रह्म की तीन मूर्तियाँ ब्रह्मा, विष्णु और महावीर हैं । मूलतः तीनों देव ही एक हैं । शास्त्र में भी यही बात कही है :–

उपासकानां सिद्धयर्थ ब्रह्मणो रूपकल्पना ।
एको मूर्तिस्त्रयो देवा : ब्रह्माविष्णुमहेश्वराः ॥

भाई जी श्री ज्योतिष चन्द्र रायने इसी परम सत्य को ही मूलभित्ति मानकर स्वरचित मातृ वन्दना में श्री श्री मों को सर्वदेव देवी मयी माँ कहकर सम्बोधित किया है । माँ ने भी अपना परिचय देते हु कहा है पूर्ण ब्रह्म नारायण आज मुझे भी माँ ने सूत्र रूप में यही निर्देश दिया । अपने अपने इष्ट की पूजा श्री दुर्गा सहस्रनाम स्तोत्र में भी महादेवी को सर्वदेवमयी पुष्टा, भूष्या, भूतपतिक्रिया कहा गया है ।

अब मेरे मन में प्रश्न था कि मैं तो किसी गुरु द्वारा तन्त्रोक्त मन्त्र से दीक्षित नहीं हूँ । तब मेरे इष्ट कौन हैं ? आज मैं किसकी पूजा करुँगा ? इस प्रश्न के उत्तर में मैंने अपने मन में विचार किया कि सन् 1942 में श्री श्री काली पूजा की महारात्रि को देहरादून रायपुर में श्री श्री माँ ने एक अभिनव अनुष्ठान द्वारा एक नाम ग्रहण करवाया था उस नाम के जो नामी या देवता है उन्हीं की आज इष्ट रूप में पूजा करुँगा । इस अभिनव अनुष्ठान का उल्लेख पहले किया जा चुका है ।

इन देवता का बहुत पहले मैंने अपने पाठावस्था (सन् 1915-1916) में सपने में दर्शन पाया था, वे मुझे हाथों के इशारे से अपने पास बुला रहे थे । अभी भी कभी कभी वे दर्शन देकर सन्तान को अनुगृहीत कर रहे हैं । इष्ट देवता सभी के ही निर्धारित हैं, प्रकाशित होते रहते हैं । वे सर्वदा ही अपने आश्रितों पर कृपा दृष्टि रखते हैं । अब अवसर पाकर कथा प्रसंग में मैंने श्री श्री माँ के चरणों में निवेदन किया ।

●

एक दीपक से हजारों दीपक जल सकते हैं । एक महात्मा का ज्ञान वैराग्य प्रकाश अन्य व्यक्तियों पर भी आ सकता है । शरीर के वस्त्र नहीं धोने से गंदे होते हैं, बदबू आती है । सत्संग में बैठने से मन की गंदगी चली जाती है । मन कभी गन्दा न हो पाये । अन्तःकरण को सत्संग में धोते रहना चाहिये । "निर्मल मन मोहे भावे" ।

—श्री श्री माँ आनन्दमयी

माता आनन्दमयी के विराट स्वरूप का दर्शन

—श्री अयोध्या प्रसाद दीक्षित

27 अगस्त, 1982 को माँ अपने चिन्मय मानव शरीर को छोड़कर अव्यक्त में लीन हो गईं। अन्तिम दिनों में माँ देहरादून के किशनपुर आश्रम में रहीं जिसे उन्होंने 'विश्व मन्दिर' का नाम दिया है। बाद में उनका चिन्मय शरीर कनखल हरिद्वार ले जाया गया जहाँ दक्ष प्रजापति मन्दिर के समीप श्री श्री माँ आनन्दमयी आश्रम कनखल में स्थल समाधि दी गई और वहीं विशाल ज्योतिमन्दिर का निर्माण हुआ, जो अब असंख्य मातृ भक्तों का कल्याण कर रहा है।

मैं अक्टूबर 1982 को प्रशासनिक सेवा से निवृत्त हो कर देहरादून में अपने मकान 'आनन्द भवन' में निवास के लिये आया। आनन्द भवन की नींव माँ ने स्वयं 1964 में डाली थी जिस अवसर पर माँ के साथ अनेक संत, ब्रह्मचारी, ब्रह्मचारिणियाँ आई थीं। विधिवत् पूजन के पश्चात् नींव में गीता आदि सद्ग्रन्थ रखे गये थे। 1965 में मकान पूरा हो जाने पर अखण्ड रामायण के पश्चात् उसी प्रकार माता जी द्वारा अनेक सन्तों की उपस्थिति में गृह प्रवेश सम्पन्न हुआ और इसी कारण माँ की स्मृति में मकान का नाम 'आनन्द भवन' रखा गया।

अक्टूबर, 1982 के देवी पक्ष में नवरात्र अष्टमी के दिन मैं माता जी द्वारा अभिषिक्त मकान आनन्द भवन देहरादून में आया और माँ के किशनपुर आश्रम विश्व मंदिर में प्रणाम करने गया। मुख्य फाटक खोल कर जैसे ही मैंने प्रांगण में प्रवेश किया, तो बरबस ऊपर दृष्टि गई। आश्रम की दूसरी मंजिल के बरांडे में ब्रह्मचारी निर्वाणानन्द जी किसी के साथ खड़े थे। और ऊपर दृष्टि गई तो दोनों मंजिलों के ऊपर पूरे आकाश को व्याप्त करके माँ का कमरे के ऊपर का विराट् शरीर विशाल रूप में छाया हुआ था। वही धवल जाज्ज्वल्यमान मोहक रूप, वही धवल वसन, वही मुक्त श्याम केश, वही परम आकर्षक मुख मंडल, वही परम प्रिय परम आकर्षक नेत्र – परन्तु सभी कुछ अत्यन्त विशालकाय। पूरे आकाश में माँ के उस विशालकाय रूप के सिवा एक तिल भी स्थान शेष नहीं था। मैंने कुछ घबराकर फिर नीचे देखा। सभी कुछ पूर्ववत् था। बरबस पुनः ऊपर देखा, फिर वही माँ का विराट् रूप। कई बार नीचे और बरबस पुनः ऊपर देखा सब कुछ वैसा ही। अब घबराहट समाप्त हो चुकी थी। केवल परम आश्चर्ययुक्त परम आनन्द का आभास शेष था। आस-पास के लोगों ने यह सब कुछ नहीं देखा। अन्य किसी ने कुछ भी नहीं समझा। मैंने भी उस अनुपम अनुभव तथा अत्यन्त विभोर अवस्था के विषय में किसी से कुछ नहीं कहा। परन्तु मैं उसे याद कर बार-बार पुलकित हो रहा था।

आज भी उस अलौकिक दर्शन के स्मरण मात्र से मुझे रोमांच हो जाता है। मैंने इस अलौकिक अनुभव को पत्नी को बताया, फिर कुछ अन्तरंग मित्रों को बताया जो मातृभक्त थे। पर आज तक

इस परम गोपनीय अलौकिक विह्वल कर देने वाले अनुभव को बहुत कम लोगों के सामने प्रकट किया है ।

माँ के अनेक भक्त को उनके स्तर, स्थिति, साधना की आवश्यकता अथवा माँ की अहैतुकी कृपा के अनुसार दिव्य दर्शन हुए हैं । किसी को काली के रूपमें, किसी को कृष्ण अथवा शिव के रूप में, किसी को दुर्गा के रूप में, जिसके फलस्वरूप किसी को भय, किसी को ज्ञान, किसी को भक्ति, किसी को आनन्द की उपलब्धि हुई है । अधिकतर सांसारिक भक्तों को सांसारिक विषयों की उपलब्धि अथवा नाना प्रकार के कष्टों के निवारण के चमत्कार की उपलब्धि हुई है ।

कनखल में निवास करने वाले विदेशी अनन्य भक्त संत विजयानन्द का एक लेख मैंने अंग्रेजी में पढ़ा है । वह माँ का साथ कभी नहीं छोड़ते थे । सदा बहुत दिनों से साथ-साथ यात्रा कर रहे थे । जिस समय वह अल्मोड़ा के पाताल देवी आश्रम में थे, माँ ने वहाँ से अन्यत्र जाने पर उन्हें वहीं छोड़ देने का निश्चय किया । उन्हें बहुत दुःख हुआ पर 'गुरु' आज्ञा का पालन तो उन्हें करना ही था । परन्तु वह बहुत विरह-कातर एवं दुखी थे और बराबर माँ का स्मरण कर रहे थे । एक दिन जब वह पाताल देवी आश्रम के निचले भाग से पर्वत के ऊपरी भाग की ओर जा रहे थे तो अचानक सामने पूरे पर्वत पर माँ के विराट् दर्शन हुए । उनके सम्मुख पूरे पर्वत पर माँ के विराट शरीर के अतिरिक्त एक तिल भी जगह खाली नहीं थी । चलते हुए उन्हें पैर रखने में भी संकोच होने लगा । तब उन्हें माँ के सर्वव्यापक रूप का ज्ञान हुआ और बड़ी शान्ति मिली । उनकी विरह वेदना शुद्ध सात्विक निर्मल प्रेम में परिणत हो गई ।

अनेक मातृ भक्तों को अनेक प्रकार के मातृ दर्शन और अनुभव हुए हैं, पर सबने उन्हें प्रकट नहीं किया है ।

श्रीमद्भगवद्गीता में वर्णित भगवान के विराट् स्वरूप का वर्णन अति अद्भुत है । वह भगवान् की समस्त सृष्टि का एक साथ भयानक दिग्दर्शन है । उसे देख कर अर्जुन जैसा महारथी, सक्षम साधक अनन्य भक्त भी भयभीत हो गया । सम्भवतः यह दर्शन श्री कृष्ण की दी हुई दिव्य दृष्टि से भी अधिक क्षमता का होने के कारण सह्य नहीं था । अतएव भगवान ने अर्जुन को अपना चतुर्भुज रूप दिखाया और फिर प्रिय भक्त को अपना मोहक द्विभुज रूप दिखाया । अपने प्रभु और प्रिय सखा को उस रूप में देख कर अर्जुन पुनः स्वस्थ और शान्त हुए । पर अब अर्जुन आज्ञाकारी सेवक और महाभारत का विजेता वीर योद्धा बन चुका था ।

हर युग में प्रत्येक काल में श्री भगवान के प्राकट्य का केवल एक कारण है–धर्म की स्थापना और अधर्म का नाश ।

"जब जब होय धरम की हानी ।
बाढ़हिं असुर अधम अभिमानी ।
तब तब प्रभु धरि विविध सरीरा
हरहिं कृपा निधि सज्जन पीरा"

परन्तु उनका विराट् दर्शन भक्त की क्षमता तथा समय की आवश्यकता के अनुरूप होता है। वह सर्व-शक्तिमान हैं और सर्व समर्थ। उनके प्राक्ट्य का हर युग में एक ही उद्देश्य है–धर्म की स्थापना और अधर्म का नाश।

श्रीमदभगवद् गीता में भगवान श्री कृष्ण ने स्वयं उद्घोष किया है:–

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् ॥
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे ॥

●

विसोबा से दीक्षा ग्रहण करने के कुछ दिनों के पश्चात् नामदेव एक स्थान पर बैठकर भजन कर रहे थे। इस बीच एक कुत्ता उनके मध्यान्ह भोजन की रोटी लेकर भाग गया। नामदेव उस कुत्ते के पीछे दौड़े, किन्तु उनके हाथ में डण्डा न होकर घृत-पात्र था। उन्होनें कुत्ते से कहा–"हे विश्वेश्वर, आप सूखी रोटी क्यों खाना चाहते हैं? इसके लिये कुछ घी भी लेते जाइये, इससे रोटी सुस्वादु हो जायेगी।" अब वह आत्मसाक्षात्कार की अतिरेकावस्था को प्राप्त हो चुके थे।

–श्री शिवानन्द
(दिव्यजीवन संघ)

धर्म

—प्रस्तुति : डा. प्रेम नारायण सोमानी

सदाचार ही धर्म है, दुराचार ही पाप ।
पर सेवा ही धर्म है, पर पीड़िन ही पाप ।
शुद्ध सत्य ही धर्म है, अन्य धर्म ना होय ।
जहाँ पनपती कल्पना, धर्म तिरोहित होय ।।
धर्म न मन्दिर में मिले, धर्म न हाट बिकाय ।
धर्म न ग्रन्थों में मिले, जो धारे सो पाय ।।
प्रज्ञा, शील, समाधि ही, शुद्ध धर्म का सार ।
काया, वाणी, चित्त के, सुधरे सब व्यवहार ।।
कर्म काण्ड न धर्म है, धर्म न बाह्याचार ।
धर्म चित्त की शुद्धता, सेवा, करुणा प्यार ।।
धर्म न मिथ्या रुढिया, धर्म न मिथ्याचार ।
धर्म न मिथ्या मान्यता, धर्म सत्य का सार ।
जटा जूट, माला, तिलक, हुये शीश के भार ।
भेष बदल कर क्या मिला ? अपन चित्त सुधार ॥
धर्म न हिन्दू, बौद्ध है, धर्म न मुस्लिम, जैन ।
धर्म चित्त की शुद्धता, धर्म शांति सुख चैन ।।
शुद्ध धर्म का शांति पथ, सम्प्रदाय से दूर ।
शुद्ध धर्म की साधना, मंगल से भरपूर ।।
धर्म धर्म तो सब कहें, पर समझे ना कोय ।
जीवन जीने की कला, सत्य धर्म है सोय ।।
यही धर्म की परस है, यही धर्म का माप ।
जन जन का मंगल करे, दूर करे संताप ।।

●

सत्य का आश्रय

संकलन – श्रीशिवानन्द

एक चोर था । वह चोरी करके अपना जीवन व्यतीत करता था । उसके परिवार में माता-पिता, पुत्र-पुत्री, सभी थे । इन सभी का उदर-पोषण उसे ही करना पड़ता था । अपढ़-और कामचोर होने के कारण उसके पास चोरी के अलावा आमदनी का कोई साधन नहीं था ।

एक दिन अचानक ही वह अपने जीवन के विषय में सोचने लगा । विचार करने के बाद उसने स्वयं ही यह अनुभव किया कि उसने अपनी जिन्दगी में चोरी ही की । कोई भी अच्छा काम नहीं किया ।

दूसरे दिन प्रातः काल ही एक साधु के पास जा पहुँचा । उसने सुना था कि साधु-संतों की कृपा से पापियों का उद्धार संभव हो सकता है । वह साधु के चरण पकड़कर रोने लगा और कहने लगा "महांराज मुझे बचाइये, मुझ पर कृपा कीजिये" ।

ये सामान्य साधु नहीं थे । बहुत बड़े महात्मा थे । चोर को देखते ही वे सब समझ गये । उन्होंने चोर से कहा "मुझसे दीक्षा लेगा? दीक्षा लेने पर मैं जो कहूँगा उसी के अनुसार चलना होगा अर्थात् मेरे आदेशों का पालन करना होगा । मैं जो कहूँगा क्या वह सब कुछ कर सकेगा?" चोर तो उत्तेजित था ही वह महात्मा जी की बात पूरी होने के पूर्व ही चिल्ला उठा "करूँगा महाराज अवश्य ही करूँगा" ।

साधु ने चोर को दीक्षा दी और कहा– "आज से तेरा झूठ बोलना चोरी करना बन्द" । चोर ने गुरु की आज्ञा स्वीकार कर ली और अपने घर की ओर चल पड़ा । वह जब घर पहुँचा तो उसे देखकर उसके घर वाले उससे कई तरह के प्रश्न करने लगे पर उसने किसी को कोई उत्तर नहीं दिया । उसके घरवाले उसका व्यवहार देखकर आश्चर्यचकित रह गये । वह चोरी करने नहीं गया और ज्यादातर मौन रहने लगा ।

सभी ने देखा– चोर साधु बन गया है– इसके कारण परिवार में गंभीर समस्या खड़ी हो गई । वह यह कि घर में सबको भूखा रहना पड़ रहा है । इसी प्रकार चार-पाँच दिन बीत गये ।

चोर को दीक्षा देने के बाद साधु सोचने लगे चोर क्या कर रहा है एक बार जाकर देखूँ तो सही । अचानक वे उसके घर पहुँचे ।

साधु को देखते ही चोर ने प्रणाम किया और सम्पूर्ण आदर-सम्मान के साथ उन्हें बैठाया । साधु ने देखा, पूरा परिवार भूखे रहकर दिन बिता रहा है । तब उन्होंने कहा "तू चोरी कर सकता है पर झूठ का सहारा नहीं लेगा, सावधान ।" चोर ने गुरु की बात मान ली और उन्हीं के आदेश से चोरी करने लगा पर झूठ नहीं बोला ।

एक दिन चोरी करने राजमहल में जा पहुँचा । एक कमरे में प्रवेश किया । उस कमरे में राजा स्वयं सो रहे थे । टक-टक थोड़ी सी आवाज होते ही राजा की नींद खुल गई । राजा ने आँखें खोलीं और देखा एक आदमी आलमारी से मणियों भरी थैली निकाल रहा है ।

राजा ने चुपके से पलंग के नीचे से एक कपड़ा निकाला और राजवेष खोलकर उसे पहन कर दरवाजे के पास जा पहुँचे । पर चोर ने राजा की इस क्रिया को नहीं देखा कारण उसका इन सब बातों पर ध्यान बिल्कुल नहीं था । चोर जब चोरी कर निकलने वाला ही था कि उसने एक व्यक्ति को दरवाजे के पास खड़ा देखा तो कुछ देर के लिये वह रुक गया । उसे रुकते हुए देखकर राजा थोड़ा डर गया । उसने सोचा कि शायद चोर उसपर अभी किसी अस्त्र के साथ आक्रमण करेगा । राजा तुरन्त बोल उठा "क्यों भाई क्या तुम भी मेरे जैसे चोरी करने के लिये यहाँ आये हो?" यह सुनकर चोर की जान में जान आई और वह बोला "हाँ भाई, पर अगर तुम्हें चोरी करनी है तो भीतर आओ" ।

राजा चुपचाप चोर के पास चला आया । उसने चोर से धीरे से कहा– "भाई मैंने इसके पूर्व कभी चोरी नहीं की है । इसलिए मुझे चोरी करना नहीं आता । तुम मुझे सिखा दो और तुम्हें जो कुछ भी प्राप्त हुआ है, उसी में से थोड़ा-सा मुझे भी देते जाना ।

चोर ने राजा की बात मान ली और कहा, "मैं तुझे चोरी का एक चौथाई हिस्सा दूँगा, तुम बाहर जाकर पहरा दो । यदि कोई इधर आये तो मुझे इशारा कर देना मैं थोड़ा और माल चोरी करके लाता हूँ । चोर ने राजा को चोरी के माल का एक चौथा हिस्सा दे दिया और राजमहल से भागने लगा । परन्तु राजमहल से निकल जाना इतना आसान नहीं था । राजा के एक सिपाही ने उस चोर को पकड़ लिया और बन्दी बना लिया । दूसरे दिन राजा अपनी विचार-सभा में बैठे हुए थे । तभी सिपाही ने बन्दी चोर को राजा के सामने भरी सभा में उपस्थित किया ।

राजा सब कुछ जानकर भी अनजान बनने का नाटक करता रहा ।

राजा ने पूछा– "क्या तुमने चोरी की है?"

चोर ने उत्तर दिया– "जी हाँ" ।

राजा बोला– "क्यों? क्या-क्या चीजें चोरी की हैं?"

चोर ने सब कुछ सच-सच बता दिया । राजा ने कहा "चोरी ही चोर का प्रधान व्यवसाय है, अगर तुम चाहते तो सारा सामान अपने साथ ले जा सकते थे, परन्तु तुमने दरवाजे पर खड़े व्यक्ति को कुछ हिस्सा क्यों दिया ?

"मैंने उसे वचन दिया था ।"–चोर ने कहा ।

उसने राजा को सारी बात सच-सच बता दी । उसने कहा–"महाराज मैं चोर हूँ, परन्तु मेरे गुरु ने मुझसे झूठ बोलने के लिये मना किया है । चोरी के बिना मेरे परिवार के लोग भूखे मर रहे हैं यह देखकर ही उन्होंने मुझे चोरी करने का आदेश दिया है । परन्तु झूठ बोलने से मना किया है, इसलिये मैं झूठ नहीं बोलता हूँ आपसे जो कुछ भी कहा वह भी सब सच है ।

राजा का धर्म है प्रजा पालन, सत्य और न्याय की रक्षा करना । इसलिये राजा ने सिपाही से कहा-"इस चोर को छोड़ दो" फिर राजा ने बड़े ही प्यार से उस चोर का हाथ पकड़कर कहा- "तुम्हारे घरवालों का दायित्व मैं लेता हूँ । पर तुम चोरी नहीं करोगे, मुझे वचन दो ।"

चोर ने कहा-"महाराज ! आपका आदेश सर आँखों पर । उस दिन से चोर सुख के साथ साधु-जीवन व्यतीत करने लगा ।

यह कहानी इस तथ्य को स्पष्ट करती है-"सत्य ही जीवन का मूल है । सत्य का आश्रय ग्रहण करने पर मनुष्य को सभी प्रकार की शान्ति प्राप्त होती है" ।

[श्री श्री माँ आनन्दमयी]

●

चन्द्रभागा नदी के तट पर पण्ढरपुर की स्थापना एक नौका के रूप में भव-सागर के सन्तरण के लिए हुई है । वहाँ पण्ढरीनाथ एक नाविक के रूप में तुम्हें पार उतारने के लिए खड़े हुए हैं और सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण बात तो यह है कि वह यह काम निःशुल्क किया करते हैं । इस प्रकार उन्होंने अपने समक्ष आत्म-समर्पण करने वाले कोटि-कोटि जनों का उद्धार किया है । स्वयं को उनके हाथों में सौंपकर इस संसार में तुम अमर्त्य हो जांओगे ।

-श्री शिवानन्द
(दिव्यजीवन संघ)

चराचर जगत् में परिव्याप्त गुरु श्रेणियाँ

—डॉ. विमला कर्णाटक

मानव जीवन की शान्ति की खोज उतनी ही पुरानी है, जितना मानव जीवन । सृष्टि को चाहे वेदान्त की शब्दावली में ब्रह्म की शक्ति माया का विलास कहें या न्याय-वैशेषिक के अनुसार पञ्च सूक्ष्म परमाणुओं का कार्य कहें अथवा उसे सांख्य-योग के शब्दों में त्रिगुण प्रकृति के परिणाम के रूप में परिभाषित करें अथवा उसे जनसाधारण की भाषा में विधाता की अनुपम रहस्यमयी कृति मानें, जो भी समझें - यह तो निश्चित है कि ज्ञानी और अज्ञानी दोनों को लोह चुम्बकन्याय से वह अपनी ओर आकृष्ट करती है । प्रत्येक युग के प्राणी मकड़ी की भाँति स्वनिर्मित संसार जाल में अवश्य फँसता है । फिर अर्जित ज्ञान के द्वारा अज्ञाननिर्मित जाल में विनिर्युक्त भी होता है । बन्धन-मोक्ष की यात्रा जितनी लम्बी है, उसके यथार्थ स्वरूप को समझना उतना ही कठिन है । जन्म पर जन्म बीतते चले जाते हैं ।

सत्मार्ग पर चलने की दुरुहता देखकर ही सम्भवत विराट् कलाकार ने मूर्तियाँ गड़ते हुए उनमें गुणात्मक रंगों का ऐसा कलात्मक समन्वय किया कि उसकी प्रत्येक कृति में अनुकरण करने का विशिष्ट पुट दिखलाई पड़ता है । उसकी सर्वोच्च विवेकशील कृति मानव है । वह पशु-मृग-पक्षी-सरीसृप-स्थावर आदि चेतनधारी पदार्थों से घिरा हुआ है । उसे चाहिए कि नीरक्षीर विवेकी हंस की भाँति विराट् कलाकार की प्रत्येक कृति से सार-संग्रह करे । अपनी शिक्षा को प्रेय से श्रेय की ओर उन्मुख करे और अपने में अन्तर्निहित साधुता-सात्त्विकता का विकास करे । स्मरण रहे कि प्रत्येक प्रिय वस्तु श्रेयकारी नहीं होती है । मानव को आपातरमणीय प्रिय वस्तु श्रेय प्रतीत होती है । उसमें प्रेय में श्रेय का आरोप उसी प्रकार होता है, जैसे शुक्ति में रजत की प्रतीति, चाकचक्य के कारण होती है । इस दार्शनिक सिद्धान्त को एक लौकिक सरल उदाहरण से इस प्रकार समझा जा सकता है - औषधि प्रेय नहीं किन्तु श्रेय है । उसके सेवन से तात्कालिक दुःख से छुटकारा मिल जाता है, भले ही उसकी कड़वाहट जीभ को अनुकूल प्रतीत न हो ।

इस प्रकार विधाता की दिखलाई पड़ने वाली यह भूत-भौतिक सृष्टि अपने में अनेक रहस्य समेटे हुए हैं । भूत-भौतिक पदार्थों के स्वरूप और उनके क्रियाकलापों का सूक्ष्मतया अध्ययन किया जाय तो उनसे शिक्षित होने की व्यापक सम्भावनाएँ निगूढ हैं । अप्रतिहत एवं अप्रतिम कलाकार का यह उन्मुक्त ग्रन्थ है इससे शिक्षित हो कर मानव ने अपने अनुभवों को स्वलिखित पुस्तकों में अंकित किया है । अपनी अनुभूति को भाषा दी है ।

संस्कृत साहित्य में पशु-पक्षियों को लेकर अनेक कथाएँ प्रचलित हैं । पञ्चतन्त्र में ऐसी कथाओं का वर्णन मिलता है । कबूतर शान्ति का दूत और सन्देश वाहक के रूप में वर्णित है । इतिहास साक्षी है कि प्राचीन काल में सन्देश भेजने के लिये पशु-पक्षियों का उपयोग किया जाता रहा है ।

बालक-बालिकाओं को पाठशाला में काकदृष्टि, बकध्यान तता श्वाननिद्रा के बारे में समझाया जाता है । इनको लेकर संस्कृत ग्रन्थों में अनेक न्याय (सिद्धान्त) बना डाले । इनमें घुणाक्षरन्याय, काकतालीयन्याय, काकाक्षिगोलकन्याय, कीटभृङ्गन्याय, सिंहावलोकनन्याय, काकदन्तगवेषणन्याय, अन्धचटकन्याय आदि प्रसिद्ध हैं । तथाकथित न्याय शब्द के लिये हिन्दी में मुहावरा या लोकोक्ति का प्रयोग होता है । जैसे बगुलाभगतआदि । किसी भी भाषा का ऐसा साहित्य नहीं है, जहाँ इस प्रकार पशु-पक्षी पर आधारित कहावतें न मिलती हों ।

शिक्षा प्रदान करने की श्रेणी में केवल चेतन पशु-पक्षी ही नहीं आते हैं । अपितु पृथ्वी, आकाश अग्नि भौतिक तत्त्व भी हमें शिक्षित करते हैं । शाखाचन्द्रन्याय, वह्निधूमन्याय, लोहचुम्बकन्याय पंकप्रक्षालन न्याय, अरुन्धती दर्शनन्याय आदि अनेक न्याय इसमें आते हैं । इससे कथ्य को समझने में सुकरता होती है ।

यहाँ हम श्रीमद्‌भागवत में वर्णित कुछ ऐसी ही शिक्षाओं की चर्चा करेंगे । स्वयं भगवान् हरि ने कहा है कि संसार में जो मनुष्य यह जगत् क्या है? इसमें क्या हो रहा है । इत्यादि बातों पर विचार करने में निपुण हैं, वे चित्त में भरी हुई अशुभ वासनाओं से अपने-आपको स्वयं अपनी विवेकशक्ति से ही बचा लेते हैं । समस्त प्राणियों का आत्मा ही अपने हित और अहित का उपदेशक गुरु है । फिर मनुष्य तो इस विषय में समस्त प्राणियों की अपेक्षा विशेष है ही । क्योंकि यह अपने प्रत्यक्ष अनुभव और अनुमान के द्वारा अपने हित-अहित का निर्णय करने में पूर्णतः समर्थ है । वे मेरे समस्त शक्तियों के आश्रयभूत स्वरूप को भली-भाँति प्रत्यक्ष प्रकट देखते हैं ।

श्रीमद्‌भागवत के एकादश स्कन्ध में राजा यदु और ब्रह्मवेत्ता दत्तात्रेय का एक संवाद आता है । इस संवाद में राजा यदु दत्तात्रेय ऋषि से पूछते हैं कि ब्रह्म ! कृपा करके यह बतलाईये कि आपको यह विमल बुद्धि कैसे प्राप्त हुई? इस पर दत्तात्रेप ऋषि कहते हैं कि मैंने अपनी बुद्धि से बहुत से गुरुओं का आश्रय लिया है, जिनसे शिक्षा ग्रहण करके मैं इस जगत् में मुक्तभाव से स्वच्छन्द विचरण करता हूँ । उन गुरुओं के नाम और उनसे ग्रहण की हुई शिक्षा को तुम्हें मैं सुनाता हूँ । मेरे चौबीस गुरु हैं । इनके नाम हैं– पृथ्वी, वायु, आकाश, जल, अग्नि, चन्द्रमा, सूर्य, कबूतर अजगर समुद्र, पतंग, भौरा या मधुमक्खी, हाथी, शहद संग्रह करने वाला, हरिण, मछली पिङ्गला, वेश्या, कुररी पक्षी, बालक, कुँआरी कन्या, बाण बनाने वाला, सर्प, मकड़ी और भृङ्गी कीट । हे राजन् इन्हीं चौबीस गुरुओं के आचरण से मैंने इस लोक में अपने लिये शिक्षा ग्रहण की । तुम भी इनसे सीखो, जैसा मैंने सीखा–

पृथ्वी से धैर्य और क्षमा की शिक्षा

लोग पृथ्वी पर कितना आघात और उत्पात मचाते हैं, परन्तु वह न तो किसी से बदला लेती है और न क्रन्दन करती है । इसी प्रकार संसार के प्राणी अपने-अपने प्रारब्ध के अनुसार दूसरे के प्रति प्रतिकूल चेष्टाएँ करते हैं, किन्तु धीर पुरुष को धैर्य का परित्याग कभी नहीं करना चाहिए ।

पृथ्वी के ही विकार पर्वत और वृक्ष की सारी चेष्टाएँ दूसरों के हित के लिये ही होती है । साधु पुरुष को भी चाहिये कि उनकी शिष्यता स्वीकार करके उनसे परोपकार की शिक्षा ग्रहण करे ।

वायु से आहारमात्र ग्रहण की शिक्षा

प्राणिमात्र के शरीर में रहने वाला प्राणवायु आहारमात्र की प्राप्ति से ही सन्तुष्ट हो जाता है । वैसे ही साधक को इन्द्रियों के वशीभूत न होकर जीवन-निर्वाह मात्र के लिये ही अन्न ग्रहण करना चाहिये, जिससे बौद्धिक विकार, मनस्चाञ्चल्य वाणीवाचालता से बचा जा सके । वाह्य वायु गन्धवाहक होती है । किन्तु उसका गन्ध से कोई सम्बन्ध नहीं है क्योंकि गन्ध पृथ्वी का गुण है । यह वाह्य वायु अनेक स्थानों में व्याप्त है, किन्तु वह किसी के भी गुण-दोष को नहीं अपनाता । वैसे ही साधक पुरुष को चाहिये कि अपने लक्ष्य पर स्थिर रहे । किसी के गुण-दोष से प्रभावित हुए विना तटस्थ बना रहे । फिर जैसे वायु को पृथ्वी के गन्ध गुण का वाहक बनना पड़ता है, वैसे ही साधक का जब तक इस पार्थिव शरीर से सम्बन्ध है, तब तक उसे क्षुत्पिपासा आदि द्वन्द्वों को वहन करना पड़ता है । अपने को शरीर नहीं, अपितु, आत्मा के रूप में देखते हुए साधक को आहारमात्र का ग्रहण करना चाहिए और शरीर तथा उसके गुणों से सर्वथा निर्लिप्त रहना चाहिये ।

आकाश से अखण्डता की शिक्षा

हे राजन् ! मैंने आकाश से अखण्ड रहने की शिक्षा प्राप्त की है । जिस प्रकार घर, मठ आदि के द्वारा आकाश खण्डित प्रतीत होता है, पर ऐसा है नहीं । वह तो तात्विक दृष्टि से एक और अपरिच्छिन्न ही है । वैसे ही रंग आकार, और जाति के आधार पर विभक्त प्राणि समुदाय खण्डित नहीं है, क्योंकि आत्मा सर्वत्र स्थित होने के कारण विराट कलाकार, चाहे उसे ब्रह्म, ईश्वर, अल्लाह आदि किसी भी नाम से पुकारा जाय, सभी में है । मनुष्य ने निहित स्वार्थों से सभी खण्डित करने का प्रयास किया है; जो शोचनीय है ।

जल से पवित्रता की शिक्षा

जिस प्रकार जल स्वभाव से ही स्वच्छ, चिकना मधुर और पवित्र करने वाला होता है और फिर गंगा आदि तीर्थों के दर्शन, स्पर्श नामोच्चारण से भी पवित्र हो जाते हैं । वैसे ही साधक को भी स्वभाव से ही शुद्ध, स्निग्ध, मधुरभाषी और लोकपावन होना चाहिये । उसे जल से यह शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये कि उसका दर्शन, स्पर्श और नामोच्चारण करने वाले भी पवित्र हो सकें ।

अग्नि से तेजस्विता की शिक्षा

जैसे अग्नि अपने प्रकट और अप्रकट दोनों रूपों में तेजस्वी रहती है । अपराभूत रहते हुए उसे स्वसंरक्षण एवं संवर्द्धन के लिये किसी पात्र (साधन) की आवश्यकता नहीं रहती है । वह समस्त मलिन पदार्थों को भस्मीभूत करते हुए भी अपने गर्भ को मलिन नहीं बनाती है । ऐसे ही साधक को भी परम तेजस्वी, तपस्या से देदीप्यमान, इन्द्रियों से अपराभूत, होते हुए किसी का भी दोष अपने में न आने दे ।

चन्द्रमा से गतिशीलता की शिक्षा

जैसे काल के प्रभाव से चन्द्रमा की कलाएँ घटती-बढ़ती रहती है, वह निरन्तर गतिशील रहता है, फिर भी चन्द्रमा तो चन्द्रमा ही रहता है. वह न घटता है और बढ़ता ही है, वैसे ही जन्म से

लेकर मृत्युपर्यन्त जितनी भी अवस्थाएँ हैं, सब शरीर की हैं, आत्मा से उनका कोई सम्बन्ध नहीं है। अतः कालक्रम से गतिशील साधक को जलप्रवाह तथा दीपशिखा की भांति शरीर की अवस्थाओं से सर्वथा पृथक् आत्मा को जानना चाहिए।

सूर्य से सञ्चित वस्तु के दान की शिक्षा

हे राजन् ! जैसे सूर्य अपनी किरणों से संचित पार्थिव जलराशि को यथोचित समय पर बरसा देते हैं, वैसे ही मनुष्य को चाहिये कि इन्द्रियों के द्वारा संगृहीत वित्तआदि को समय आने पर दान कर देना चाहिये। उसमें संगृहीत पदार्थों के प्रति रागात्मक बुद्धि नहीं होनी चाहिये।

कबूतर कबूतरी उपाख्यान से अत्यन्त आसक्ति दुःख का कारण - ऐसी शिक्षा

हे राजन् ! कहीं किसी के साथ अत्यन्त स्नेह अथवा आसक्ति नहीं करनी चाहिये, अन्यथा उसकी बुद्धि अपना स्वातन्त्र्य खोकर दीन हो जाती है और उसे कबूतर की तरह उत्पन्न क्लेश उठाना पड़ता है। बेचारे कबूतर को अपनी प्रिया कबूतरी के साथ वंशवृद्धि से जो अपार सुख मिला वह बहेलिये द्वारा प्रक्षिप्त जाल में उन्हें फंसा देखकर क्षण भर में दुःख में परिवर्तित हो गया। ईश्वर की लीला विचित्र है। जो बाँधता है यही बन्धन को काटता भी है। हे राजन्! यह मनुष्य शरीर मुक्ति का खुला हुआ द्वार है। इसे पाकर भी जो कबूतर की तरह अपनी गृहस्थी में ही फंसा हुआ है, वह बहुत ऊँचे तक चढ़कर भी निरन्तर गिरता जाता है।

सर्प से निष्चेष्टता की शिक्षा

मनुष्य को सर्प से निष्चेष्टता की शिक्षा लेनी चाहिये। उसे चाहिये कि अजगर के समान केवल प्रारब्ध के अनुसार प्राप्त हुए भोजन में ही सन्तुष्ट रहे। उसके शरीर में मनोबल, इन्द्रियबल और देहबल तीनों हो तब भी वह निष्चेष्ट ही रहे। निद्रारहित होने पर भी सोया हुआ सा रहे और कर्मेन्द्रियों के होने पर भी उनमें कोई चेष्टा न करे। मनुष्य को पूर्व कर्मानुसार सुख-दुःख प्राप्त होते हैं। अतः सुख-दुःख का रहस्य जानने वाले बुद्धिमान पुरुष को चाहिये कि इनके लिये इच्छा अथवा किसी प्रकार का प्रयत्न न करे।

(क्रमशः)

अखण्ड सावित्री महायज्ञ की पूर्णाहुति

पूर्णाहुति का आँखों देखा विवरण
(पूर्व प्रकाशित के बाद)

– गुरुप्रिया देवी

पूर्णाहुति के पहले दिन रात्रि के समय, जब सत्संग समाप्त हो गया, माँ के नियमानुसार सारे आश्रम को झाड़ू से साफ कर उसके ऊपर गंगाजल छिड़क दिया गया एवं उसी समय से आश्रम और यज्ञशाला को फूलों से सजाना शुरू किया गया। अनेक लोगों ने इस काम में आनन्दपूर्वक योग दिया। यज्ञशाला भीतर और बाहर फूलों की मालाओं से ऐसी सजाई गई कि दूर से उसे देखने पर यह एक फूलों का गुच्छा है ऐसा भ्रम होने लगा। आश्रम की धवल प्रासाद-पंक्ति की दीवारों में लहरों की तरह फूल पत्तियों की विचित्र मालाएँ नाना प्रकार से झुला दी गई थीं। आश्रम के आंगन के ऊपर बड़ी-बड़ी पुष्प-मालाएँ शोभा पाने लगीं। देखते देखते आश्रम एक पुष्पोद्यान के रूप में बदल गया। ऊपर नीचे इधर उधर जिधर ही दृष्टि डालिए प्रफुल्ल फूलों का समा बंधा था। इसं यज्ञ के निमित्त लगभग दो हजार रुपये की फूल मालाएँ खरीदी गई थीं। उनके सिवा अन्यान्य लोगों ने जितनी मालाएं खरीद कर माँ को अथवा अन्यान्य साधु-महात्माओं को चढ़ाई थीं उनकी गिनती की जाय तो कहना पड़ेगा कि इस यज्ञ के अवसर पर आश्रम में लगभग ५-६ हजार की केवल पुष्प-मालाएँ ही व्यवहार में आईं।

यज्ञशाला के दक्षिण ओर एक स्थानं दिखाकर माँ ने वहाँ पर महात्माओं के बैठने का प्रबन्ध करने को कहा था। माँ के आज्ञानुसार उस ओर एक आड़ लगा कर महात्माओं के लिए उच्च आसन की व्यवस्था की गई एवं विशिष्ट व्यक्तियों के लिए वहीं पर गलीचे आदि बिछा दिये गये। अन्यान्य लोगों के लिए भी यथायोग्य बैठने की व्यवस्था की गई। तदनन्तर मां के निर्देश के अनुसार ही दान की वस्तुएँ यज्ञशाला के उत्तर द्वार से यज्ञशाला के अन्दर लाकर रक्खी गईं। कहाँ पर कौन वस्तु रखनी चाहिए यह सब माँ ने ही खड़ी हो कर बतला दिया।

पूर्णाहुति के पूर्व दिन रात्रि में सोना नहीं चाहिये। गीत वाद्य के साथ आमोद-प्रमोद कर रात्रि व्यतीत करने की ही शास्त्रीय विधि है। हम लोगों ने भी उसी का अनुसरण किया था। उसी रात्रि गुजराती महिलाओं ने माँ को 'गरबा' नृत्य दिखाया था। उनका नृत्य समाप्त होने पर लड़कियों ने हाल के कमरे में रात्रि के १ बजे तक कीर्तन किया था। किसी किसी ने यज्ञशाला के चारो ओर लीप कर ऐपन दिये थे। इस काम में विशेष रूप से अग्रसर थीं श्रीमती इला। रात्रि में एक बजे के बाद से लड़कों ने भी कीर्तन कर सारी रात बिता दी। हम लोगों में से किसी के भी नेत्रों में निद्रा का लेशमात्र भी न था, किन्तु उसके कारण शरीर में किसी प्रकार की थकावट भी नहीं आई।

श्री माँ ने हम लोगों के बीच घूम फिर कर आवश्यकतानुसार काम काज का निर्देश कर सारी रात बिता दी । इस प्रकार रात्रि के ४ बजने पर ब्रह्मचारी गङ्गा स्नान करने उतरे । वे लगातार तीन वर्षों से उसी समय गङ्गा स्नान कर प्रातः कृत्य सम्पन्न करते आ रहे थे । भक्तों में से भी अनेक लोग गङ्गा स्नान कर आये । उन्होंने धूप आदि जला कर प्रातः कीर्तन आरम्भ कर दिया । देखते-देखते पूर्वाकाश तपे हुए सोने की तरह पीतिमा लिये हुए लाल हो उठा एवं रात्रि सुप्रभात में बदल गई ।

३० पौष वि. २००६ संवत् तदनुसार १४-१-५० पूर्णाहुति का दिन था । सुदीर्घ काल से (तीन वर्षो से) जो महायज्ञ चला आ रहा था उस दिन उसकी समाप्ति होने वाली थी । इस कारण एक ओर हृदय जैसे मारे आनन्द के थिरक उठा दूसरी ओर वैसे ही आडम्बर विहीन दूसरे दिन की कल्पना कर बीच-बीच में उदास होने लगा । क्योंकि लगातार तीन वर्षों तक चलने वाले इस साहचर्य से यज्ञ हमारे जीवन का एक अपरिहार्य अङ्ग बन चुका था । प्रभात होते न होते ही झुण्ड के झुण्ड नरनारी आश्रम में आकर इकट्ठे होने लगे । जो पिछली रात आश्रम में उपस्थित न थे वे आश्रम की सजावट देख कर चौंक पड़े । रातों रात मानों आश्रम फूलों से सज धज कर मायापुरी बन गया था । यज्ञशाला के ऊपर रंग-बिरंगे रेशमी रेशमी ध्वज और पताकाएं प्रभातकाल की वायु में लहरा रही थीं । महाध्वज जिसमें चाँदी के घुंघरू जुड़े थे गौरव के साथ महाकाश में खड़ा होकर रुनझुन शब्द से मानो अद्‌भुत मधुर वाणी का प्रसार कर रहा था । यज्ञशाला के मध्य में चार कोनों की चार वेदियों के ऊपर जरीदार रेशमी वस्त्र के चँदवे शोभा पा रहे थे । यह सब देख कर सभी लोग अपने-अपने हृदय में अनुभव करने लगे कि आज और कल के बीच महान् अन्तर है ।

एक घण्टे में ही आश्रम लोगों से ठसाठस भर गया । महात्मा गण आकर अपने-अपने निर्दिष्ट आसनों पर बैठ गये । उनके भाल पर चन्दन का तिलक और गले में फूलों की माला पहना दी गई । महात्माओं के सिवा और भी अनेक गण्यमान्य लोगों ने वहाँ पर आसन ग्रहण किया । उनका भी उसी तरह चन्दनतिलक और पुष्प माला द्वारा सत्कार किया गया । आश्रम के आँगन में तिल रखने को भी स्थान नहीं रहा । आश्रम के दूसरी ओर तीसरे खंडों के बरामदों में भी अगणित नरनारीगण खड़े थे । सभी उत्सुक नेत्रों से यज्ञशाला की ओर एक टक देख रहे थे । बीच-बीच में नर-नारियों की उलूध्वनि (मधुर आनन्द ध्वनि) और कुमारियों की पञ्च शङ्खध्वनि होने लगी तथा बैण्ड बाजा बजने लगा । इस पूर्णाहुति के अवसर पर ब्रह्मचारी शैलेश ने गाना बनाया था । श्रीमती वेलून ने उसमें स्वर साधना कर अन्यान्य लड़कियों के साथ उसे गाया । उसे सुन कर सभी लोग प्रसन्न हुए थे ।

उधर यज्ञशाला के भीतर सब देवताओं की षोडशोपचार पूजा के लिए पूजा की सामग्री और फलों को परातों में सजा के लाकर ढेर लगा दिया गया था । ब्रह्मचारी लोग माँ की दी हुई आशीर्वादी रामनामी ओढ़ कर उन सब वस्तुओं को यथास्थान रखकर पूजारम्भ की व्यवस्था कर रहे थे । यज्ञ के आरम्भ से लेकर पूर्णाहुति के दिन तक जिन्होंने किसी न किसी समय इस यज्ञ में आहुति-प्रदान में भाग लिया था उन सब को बुलाकर माँ ने उस दिन एकत्र किया । पुर्णाहुति के कई दिन पहले माँ ने मुझसे कहा था, "देख, किसी ने इस शरीर को पीतल की एक बड़ी पिचकारी दी

थी उस पिचकारी को ठीक करके रखना तो ।" माँ ने क्यों यह बात कही यह मैं उस समय नहीं समझ सकी थी । फिर भी माँ के आदेशानुसार मैंने पिचकारी एक निर्दिष्ट स्थान पर रख दीं थी । पूर्णाहुति के दिन यज्ञशाला में जिस समय विभिन्न देवताओं की पूजा हो रही थी उस समय माँ ने वह पिचकारी तथा एक बाल्टी गंगाजल लाने को कहा । मैंने श्रीमती बूनी को पिचकारी लाने के लिए ऊपर भेजा, वह भी अत्यन्त अनिच्छा के साथ ऊपर गई क्योंकि उसे भय था कि कहीं मेरे परोक्ष में पूर्णाहुति न हो जाय । अस्तु, पिचकारी और गङ्गाजल लाने पर भाई बटुक जी ने जब उन्हें देखा तो वे अत्यन्त आश्चर्यान्वित हुए । उन्होंने मुँह से कुछ न कह कर उसी समय गङ्गाजल में दूध मिलाकर प्रस्तुत पूजा कर्म में मनोयोग दिया, देवताओं की पूजा समाप्त होने में प्रायः दस बज गये । उस समय ब्रह्मचारी गण यज्ञ कुण्ड के चारों ओर बैठ कर सावित्री मन्त्रों से आहुति देने लगे । उनके अतिरिक्त हम भी कई महिलाएँ जिन्होंने शास्त्रीय विधि के अनुसार यज्ञोपवीत धारण किया है–जैसे उदास ब्रह्मचारिणी, निरुपमा (आचार्य सहधर्मिणी) एवं मैं–उनके साथ सम्मिलित थीं–हम लोगों ने भी यज्ञ में आहुतियाँ दी थीं । उसके बाद ही पूर्णाहुति का आयोजन होने लगा । घृत और चन्दन काष्ठ के संयोग से यज्ञाग्नि धड़ धड़ करके भड़क उठी । माँ के निर्देशानुसार ब्रह्मचारियों ने एक बनारसी साड़ी से यज्ञकुण्ड को चारों ओर से घेर रखा था । मानों इस प्रकार यज्ञकुण्ड स्थित गायत्री देवी को साड़ी पहनाई गई थी एवं साथ ही साथ पलक भर में अग्निदेव ने उसे अदृश्य कर डाला । उक्त साड़ी परलोकगत सोलन की रानी साहिबा ने माँ को बहुत दिन पहले दी थी । उसके पश्चात् एक नारियल को घी से भर कर, चाँदी के तबक से मढ़कर लाल वस्त्र से आच्छादित कर तथा स्रुवा के बीच में बैठाकर वेदमन्त्रोच्चारणपूर्वक उससे पूर्णाहुति दी गई तदुपरान्त स्वर्ण की जिह्वा वाले स्रुक् से अग्नि में घृतधारा देना आरम्भ हुआ । लगभग १६ सेर घी से उक्त धारा दी गई थी । एक तो यों ही अग्निदेव कुण्ड में धड़-धड़ करके धधक रहे थे ऊपर से घृत धारा पाकर उन्होंने सैकड़ो ज्वालाओं में बड़े वेग के साथ ऊपर की ओर दौड़कर महाध्वज-दण्ड के मूल का स्पर्श कर लिया । वहाँ पर जो पुष्प मालाएँ, चँदवे के सामान लगी थीं वे तत्क्षण भस्म हो गईं । यज्ञशाला के ऊपर जो काठ का छाजन था उसमें घी अग्नि का सम्पर्क होने लगा । आचार्य जी ने तुरन्त पिचकारी मार कर वहाँ अग्नि नहीं लगने दी ।

इस प्रकार दीर्घकालीन महायज्ञ की पूर्णाहुति सम्पन्न हुई । पूर्णाहुति देकर आचार्य जी श्री माँ के चरणों में साष्टाङ्ग प्रणाम कर बोले, "माँ, आज आपने पुत्र की लाज रख दी । पूर्णाहुति के समय कभी-कभी अग्निकांड हो जाने की आंशका रहती है यह मुझे ज्ञात था । उसके प्रतिकार के लिए शास्त्रीय विधान के अनुसार गङ्गाजल में दूध मिला कर रख छोड़ना आवश्यक था, किन्तु विस्मृतिवश मैंने उसकी व्यवस्था पहले से नहीं की । यह व्यवस्था आपने ही की, एवं इसीलिए आज एक विषम संकट से हम लोगों का त्राण हुआ । यदि आप ऐसा न करतीं तो जो विपत्ति आती उसका वर्णन नहीं हो सकता । इसके अतिरिक्त कल प्रातःकाल जब दान की वस्तुएँ यज्ञशाला में लाई गईं तब आपने ही बतला कर सब वस्तुओं को यज्ञशाला में उत्तर द्वार से रखवाया था । यही शास्त्र की विधि है, यह कहना व्यर्थ है । जब जो निर्देश आपके श्रीमुख से निकले मैंने उस सभी को

शास्त्रानुसार पाया । विस्मृतिवश यज्ञ के सम्बन्ध में किसी साधारण अंश का मेरे द्वारा परित्याग होने की सम्भावना देख कर सदा जागरूक रहने वाली आपने उसे तुरन्त पूर्ण कर दिया । इसलिए मैं सोचता हूँ कि जो मैं इस यज्ञ के आचार्यपद का अधिकारी हुआ यह मेरा परम सौभाग्य है । आज तक मैंने कई यज्ञ कराये हैं किन्तु यह सब होते हुए भी कुछ भी नमक मिर्च मिलाये बिना मैं यह कह सकता हूँ कि इस तरह का दूसरा यज्ञ न भूतो न भविष्यति ।" आचार्य का अपने आप निकला हुआ यह आत्म-निवेदन का उद्‌गार सुन कर माँ ने मुस्करा कर स्नेहभरी दृष्टि से उन पर अमृतवृष्टि की ।

पूर्णाहुति के बाद श्री माँ के आदेशानुसार एक कुमारी को सोने और चाँदी के आभूषणों से विभूषित कर रेशमी वस्त्रों तथा पुष्प माला से सजा कर यज्ञशाला में लाया गया एवं वहाँ पर शय्या और बर्तन देकर उसकी षोडशोपचार से पूजा की गई । उसके पश्चात् गायत्री देवी को दाल, साग आदि उपकरणों के साथ सवा मन चावल का अन्न भोग लगाया गय. एवं वह भोग चाँदी के थालों और कटोरों में सजा दिया गया ।

मैं एक और घटना का उल्लेख कर इस महायज्ञ के विवरण को समाप्त करना चाहती हूँ.। पूर्णाहूति के समय जब अग्नि देव लपलपाते हुए ज्वालाओं का विस्तार कर ऊपर की ओर दौड़े थे तभी श्री माँ के आदेश से उस ज्वाला से नई अग्नि लेकर रख ली गई एवं उसी दिन वह आश्रम स्थित हवन-मन्दिर में हवन-कुण्ड में विधिपूर्वक स्थापित की गई । सावित्री यज्ञ के २३ वर्ष पहले से ही जिस प्रकार अग्नि देव नित्य हवन द्वारा सत्कृत होते आ रहे थे उसी प्रकार इस महायज्ञ की समाप्ति के बाद भी उनकी नित्य होम द्वारा सेवा की व्यवस्था हुई है । यह सब कुछ माँ के आदेशानुसार हुआ है । न जाने यह सब किस उद्देश्य से किया जा रहा है?

महायज्ञ के बाद नगरकीर्तन की व्यवस्था है । इसलिए पूर्णाहुति के दूसरे दिन श्री माँ को लेकर भक्तजन नगर-कीर्तन के लिए निकले । माँ को एक बड़ी घोड़ा गाड़ी में बैठाया गया । माँ के साथ थे स्वामी शरणानन्द, स्वामी परमानन्द, भाई गोपालजी, नानी जी, भाई श्री बटुकजी एवं भाई श्री नेपालजी । साथ में और भी दो तीन गाड़ियाँ थीं । उनमें अन्यान्य साधु बैठे थे । हरिबाबा गाड़ी में न बैठ कर माँ के अन्यान्य भक्तों के साथ पैदल ही कीर्तन करते-करते गये थे । हरिबाबा के भक्तों ने भी उन्हीं का अनुसरण किया था । सब भक्तों की संख्या लगभग एक हजार से अधिक थी । पुरुषों के समान ही बङ्गाली, हिन्दुस्तानी, गुजराती आदि संभ्रान्त घरों की लड़कियाँ रास्ते में कीर्तन करते-करते गई थीं । कीर्तनकारियों की यह बड़ी भीड़ पहले दशाश्वमेध घाट पहुँची थी । फिर वहाँ से रामापुरा, कमच्छा होकर लौट आई थी । लगभग तीन घण्टे तक सब लोग कीर्तन कर माँ को शहर घुमा लाये थे । माँ जिस समय आश्रम में लौटी, उस समय उनका मस्तक छोटी छोटी फूल की पँखुरियों से इस प्रकार ढका हुआ था कि देखने से मालूम पड़ता था कि मानो माँ रंगीन ओढ़नी ओढ़ कर बैठी हों । इस प्रकार सावित्री यज्ञ की समाप्ति हुई थी ।

एक शारदीय अर्द्धरात्रि में भाव विह्वल नरनारियों के सामने जिन्होंने अग्निरूप में अपने को प्रकट किया था, जिन्होंने तेईस वर्षों से हम लोगों की दीनता और अक्षमता की उपेक्षा कर हम लोगों की सदोष और त्रुटिपूर्ण सेवा स्वीकार अन्त में हमारे द्वारा ही इस यज्ञ की पूर्णाहुति कराई, उन्हीं असीम शक्तिसम्पन्न, अनन्त महिमाशाली, सकल करुणा निधान यज्ञेश्वर को हम बार-बार

प्रणाम करते हैं एवं हाथ जोड़ कर उनसे प्रार्थना करते हैं– "हे यज्ञेश्वर, हे देवेश, हे जगन्निवास, आप इस दानव-पीड़ित वसुधा का उद्धार कीजिये । सारे विश्व में आज दम्भमान मदान्वित महा असुरों के हूंकार से आज सब काँप रहे हैं । चरम सीमा में पहुँची हुई अर्थ-लिप्सा आज जगत् को निगल चुकी है । चारों ओर सुलग रही विद्वेषवह्नि जीव-जीव के अन्तःकरण को जला कर महाप्रलय की सूचना दे रही है । मानव-समाज आज सम्पत्ति से परिभ्रष्ट है, । दीनता के भीषण भार से सब लोग आज शुष्ककण्ठ और रुद्धश्वास होकर इधर-उधर भटक रहे हैं । हे दीनवत्सल, इनके तृषित तापित वक्षःस्थल में आपके सिवा और कौन शान्तिरूपी जल की वृष्टि करेगा? इस जले हुए ऊसर खेत को आपके बिना कौन शस्यश्यामल करेगा? इसीलिए हम पुनः पुनः प्रार्थना कर रहे हैं, आपका पाञ्चजन्य फिर बज उठे । उसके वज्र के समान गंभीर निर्घोष से जगत् का जो अमङ्गल है, जो दुःख-दारिद्र्य है- वह दूर भाग जाय । हम सब समष्टि एवं व्यष्टि रूप से यही प्रार्थना करते हैं–

हरे मुरारे मधुकैटभारे गोपाल गोविन्द मुकुन्द शौरे ।
यज्ञेश नरायण कृष्ण विष्णो निराश्रयं मां जगदीश रक्ष ॥

●

"तुम जिस समय जो काम करो उसे सेवा की भावना से ही करो । याद रखो, यज्ञेश्वर ने ही नाना प्रकारों से सेवा-ग्रहण करने की व्यवस्था की है । सब रूपों में एक-मात्र वे ही तो हैं । तुम उनके सेवकमात्र हो । इसलिये तुम लोगों में जिस प्रकार आलस्य, शिथिलता अथवा क्रोध का भाव न झलके, उस ओर सदा लक्ष्य रखो । सदा संयमी होकर रहने की चेष्टा करो, एवं सदा इस भावना को मन में जागरूक रखो कि यज्ञेश्वर ने कृपा कर हमें इस सेवा का व्रती बनाया है तथा इस सेवा में अधिकार दिया है । यज्ञेश्वर से ऐसी प्रार्थना करो कि वे तुम्हारी सेवा को निर्दोष रूप से परिपूर्ण करें । ध्यान रखो, निर्दोष रूप से सेवा होने पर सब (अर्थात् नानात्व) निवृत हो जाता है । इसीलिये सेवा में आनन्द प्रकट करने की आवश्यकता है ।"

—श्री श्री माँ आनन्दमयी

ध्यान क्या है ?

– श्री टी. के. घाई

अपने हिन्दु धर्म की साधना में ध्यान की अनेक प्रणालियाँ युगों से चली आयी हैं । पर एक बात ध्यान रखनी है कि ध्यांन एक व्यक्तिगत प्रक्रिया है । प्रभु की अनुभूति. करने का और उसको पाने का ध्यान एक साधन है । ध्यान साध्य नहीं है । अक्सर नया साधक, ध्यान में होने वाले आनन्दमय अनुभवों में अटक जाता है । इस समय उसे किसी सद्‌गुरु का आधार लेना अत्यन्त आवश्यक हो जाता है । ऐसा न करने से साधक स्वयं ही अपनी आध्यात्मिक यात्रा को रोक देता है ।

पहले तो यह समझना जरुरी है कि ध्यान किया नहीं जाता है हो जाता है । यह जो अपने आप हो जाता है वह सहज ध्यान है । यह सहज ध्यान कितने मिनट या घण्टों का है, यह महत्वपूर्ण नहीं है । उससे निकला हुआ परिणाम कैसा है और उसका जीवन पर क्या प्रभाव पड़ता है वो देखना है । शुरु में तो साधक को स्थिर बैठ कर ध्यान करना पड़ता है । बाद में अभ्यास होने पर अपने आप ध्यान हो जाता है । यह अन्तरमन की अन्तरमुख होने तक की यात्रा है । इस यात्रा में स्वयं साधक और उसके प्रिय ईष्ट / परमात्मा और प्रभु हैं । इसके सिवा तीसरा कोई नहीं है । इस अन्तरयात्रा में सद्‌गुरु अत्यन्त सहायक बनते है । देखें किस प्रकार – सद्‌गुरु ध्यान का पथ साधक को दिखाते हैं, उस रास्ते पर अपनी साधना का अमूल्य तेज बिखेरते हैं । दुर्गम रास्ते को सुगम बनाते हैं । साधक को नित्य / उस रास्ते पर चलने की प्रेरणा देते हैं । जब साधक उस रास्ते पर थोड़ा-थोड़ा चलना सीख जाता है तब गुरु उसे ज्ञान और भक्ति का प्रकाश करते हैं । बगैर भाव का ज्ञान अधूरा है शुष्क है । अब साधक को अपनी यात्रा अकेले ही तय करनी है । हाँ संकट के समय सद्‌गुरु की सहायता हमेशा उपलब्ध रहेगी, यह हमेशा याद रखना । अब प्रभु प्राप्ति के लिये साधना में आगे बढ़ने के लिये साधक को क्या करना चाहिये ? उसे अपने सद्‌गुरु का सतत् स्मरण करके, प्रार्थना करके, अपनी अन्तरयात्रा शुरु करनी चाहिये, तभी साधक अपने गन्तव्य स्थान पर निर्विघ्न पहुँच सकता है । सद्‌गुरु परमात्मा तक का एक रास्ता दिखाता है, पर साधक को स्वयं ही उस पर चलना है और नियमित चलना है । ध्यान में नियमितता और निश्चित समय बहुत जरुरी है । डुबकी लगे या नहीं, गुरु में आनन्द मिले या नहीं, बस लगे ही रहना है । श्री श्री आनन्दमयी माँ हमेशा ध्यान पर जोर देती थीं । वह कहती थीं, कि ईश्वंर चिन्तन और ध्यान से ईश्वर की शक्ति मनुष्य में आती है । बिना ध्यान के ईश्वर का साक्षात्कार नहीं होता है । योग्य अभ्यास से सहज ध्यान होता है ।

●

आनन्दमयी – स्मृति

(मूल बंगला से अनूदित)

– चित्रा घोष

३० अगस्त, शुक्रवार, १९६३, वृन्दावन, स्थानीय गोविन्द मन्दिर के पुजारी माँ के दर्शनों को आये हैं । माँ ने अचानक कहा, "अच्छा पिताजी पहली बार यह शरीर जब गोविन्द दर्शन के लिये जयपुर गया था तब इस शरीर ने गोविन्द को राधारानी के साथ नहीं देखा था । अकेले गोविन्द माटी पर खड़े थे । कोई सिंहासन नहीं, राजवेश नहीं, थोड़ी सी वेश भूषा । पुजारी ने सुनकर कहा, "माताजी, आपने जैसे देखा था । गोविन्द को पहले वैसे ही रखा गया था । यहाँ से गोविन्दजी को लेकर जयपुर जाते समय नाना स्थानों पर रुकते-रुकते ले जाया गया था । जयपुर पहुँचने पर भी गोविन्द जी को एक छोटे से कमरे में रखा गया था । सिंहासन नहीं था, माटी पर ही खड़े थे कुछ दिनों तक । उपस्थित जहाँ हैं, वह भी मन्दिर नहीं है । राजा के "विलास भवन" नामक महल में थे । पहले राधा रानी भी नहीं थी । तीन सौ साल पहले जैसे थे आपने उसी प्रकार दर्शन किया है । राधारानी की प्रतिष्ठा अभी सौ वर्ष पूर्व हुई है ।

माँ के बाये हाथ के पीछे एक गाँठ जैसे हुई थी । कुछ दिनों से माँ लेटे लेटे ख्याल कर रही थीं यह फिर क्या हुआ । डाक्टर देखने से ही काटने को कहेंगे । उस गाँठ पर हाथ फेरकर लेटी उठकर देखती हैं वह न जाने कहाँ चली गयी । आज दोपहर को इस प्रसंग को माँ हँसते हुए सुना रही थीं ।

१-९-६३ आज प्रातः सुविमलदत्त के साथ चर्चा चल रही थी । ढाका में भोलानाथ जी के बहनोई माँ को असीम श्रद्धा करते थे । उन्होंने एक बार माँ से कहा, "अच्छा कहिये, जब आपके साथ बात करता हूँ, आप कहाँ जाती है? शरीर में तो आप नहीं रहती हैं ।" माँ की उर्ध्वदृष्टि देखकर उन्होंने यह बात कही थी । माँ ने इस प्रसंगमें कहा था, "मन्दिर के शिखर को देखने से उर्ध्वदृष्टि करनी पड़ती है । शिखर देखने से मन्दिर की बात याद आती है । मन्दिर की दीवालों पर कितने पक्षी, कीड़े, मकोड़ों की विष्ठा लगी रहती है, पर वह तो मन्दिर के विग्रह की पवित्रता नष्ट नहीं कर सकती, नाम से चित्त शुद्धि होती है । देह मन्दिर में भगवान् सदा सर्वदा विराजमान हैं । नाम जप के द्वारा उस मन्दिर की पवित्रता की रक्षा होती है । बहिर्मुखी विक्षेप अर्थात् मन्दिर के दीवालों की विष्ठा । वह अन्तर की पवित्रता को नष्ट नहीं कर सकती । जब तक हो सके तुम नाम में तन्मय होकर रहो । समाधि भी तो एक स्थिति है । चढ़ना-उतरना-इसके पार जाना होगा ।

काशी में मृत्यु । अरेन्डी (रेड़ी) के पत्ते की आकार का काशीक्षेत्र है । उसके अन्तर्गत जो जगह आती हैं काशी में वहीं पर मरने पर पुनर्जन्म नहीं होता । उसके बाहर होने पर कहा नहीं जाता । दाहिने कान में महादेव तारकब्रह्म नाम सुनाते हैं । दाहिना कान दबाकर सोने पर भी इस स्थान के

अन्तर्गत जिनकी मृत्यु होती है उनका दाहिना कान टक् से ऊपर उठ जाता है । तुमलोगों के काशी आश्रम में तीन दृष्टान्त हैं । (१) कालाचाँद की माता, (२) तुरीयानन्द (३) बछड़ा (इन तीनों के मृत्यु के समय दाहिना कान ऊपर की ओर उठा देखा गया था,) गोपी बाबू कहते हैं माँ का आश्रम अरेण्डी के पत्र के अन्तर्गत आया है ।

माँ ने तीन दिन मेरे हाथों का बना Stew खाया । रमा (स्व मनमोहन घोष की पुत्री) ने सूजी का मालपुआ बनाया था । उसके साथ माँ ने स्ट्यू खाया । पपीता, टिन्डा, लौकी, आलू, परवल, मिलाकर हींग व पोस्तदाना पीसकर डाला था । माँ ने कहा– "तुम इतना अच्छा स्ट्यू बनाती हो यह पहले क्यों नहीं बताया ।" सुविमल दत्त के लिये बनाने को कहा और साथ यह भी कहा, "मैं भी खाऊँगी करो ।" अपने हाथों से बनाकर माँ को खिलाने का मेरे छः साल के आश्रम जीवन का पहला अवसर है ।

२३ फरवरी १९६५, स्थान राजगीर ।

आज प्रातः मैं एवं विरजानन्द जी महाराज माँ के कमरे में थे ।

माँ – काल रात देख रही थी । कौन राजा थे बुद्धदेव के समय?

हमने कहा – "बिम्बि सार । माँ ने कहा, देख रही थी यह शरीर खड़ा है । सामने एक बड़ा सा बाघ । जंगल जंगल जगह है । वहाँ थोड़ी दूर पर राजा बिम्बिसार ने उस बाघ को मारने के लिए गोली या वाण से लक्ष्य किया । वे इस शरीर को (माँ को) नहीं देख रहे हैं । वे देख रहे हैं बुद्ध देव, बाघ कोई हानि नहीं पहुँचा सकता है । वे उस ओर लक्ष्य कर बाघ को मारने के लिए तीर चलाने का प्रयास कर रहे हैं ।" हमलोगों ने जिज्ञासा की आपको नहीं देख रहे हैं तो क्या देख रहे हैं । माँ – वे देख रहे हैं बुद्ध देव , राजा बिम्बिसार कितनी सुन्दर बड़ी-बड़ी आँखें ।"

माँ आगे और कह रही हैं – "देख रही हूँ जैनों को ।" विरजानन्दजी – "हाँ माँ, जैन भी यहाँ थे ।" माँ ने पूछा– जैनों के गुरु कौन थे ? मैंने कहा– "महावीर" माँ – "जैन लोग न जाने कौन सा एक अनुष्ठान करेंगे इसलिये बहुत स्त्री पुरुष एकत्रित हुए हैं । पर वे लोग भी इस शरीर को "महावीर" देख रहे हैं ।" विरजानन्द – "माँ आप ही तो वहाँ खड़ी हैं ।" माँ ने कहा– "उनके पास 'बाटू' वहाँ की क्रिया में योगदान कर रहा है । अनेक फूलों से सजाया गया है ।" हमने पूछा– "माँ बाटू वहाँ क्यों हैं ? माँ ने कहा– "इस शरीर के सामने जो क्रियादि होती है बाटु ही तो प्रधान रहता है, क्रिया योग बाटु ही सब करता है ।

हमलोग – "तब क्या बुद्ध महावीर रूप में माँ– ही । माँ ने जवाब नहीं दिया । खिड़की से देखते हुए माँ ने कहा,– "यह जो जगह यह सब ही बुद्ध जैन एक ही थे, अब देखो यहाँ शिव मन्दिर हुआ ।

●

गुजरात की यादें

– ब्र. गुणीता

द्वारकाधीश के दर्शनों के लिये हम हाथ जोड़ कर खड़े थे ठसाठस भीड़ थी । आरती का समय हो रहा था । थोड़ी देर में पट खुले द्वारकाधीश के जयगान से मंदिर गूँज उठा, झाँझ, मृदंग, करताल, घड़ियाल घंटा ध्वनि की झंकार से हृद्‌तंत्रियाँ झंकृत हो उठी । दीपक के आलोक से द्वारकानाथ का मनोहर श्यामल सुहास्यमय मुख मण्डल झलमला उठा । ठाकुर जी फूलों का वेश धारण किये हुये थे । विश्वब्रहाण्ड के शरणदाता के कोमल-कोमल श्यामल चरण कमलों पर दृष्टि पड़ी, अहा, कितने मनोहारी थे वे चरण । आखिर अपनी ही कृपा से अपने नयनाभिराम विग्रह का दर्शन करा ही दिया भुवनेश्वर वृन्दावन बिहारी ने । धन्य है वे जन जिन्हें नित्य प्रति यह मधुर दर्शनों का अवसर प्राप्त होता है ।

समय के अधीन रहने वाले हम जगतिक जीवों के लिये समय श्रृंखला स्वीकरणीय है । रात्रि के आठ बज चुके थे । हम यात्री थे । विश्राम गृह की हमें आवश्यकता थी ।

मंदिर प्रांगण से बाहर आकर हम विश्राम गृह की ओर रवाना हुये । अंधकार का साम्राज्य था । हम एक प्रायः नवनिर्मित गायत्री मंदिर के प्रांगण में पहुँचे । एकान्त में द्वारका के आखिरी छोड़ पर यह स्थान था । सामने अथाह जलराशि के गर्जन की ध्वनि आ रही थी । मंदिर के पीछे ही थोड़ी दूर पर सामुद्री जहाजों को दिग्दर्शन कराता हुआ लाईट पोस्ट था । जिसकी बत्ती घूम-घूम कर दिशा निर्देश कर रही थी । हम यद्यपि परिश्रान्त थे पर सामुद्री हवा से हमारी क्लान्ति दूर हो गयी सामान्य जलपान लेकर हम द्वारकाधीश को नमन कर निद्रा देवी की आराधना में रत हुये ।

२५ अप्रैल १९९९

ब्रह्ममुहूर्त में शय्यात्याग कर हम सारी तैयारी पूरी कर चुके थे । आज हमें लम्बी यात्रा पर जाना था । दरवाजा खोलकर बाहर आये, अभी अँधेरा नहीं छटा था । आकाश में तारे टिमटिमा रहे थे । गायत्री मंदिर प्रांगण में हमने सन्ध्या वन्दन किया । धीरे-धीरे आसमान साफ होने लगा । सागर की नील जलराशि का आभास होने लगा । मंदिर के बरामदे से पूर्व की ओर देखने पर एक स्वप्नपुरी की भाँति द्वारका नगरी दृष्टिगोचर हो रही थी जिसका गगन चुम्बीशिखर चारों दिशाओं में अपनी कीर्ति पताका फहराते हुये विश्वमानवता का आह्वान कर रहा था । इस प्रपंचमयी सृष्टि रहस्य का मानों उद्‌घाटन कर रहा था कि माया के चादर ओढ़े जीव भलीभाँति देख लो मायापति भगवान् श्रीकृष्ण चन्द्र को भी प्रपञ्चमय जगत् में कोई आपदाओं से रहित स्थान न मिला, आखिर समुद्र के मध्य उन्हें अपनी द्वारका नगरी बसानी पड़ी और युगों से द्वारकानाथ अपने एकान्त श्रीचरणों में अखण्डआनन्द का संदेश देने के लिये मानवमात्र का निरन्तर आह्वान करते आ रहे हैं । श्री श्री माँ की वाणी, "एकान्त न होने पर श्री कान्त को पाया नहीं जाता ।" साकार हो उठती है । हमने आस-पास सागर तट के कुछ चित्र लिये ।

छः बज चुके थे । हम मन्दिर की ओर रवाना हुये । प्रातः की माखन भोग की आरती में हम सम्मिलित हुये ।

प्रायः आठ बजे हम बेट द्वारका की ओर रवाना हुए । बेट द्वारका समुद्र के भीतर द्वीप के समान है । यहाँ जाने के लिये द्वारका पुरी से तीस चालीस किलोमीटर पर बन्दरगाह है जहाँ से जलयान द्वारा बेट द्वारका आना पड़ता है । हमलोग बन्दरगाह पहुँचे एक-एक बड़ी नाव जिनमें मोटर लगी थी यात्रियों को पारापार करा रही थी । एक नाव में करीब सौ से अधिक यात्री आ सकते हैं । यात्रियों के अलावा बेट द्वारका में रहने वाले तथा वहाँ व्यापार करने वाले व्यक्ति भी रहते हैं । बेट द्वारका में मुसलमानों की संख्या भी काफी है । हमारे बन्दरगाह पहुँचते ही एक नाव जाने की तैयारी में थी, हम लोग शीघ्रातिशीघ्र नाव पर सवार हुये । यात्रियों से भर जाने पर नाव रवाना हुई, हम सामुद्री यात्रा का आनन्द ले रहे थे । आधे घन्टे में बेट द्वारका के तट पर नाव पहुँच गयी । नाव से उतर कर हम बेट द्वारका की पवित्र भूमि पर खड़े थे ।

बेट द्वारका के सम्बन्ध में कहा जाता है कि यही असली द्वारकापुरी थी । समुद्रगर्भ में समा गयी थी । पुनः समुद्रगर्भ से इसका उद्धार हुआ है । हमने नगरी में प्रवेश किया । यह नगरी प्राचीनता का प्रमाण दे रही थी यह निःसन्देह है । गलियारों से होते हुये हम आगे बढ़े । द्वारकाधीश के प्राचीन मंदिर के सामने हम खड़े थे । मंदिर प्रवेश द्वार के बाहर एक प्राचीन पीपल वृक्ष के नीचे विश्वेश्वर बाबा विश्वनाथ का छोटा सा मन्दिर था । मन्दिर के भीतर कैमेरा आदि ले जाना वर्जित था । हमने मन्दिर में प्रवेश किया प्राचीन परम्परा स्पष्ट हो रही थी । खम्भे लगे हुए काले और सफेद संगमरमर का लम्बा प्रांगण था । जहाँ द्वाराकाधीश विराज मान थे । यहाँ की विशेषता यह थी कि ठाकुरजी को कोई भी बाहरी वस्तु अर्पित नहीं होती प्रांगण में एक अद्भुत गम्भीरता थी । सुदामा ने श्री भगवान् को जहाँ चावल भेट किये थे वहाँ पर द्वारकानाथ की गादी विराजमान है । हमने वहाँ प्रणाम किया । यहाँ पर भगवान् की पटरानी रुक्मणी, सत्यभामा आदि के अलग-अलग मंदिर भी हैं । यहीं पर श्री भगवान् रुक्मिणी के साथ विराजमान हैं । मंदिर प्रांगण के एक तरफ कुछ ब्राह्मण बालक वेदाध्ययन की शिक्षा ले रहे थे । सम्पूर्ण नगरी मंदिरों से भरी पड़ी है । अभी-अभी कुछ दिन पूर्व ही समुद्र के जल में एक नाव डूब गयी थी । उसमें यहाँ के काफी निवासी थे । उस उदासी की छाया ने हमें भी स्पर्श किया । घन्टे भर में मंदिर का दर्शन कर हम वापस नौका घाट पर आये । नाव जाने की तैयारी में थी । हमलोग शीघ्रता से नाव पर सवार होकर वापस लौट आये ।

हमारा गन्तव्य स्थान था पोरबन्दर, आज ही हमें गोंडल पहुँचना था । बन्दरगाह पर हमारी गाड़ी प्रतीक्षा में खड़ी थी हम रवाना हुए । मार्ग में हमने मूल द्वारका में द्वारकाधीश का दर्शन किया । मूल का अर्थ है पहला । द्वारका पधारते समय श्री भगवान् ने पहला पड़ाव यहीं डाला था । अतः यह स्थान मूल द्वारका नामसे प्रसिद्ध है । यहाँ प्राचीन मन्दिर है जिसका जीर्णोद्धार श्री नानजी भाई कालिदास मेहता द्वारा किया गया है । मार्ग में हम सुदामापुरी में रुके । द्वारकानाथ के दर्शन कर भक्त सुदामा जब लौटे तो उन्हें अपनी टूटी-फूटी कुटिया के स्थान पर दिव्य महलों वाली एक

द्वारकाधीश के मन्दिर का दृश्य
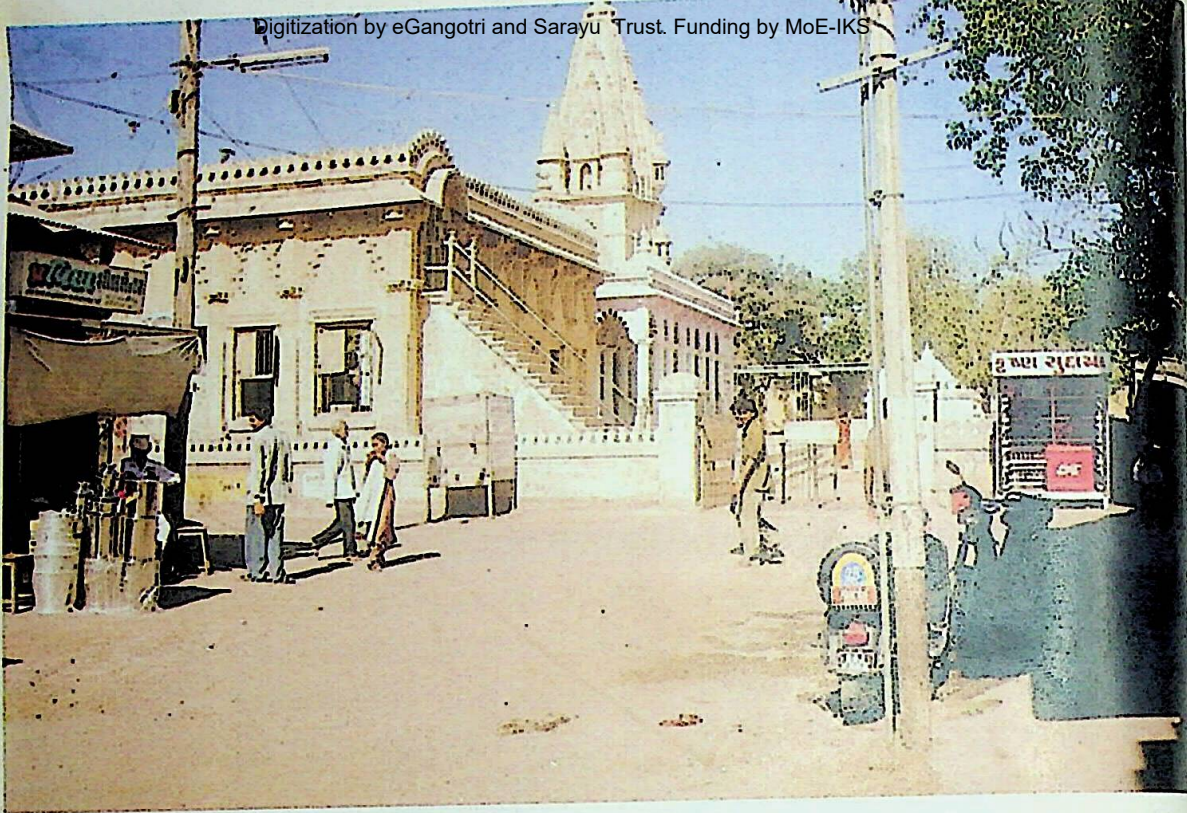
सुदामापुरी
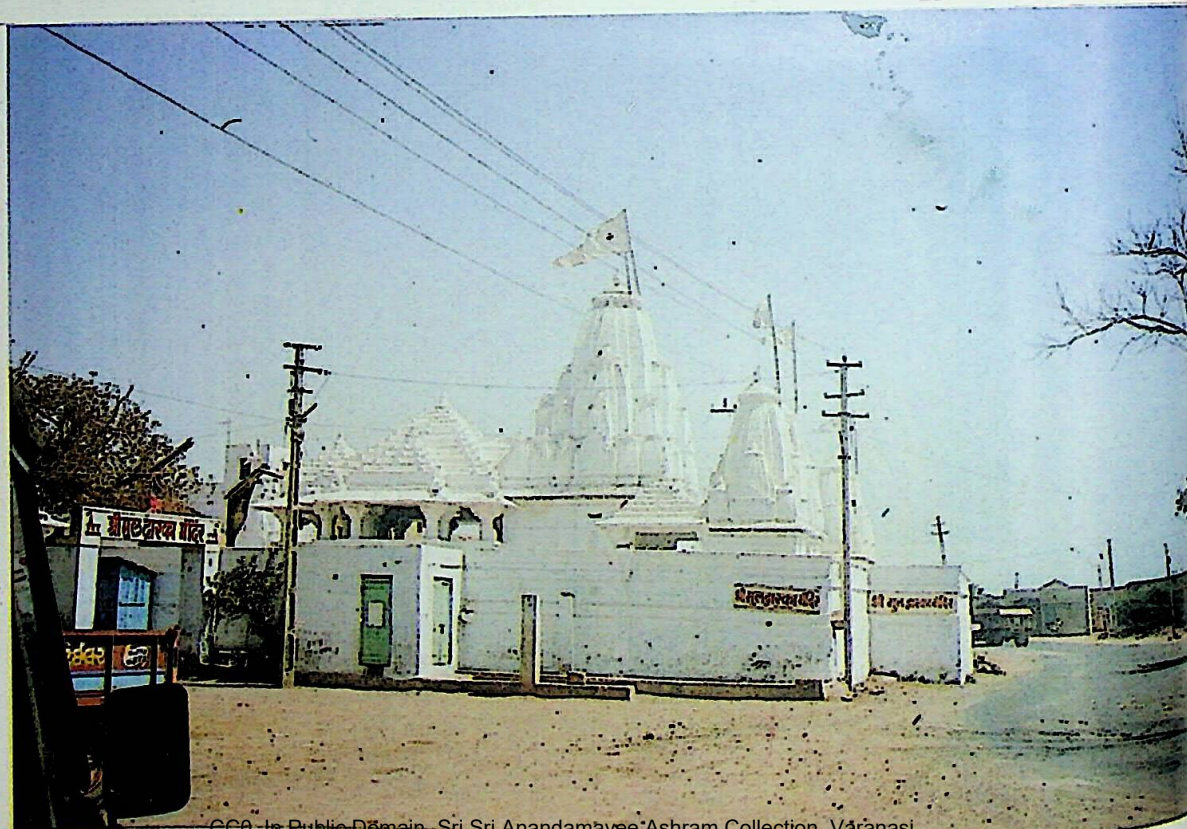
दिव्य नगरी देखने को मिली । यही वह सुदामापुरी है जहाँ दिव्य मन्दिर स्थान की शोभावर्द्धन कर रहे हैं ।

यहाँ पर बाजार भी है । हमने यहाँ से कुछ बरतन खरीदे । हमें यह स्थान बहुत ही अच्छा लगा । लगता है वही प्राचीन परम्परा अभी तक चली आ रही है । यहा के भोले भाले पुजारी भी बहुत भले लगे । यहाँ हमें कच्चा पोआ (चिउड़ा) प्रंसाद में मिला । थोड़ी देर घूम फ़िर कर हम आगे बढ़े ।

दोपहर के प्राय दो बजे के उपरान्त हम पोरबन्दर पहुँचे जहां पर एक निर्दिष्ट चौराहे पर श्री नटुभाई हमारी प्रतीक्षा कर रहे थे । नटु भाई मोटर साईकल पर आगे आगे मार्गं निदर्शन करते हुये हमें अपने घर पर ले गये । हम द्वारका जाते समय भी अल्प समय के लिये यहाँ रुके थे, उसी समय उन्होंने कहा था कि लौटते समय कुछ देर के लिये हम अवश्य ही वहाँ रुके एवं दोपहर का प्रसाद वहीं लें । श्री नटुभाई की धर्मपरायणा सहधर्मिणी ने द्वार पर स्वागत करके घर में प्रवेश कराया । पूजागृह में श्री श्री माँ के आसन के सामने हम बैठे । आपलोगों ने आश्रम के नियमानुसार बड़ी श्रद्धा और प्रेम से जलपान की व्यवस्था की थी । हमलोगों को आसन बिछा कर नये बरतनों में अपने हाथों द्वारा बनायी सामग्री परोसी । माँ का प्रसाद हमने आनन्द से स्वीकार किया । माँ की महिमा को स्मरण करके हमारे नेत्र भर आये माँ कहाँ कहाँ नहीं विराज मान हैं, आज भारत के इस पश्चिम छोड़ में श्री नटु भाई के सामान्य गृह में श्री श्री माँ की यादें भरपूर है, श्री नटुभाई अपनी धर्मपत्नी सहित श्री श्री माँ का स्मरण करते हुये आनन्दसे विभोर हो रहे हैं । श्री माँ जय माँ जय जय माँ ।

करीब तीन बजे हम रवाना हुये । श्री नटु भाई के आग्रह से हम रानाभाव में" श्री श्री माँ के नाम पर निर्मित आश्रम का दर्शन करते हुये जायेंगे । श्री नटु भाई भी हमारे साथ चले । रानाभाव की कथा ऐसी है । आश्रम के साधु समिति के वर्तमान अध्यक्ष वयोवृद्ध स्वामी श्री विरजानन्द जी महाराज ने बहुत वर्ष पूर्व काफी समय तक यहाँ पर एकान्त में साधना की थी । यह एक छोटा सा गाँव है, शान्त सुरम्य परिवेश है । श्री विरजानन्दजी के त्याग, वैराग्य, एकनिष्ठ साधना एवं सुललित मातृ प्रसंग से यहाँ को भक्ति प्राण सरल लोग अत्यन्त प्रभावित हुये । उन्होंने महाराज जी से आश्रम बनाने का आग्रह किया । आखिर श्री श्री माँ की कृपा से स्थानीय लोगों ने आश्रम के निमित्त भूमि लेकर कार्य प्रारम्भ किया । उनका उद्देश्य था स्थानीय लोगों के सत्संग का एक स्थान हो जहाँ श्री श्री माँ कभी पधारे, एवम् स्वामीजी महाराज भी आकर रहें, भगवदिच्छा से कार्य सम्पूर्ण हुआ । श्री श्री माँ उस समय पूना में थीं । श्री नटु भाई आदि ने श्री श्री माँ से पधारने का आग्रह किया । श्री श्री माँ ने उन्हें आश्वासन देकर भेज दिया यह शरीर वहाँ रहेगा ! श्री श्री माँ का आशीर्वाद प्राप्त कर आनन्द से मग्न भक्त जनों ने आश्रम उद्घाटन की तिथि निश्चित कर धूम-धाम से तैयारी की । एक बड़ी सी नाव बनायी . जिस पर माँ का चित्र रखकर कीर्तन करते-करते शोभा यात्रा निकाली इस प्रकार इन्होंने आश्रम में माँ को प्रवेश कराया । श्री श्री माँ की शारीरिक उपस्थिति इस समय पूना आश्रम में थी । श्री श्री ने सत्संग में कहा, बिना पानी के नाव

में शरीर को ले जा रहे हैं ।" साधारण दृष्टि से रानाभाव से यह संवाद पाना असम्भव है । पर भक्तों के पास तो माँ सर्वदा विराजमान हैं । बम्बई के स्वनाम धन्य चिकित्सक एवं श्री श्री माँ के अनन्य भक्त डा. सामानी जी के उत्साह एवं सहयोग से यहाँ एक राम मंदिर का निर्माण अभी-अभी हुआ है । एक बड़ा हाल है । जहाँ सिंहासन पर श्री श्री माँ का चित्र विराजमान है । हम थोड़ी देर वहाँ बैठे ।

श्री नटु भाई हमें आश्रम परिसर दीखाने ले गये । बाग बगीचों से भरा स्थान है बीच-बीच में एकान्त में श्रीकान्त के स्मरण का आनन्द लेने के लिये बैठने के लिये पक्के पीठासन भी बनाये हुये हैं । शाम का समय था । दो एक वृद्ध जनों को भी हमने यहाँ बैठे देखा । हमने उस कुटिया का भी दर्शन किया जहाँ श्री श्री माँ शारीरिक उपस्थिति में आकर दो एक दिन ठहरी थीं । सम्पूर्ण स्थान हमें अत्यन्त सुन्दर लगा । घूम फिर कर हम श्री राममन्दिर के साम्ने आये वहाँ हमने स्तव पाठ एवं श्री रामायण का पाठ किया पाँच बज चुके थे । उपस्थित भक्तजनों से विदा लेकर हम गोंडल की ओर रवाना हुए ।

रात्रि के प्रायः नौं बजे के बाद हम गोंडल के हवामहल में पहुँच गये । जहाँ पर श्रीमान् शिवराज सिंहजी, उनके कुमार द्वय हमारी प्रतीक्षा में थे । श्रीमती रानी साहिबा नीरू बेन एवं गौरी जी ने हमारे लिये पूरी व्यवस्था करके रखी थी । इतनी लम्बी यात्रा की थकान हमें नहीं लग रही थी श्री श्री माँ की दिव्य महिमा का पुनः पुनः स्मरण कर हम रोमांचित हो रहे थे ।

●

अखण्ड सावित्री महायज्ञ की अर्द्धशताब्दी का विवरण

अखण्ड सावित्री महायज्ञ की यह अर्द्धशताब्दी थी, इन पचास वर्षों से अग्निदेव अखण्ड भाव से उपस्थित रहकर प्रतिदिन साज्य आहुति स्वीकार कर रहे है। इस अवसर पर विशेष आयोजन का अनुष्ठित होना स्वाभाविक है।

९ जनवरी, २000 वाराणसी आश्रम प्रांगण के बीचों बीच अवस्थित यज्ञशाला को फूलों से सजाया गया था। उत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिम, चारों दरवाजों पर विशेष रूप से फूलों के तोरण द्वार बनाये गये थे। तथा प्रत्योक द्वार पर विधि अनुसार विशेष रंग के कारुकार्य किये गये तोरण लगाये गयें थे। यथा पूर्व द्वार "ऋग्वेद" का था। इसके तोरण का रंगपीला था जिस पर "ॐ इन्द्राय नमः" लिखा था। तथा तोरण के ऊपर पीतवर्ण ध्वजा शोभित हो रही थी। इसी प्रकार पश्चिम द्वार सामवेद का था इस पर श्वेतवर्ण का तोरण जिस पर "ॐ वरुणाय नमः" लिखा था तथा श्वेत ध्वज शोभित हो रहा था। उत्तर द्वार पर "अथर्ववेद" लिखा था तथा हरितवर्ण के तोरण पर "ॐ कुबेरायनमः" अंकित था। कंहना न होगा कि यह सब ध्वजा पताकायें कन्यापीठ की अध्यापिका तथा कन्याओं के सहयोग से निर्मित हुई थीं।

अनुष्ठान प्रारम्भ के पूर्व आश्रम के मन्दिरों में विशेष पूजा का आयोजन हुआ था। प्रातः काल आनन्द ज्योर्तिमन्दिर में श्री श्री माँ का षोड़शोपचार पूजन ब्रह्मचारिणी गीता बनर्जी द्वारा सम्पन्न किया गया। अन्नपूर्णा मन्दिर में श्री श्री अन्नपूर्णा पूजा अनुष्ठित हुई। शीतकाल की हवा चल रही थी। आज प्रायः एक सप्ताह बाद भगवान् भास्कर निर्मल आकाश को अपनी स्वर्णिम किरणों से आलोकित करते हुये प्रकट हुये थे। प्रातः के आठ बज चुके थे। यज्ञशाला के चारों ओर श्वेतचूर्ण से रंगोली बनायी गयी थी। आश्रम प्रांगण कर्मकाण्डी वैदिक ब्राहमणों द्वारा परिव्याप्त हुआ।

वैदिक पं. बालमुकुन्द मिश्र (आचार्य) वैदिक पं. विद्याधरजी शारद, वैदिक पं. श्रीप्रकाशचन्द्र मिश्र. (पं. बच्चा जी) वैदिक पं. श्री मदन पाण्डेय पं. श्री भोलानाथ भट्टाचार्य, तथा पं. श्री राकेश शास्त्री यज्ञानुष्ठान के लिये उपस्थित हुये। प्रातः नौ बजे चण्डीमण्डप में वेदमन्त्रों के उच्चारण द्वारा श्री श्री राजराजेश्वर नारायण शिला का पूजन सम्पन्न हुआ। तदुपरान्त वैदिक पूजन विधि द्वारा ५१ हजार आहुति का संकल्प लिया गया। संकल्प ग्रहण आश्रम की ओर से ब्रह्मचारिणीजया भट्टाचार्य द्वारा सम्पन्न किया गया। संकल्प ग्रहण के उपरान्त ब्रह्मचारिणी जया भट्टाचार्य एवं ब्रह्मचारिणी गीता बनर्जी द्वारा पण्डितों का वरण किया गया। संकल्प एवं वरण का कार्यक्रम समापन होने के उपरान्त नारायण शिला लेकर वेदमंत्रोच्चारण द्वारा ब्राह्मणों ने यज्ञशाला की तीन बार परिक्रमा कर श्रीनारायण को लेकर यज्ञ मण्डप में प्रवेश किया। जहाँ कलशस्थापना पूर्वक विविध देवी देवताओं के षोड़शोपचार पूजन के साथ ५१ हजार आहुति प्रारम्भ होनेवाली थी।

कन्यापीठ की ब्रह्मचारिणियों तथा उपस्थित भक्तजनों ने "हरे मुरारे मधुकैटभारे गोपाल गोविन्द मुकुन्द शौरे" पद का कीर्त्तन करते करते यज्ञशाला की परिक्रमा की। पूजन समाप्त एवं आहुति प्रारम्भ होते होते मध्यान्ह हो चुका था। आहुति प्रारम्भ होते ही "स्वाहा स्वाहा की ध्वनि से आश्रम प्रांगण मुखरित हो उठा। १०८ आहुति प्रदान करते-करते अपरान्ह वेला उपस्थित हो गयी, आज की आहुति यहीं सम्पन्न हुई। आहुति प्रदान के उपरान्त ब्राह्मणगणों ने कन्यापीठ में फलाहार ग्रहण किया। फलाहार कन्यापीठ की ब्रह्मचारिणी इन्दु ने श्रद्धा पूर्वक बनाया था।

सायं सन्ध्या के समय आलोक सज्जा से यज्ञशाला जगमगा उठी। पुष्पमालाओं, तोरण, ध्वजा, पताकाओं से सुसज्जित यज्ञशाला की अनुपम शोभा देखते ही बनती थी। १० ता. प्रातः गंगा पूजा का आयोजन किया गया था। पं. भोलानाथ भट्टाचार्य ने गंगा तट पर दुग्धादि से विधिवत् गंगा पूजन किया। आज सवत्स गौ पूजा की भी व्यवस्था थी। आंश्रम प्रांगण में सवत्सा गौ को वस्त्रादि से सुसज्जित कर अक्षत चन्दन फूल माला एवं फल, खीर आदि नैवेद्य से पूजन करने के पश्चात् आरति उतारी गयी। दस बजे से यज्ञशाला में ब्राह्मणों द्वारा आहुति देना प्रारम्भ हुआ। ५१ हजार आहुति देना था। सम्पूर्ण वातावरण स्वाहा स्वाहा ध्वनि से मुखरित हो उठा। कुछ भक्तगण सामने प्रांगण में जप करते नजर आ रहे थे तो कुछ यज्ञशाला की परिक्रमा कर रहे थे। कुछ गवाक्षों (खिड़की) से आहुति प्रदान की क्रिया देख रहे थे।

यज्ञ देवता अपनी स्वर्णिम नीलाभ अर्चियों से आहुति स्वीकार करते हुये नजर आ रहे थे। बड़ा ही पवित्र परिवेश प्रतीत हो रहा था। श्री श्री माँ की ही असीम कृपा से यह वैदिककाल का दृश्य देखने का सौभाग्य हमें आज भी प्राप्त हो रहा था।

सायम् काल ५ बजे से स्वामीनिर्मलानन्द जी "अखण्ड सावित्री महायज्ञ" का आँखों देखी घटनाओं का वर्णन बड़े रोचक ढंग से करते थे। अखण्ड सावित्रीं यज्ञ के समय स्वामी निर्मलानन्दजी श्री श्री माँ आनन्दमयी विद्यापीठ के छात्र थे। तथा होताओं में सबसे अल्पवयस्क होत थे। तीन वर्ष तक वाराणसी में रहकर नित्य गंगास्नान, व्रतादि नियमों का पालन करते हुये किस प्रकार श्री श्री माँ के ख्याल से इन बाल ब्रह्मचारियों ने एक करोड़ आहुति का संकल्प पूरा किया उसे सुनाते थे।

सन्ध्या छः बजे यज्ञशाला में आरती होती थी सन्ध्योपरान्त सब बाहरी भक्तों के यथास्थान चले जाने पर कन्यापीठ की बालिका ब्रह्मचारिणियाँ स्वतः प्रेरित होकर बड़े आनन्द से यज्ञशाला की परिक्रमा करती थीं। इनमें से कुछ ऐसी थी जो प्रतिदिन १०८ परिक्रमा करती थी। ११ जनवरी को प्रातः वाराणसी के विभिन्न मन्दिरों में पूजा का आयोजन किया था। पूजन सामग्री लेकर आश्रम की ब्रह्मचारिणियों ने विश्वनाथ, अन्नपूर्णा, संकटा, संकटमोचन, काल भैरव, केदारेश्वर आदि मंदिरों में जाकर पूजा की। मानो इस महायज्ञ, की निर्विघ्न सफलता के लिये काशीक्षेत्र के अधीश्वर देवी देवताओं को निमन्त्रण सहित आह्वान किया गया। पूर्व दिन की भाँति आज का भी कार्यक्रम रहा।

१२ जनवरी को प्रातः ९ बजे "स्वाहा स्वाहा" ध्वनि से मन्दिर प्रांगण गूँज उठा। आज का विशेष कार्यक्रम था इस उत्सव के उपलक्ष्य में ५१ दण्डी स्वामी भोजन।

दिन के दस बजे से आश्रम प्रांगण में हाथ में दण्ड-कमण्डल लिये माथे पर भस्म लगाये गैरिक वस्त्रधारी दण्डी संन्यासियों का समावेश होने लगा। प्रायः ग्यारह बजे आनन्द ज्योर्तिमन्दिर के हाल में पंक्ति बद्ध होकर सब भिक्षा पाने बैठे। सबका चन्दन माला से सत्कार कर वस्त्र, फल रुद्राक्ष माला एवं दक्षिणा भेंट की गयी, पक्का भोजन पत्तलों पर परोसा गया। पूरी दो तरह की सब्जी, पकौड़ी चटनी, दही, मिठाई एवं खीर की व्यवस्था रखी गई थी, सब व्यवस्था सम्पन्न होने पर आरती उतारी गयी। तदुपरान्त मन्त्र पाठ कर महात्माओं ने भिक्षा स्वीकार की।

सायम् काल निर्मलानन्द जी के सत्संग में काफी लोगों ने भाग लिया था।

१३ जनवरी विशेष शुभ दिन था। इस दिन कुछ विशेष कार्यक्रम था। प्रातः आठ बजे से चारों वेदों के वेदपाठी ब्राह्मणों द्वारा वेदपाठ का कार्यक्रम रखा गया था। ब्राह्मणों के पधारने पर पादप्रक्षालन कर उनका वरण किया गया। माला चन्दन से सत्कार कर उन्हे आसन पर विराजमान किया गया। तदन्तर, पं. श्रीवैदिक हेमन्तजी मोघे, पं. श्री वैदिक बाबू दीक्षित महाड़कर ने ऋग्वेद का, पं. श्री वैदिक लक्ष्मीकान्त दीक्षित, पं. श्री वैदिक विनायक बादल ने शुक्ल यजुर्वेद का, पं. श्री वैदिक अच्युतराम शर्मा, पं. श्री वैदिक रमण शर्मा ने कृष्ण यजुर्वेद का, पं. श्री वैदिक शरदराम त्रिपाठी, पं.. श्री वैदिक अशोक कुमार त्रिवेदी ने सामवेद का गान तथा श्री वैदिक श्री कृष्ण रटाटे, पं. श्री वैदिक राधेश्याम शुक्ल ने अथर्ववेद का क्रमशः संहिता, पद, क्रम, ब्राह्मण, जटा , घन , किया। वेदपाठी ब्राह्मणों के इस सस्वर पाठ ने यज्ञ शाला प्रांगण में अपूर्व समाँ बाँध दिया था। वेदपाठ के उपरान्त ब्राह्मणों को विधिवत् फल, पुष्प, वस्त्र, पीतल के पात्र, गुरुप्रिया दीदी द्वारा लिखित "अखण्ड सावित्री महायज्ञ" नामक पुस्तक की एक-एक प्रति दक्षिणा सहित अर्पित की गयी। वेदपाठ के इस कार्यक्रम के सुसम्पन्न होने के बाद यज्ञ शाला में हवन आहुति प्रारम्भ हुई। प्रतिदिन १० हजार आहुति दी जाती थी।

आज कुमारी पूजा की भी व्यवस्था की गयी थी। दस बजे कुमारी बालाओं का आगमन प्रारम्भ हुआ। कन्यापीठ के ऊपर के हाल में उनका पादप्रक्षालन कर, चन्दन माला ओढ़नी आदि से उनका श्रृंगार किया गया। तदन्तर सभी कन्याओं ने पंक्तिबद्ध रूप से जाकर यज्ञशाला की परिक्रमा की। सभी लाल रंग की चमचमाती ओढ़नी पहनी हुई थी, सबके चरण अलक्त से (महावर) रंगे गये थे। कन्याओं की आयुसीमा तीन वर्ष से १० वर्ष तक की थी। यज्ञशाला की परिक्रमा कर आनन्द ज्योतिर्मन्दिर में जहाँ कुमारी पूजा का आयोजन किया गया था वहाँ जाकर सबने अपना अपना आसन स्वीकार किया। फल, पुष्प, दक्षिणा से अर्चना एवं आरती उतारने के उपरान्त सबने भोजन स्वीकार किया। इस प्रकार श्री श्री माँ की असीम कृपा से यह कुमारी भोजन का कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। १४ जनवरी को विशेष शुभ दिन था। प्रातः काल गिरिजी के पंचशिव मंदिर में वैदिक ब्राह्मणो द्वारा रुद्राभिषेक का आयोजन किया गया था।

प्रतिदिन की भाँति यथा समय आहुति प्रारम्भ हुई। करीब ग्यारह बजे महामहिम श्री काशीनरेश महाराजकुमारियों के सहित उपस्थित हुये। आज ५१ ब्राह्मणों की भोजन का आयोजन किया गया। आनन्द ज्योर्तिमन्दिर के हाल में व्यवस्था की गयी थी। अन्य कुछ विशिष्ट ब्राह्मणों का

सविधि सत्कार कर उन्हें भी फलाहार कराया गया । इन ब्राह्मणो में पद्मभूषण पं. डा. विद्यानिवासमिश्र पं. डा. श्री नारायण मिश्र, पं. श्री त्रिनाथ शर्मा, पं. श्री द्वारकाप्रसादद्विवेदी, पं. श्री रामचन्द्रत्रिपाठी एवं पं. श्री कमलेश झा महोदय प्रमुख थे ।

कुछ विशिष्ट अतिथियों ने भी आज प्रसाद ग्रहण किया था । जिनमें वाराणसी मण्डल के कमिशनर श्री मनोज कुमार जी तथा डी.एल. डब्ल्यू के जनरल मैनेजर श्री ओम प्रकाश गुप्त जी भी शामिल थे ।

सायम् काल के सत्संग में भी काफी जन समागम हुआ था ।

कल मकर संक्रान्ति है । ५१ हजार आहुति का संकल्प पूरा होने वाला है । अतः आज रात्रि से ही विशेष आयोजन होने लगा । रंगोली बनायी गयी, नैऋत्य, ईशान, वायु, अग्नि आदि कोण में नयी पताका एवं ध्वजायें लगायी गयी । आज के इस सामान्य आयोजन में इतना आनन्द आ रहा था तब आज से ५० वर्ष पूर्व होने वाले अखण्ड सावित्री यज्ञ की पूर्णाहुति के आनन्द की तो कल्पना ही नहीं की जा सकती ।

१५ जनवरी मकर संक्रान्ति ब्राह्म मुहूत से नाम संकीर्तन प्रारम्भ हुआ । प्रतिवर्ष की भांति यज्ञशाला की परिक्रमा करती हुई कीर्तन मंडली चली । कहना न होगा कीर्तन मंडली की सदस्यायें श्री श्री माँ आनन्दमयी कन्यापीठ की ब्रह्मचारिणियाँ ही थीं । यज्ञशाला की तीन परिक्रमा कर अन्नपूर्णा मंदिर के द्वार से होकर आनन्द ज्योतिर्मन्दिर की प्रदक्षिणा करते हुये कीर्तन चल रहा था । कीर्तन के पद थे "जय माँ सावित्री, जय माँ गायत्री, जय माँ शिवानी नमो नमः" । आनन्द ज्योर्तिमंन्दिर में श्री श्री माँ के सामने कीर्तन करते हुये कीर्तन मण्डली ने ऊपर श्री गोपाल जी के सामने भी कीर्तन किया । गोपाल जी के सामने "हरे कृष्ण, हरे कृष्ण, कृष्ण, कृष्ण हरे हरे हरे राम हरे राम राम-राम हरे हरे" इस महामन्त्र का संकीर्तन प्रारम्भ हुआ । कीर्तन करते-करते पुनः लौटकर कन्यापीठ के बरामदे में श्री श्री माँ के चित्र के सामने बैठकर कीर्तन होने लगा । आज सायम् पर्यन्त इसी नाम का अखण्ड संकीर्तन चलता रहेगा ।

प्रातः छः बजने वाले थे पूर्वाकाश लाल हो रहा था । इधर यज्ञ शाला में पूर्णाहुति की तैयारियाँ होने लगी ।

यज्ञशाला में विविध पूजा सामग्री एकत्रित की जाने लगी । आज यज्ञमण्डप में विविध देवी देवताओं का षोडशोपचार पूजन की व्यवस्था की गयी थी । वैदिक ब्राह्मणों के मन्त्रोच्चारण के मध्य पूजन प्रारम्भ हुआ । चारों ओर वातावरण अर्पूव वेदध्वनि एवं कीर्तन ध्वनि से गूँज उठा ।

पूर्णाहुति के लिये केले के खम्भे से घृतधारा देने के लिये वसुधारा बनायी गयी उसे फूलों से सजाया गया । पूजन के उपरान्त अवशिष्ट आहुतियाँ दी जाने लगी, स्वाहा-स्वाहा ध्वनि से दिङ्मण्डल मुखरित हो उठा ।

पूर्णाहुति के समय महामहिम काशीनरेश एवं अन्यान्य विशिष्ट अभ्यागतगण उपस्थित थे । शास्त्रनिर्दिष्टशुभ मुहूर्त में शंखघन्टा एवं वेदध्वनि के साथ ५१ हजार आहुति के संकल्प की पूर्णाहुति हुई । वसुधारा से घी की धारा हवन कुण्ड में दी दयी । यज्ञकुण्ड में लाल रंग की ताँत की साड़ी

गायत्री माता के उद्देश्य से चढ़ाई गयी । इसी समय सावित्री महायज्ञ की पूर्णाहुति के समय श्री शैलेश ब्रह्मचारी द्वारा यज्ञ के उद्देश्य से लिखा गया गीत गाया गया । पूर्णाहुति के उपरान्त एक अष्टमवर्षीया कन्या को वस्त्रालङ्कारो से सुसज्जित कर यज्ञशाला में आसन पर विराजमान कराया गया एवं गायत्री स्वरूप कुमारी का षोडशोपचार पूजन हुआ । तदन्तर अन्नभोग की व्यवस्था हुई । सम्पूर्ण भोग घी में बनाया गया था । भोग के बाद आरती हुई ।

आज दरिद्र नारायण भोजन का विशेष कार्यक्रम था ।।।

सायम् काल प्रतिवर्ष की भाँति यज्ञ मण्डप की परिक्रमा कीर्तन करते हुये प्रारम्भ हुई । अन्नपूर्णामन्दिर आनन्द ज्योर्तिमंदिर सर्वत्र कीर्तन करने के पश्चात् यज्ञशाला के सामने धूम कीर्तन होने लगा । यज्ञ शाला में प्रतिवर्ष की भाँति पूजन के उपरान्त सन्ध्यारति हुई । सन्ध्यारति के वाद हरिनाम संकीर्तन एवं प्रणाम मन्त्र हुआ । उपस्थित सभी भक्त वृन्द को संक्रान्ति का प्रसाद बाँटा गया । इस प्रकार अखण्ड सावित्री महायज्ञ की अर्द्धशताब्दी पर ५१ हजार आहुति का संकल्प लेने वाला महोत्सव श्री श्री माँ की असीम कृपा से सम्पन्न हुआ ।

●

विशेष सूचना

सभी ग्राहकों को विशेष रूप से सूचित किया जा रहा है कि जिन्होंने वर्तमान वर्ष के लिए वार्षिक चंदा अभी तक नहीं भेजें हैं वे २००० सन् का चंदा अविलम्ब मनी आर्डर या बैंक ड्राफ्ट द्वारा भेजने का कष्ट करें ।

—कार्यकारी सम्पादक

आश्रम–संवाद

वाराणसी

ईसामसीह के जन्म के हजार वर्ष पूरे होने जा रहे हैं। पूरे विश्व में एक नया उत्साह है, एक नयी सहस्त्राब्दी में हम प्रवेश कर रहे हैं। एक नवीन सहस्त्राब्दी का प्रथम सूर्योदय हम देखेंगे। बालक वृद्ध युवा सभी उत्साहित हैं, अपने-अपने क्षेत्र में कुछ करने का उत्साह सभी में हैं। इसी उत्साह से प्रेरित होकर श्री श्री माँ आनन्दमयी कन्यापीठ की ब्रह्मचारिणियों ने वाराणसी स्थित आनन्दज्योर्तिमंदिर में दीप प्रज्वालन का एक भव्य अनुष्ठान सम्पादित किया।

श्री श्री माँ की विधिवत् षोड़शोपचार पूजा सम्पन्न हुई। मंदिर के गर्भगृह तथा हाल में विविध रंगो से अतिसुन्दर रंगोली बनायी गयी। ऊपर श्री गोपाल जी के सामने भी रंगोली की कला रंगों की छटा बिखेर रही थी। नीचे मंदिर के हाल में मध्य भाग में रंगोली के दोनों और दो हजार मिट्टी के दीपकों से दो पंक्ति बनायी गयी थी। पूजन के उपरान्त भोग आरति के समय इन दीपकों को प्रज्वलित किया गया। एक साथ पंक्ति में दीपकों की आभा एक अत्यन्त मनोरम सौन्दर्य को अवतरित कर रही थीं, साथ ही दीपकावलियों से सुसज्जित एवं प्रज्जवलित दो हजार की अंकलिपि मनोहर प्रतीत हो रही थी। श्री श्री माँ के पूत पवित्रस्निग्ध मनोमुग्धकारी दृष्टि तथा अमृत वाणी से नवीन सहस्राब्दी आलोकित हो आनेवाले कल को निरन्तर आलोक की दिशा दिखाती रहे, इस दीपोत्सव का यही उद्देश्य था;

मकरसंक्रान्ति प्रतिवर्ष एक नया उत्साह लेकर आती है। छह महीनों से इस उत्तरायण संक्रान्ति की प्रतीक्षा में सब रहते हैं। कब यह संक्रान्ति आये और कब भगवान् सूर्य नारायण मकरराशि में प्रवेश कर उत्तरायण का पट खोलें। सत्यव्रतधारी अप्रतिम वीर दृढ़प्रतिज्ञ भीष्मपितामह भी छः महीनों तक शरशय्या में विश्राम करते हुये इसी की प्रतीक्षा में थे। वाराणसी आश्रम में प्रतिवर्ष यह संक्रान्ति विशेष उत्साह से मनायी जाती है। गत अंक में प्रकाशित अखण्ड सावित्री महायज्ञ की सूचना एवं "पूर्णाहुति" नामक लेखों से पाठक गण अवगत हो गये हैं कि वाराणसी आश्रम तथा मकर-संक्रान्ति का विशेष सम्बन्ध क्या है। ९ जनवरी २००० से १५ जनवरी मकर संक्रान्ति पर्यन्त इस उपलक्ष्य में विशेष अनुष्ठान अनुष्ठित हुये थे जिसका विस्तृत विवरण पृथक् दिया गया है। १० फरवरी वसन्त पञ्चमी को कन्यापीठ में श्री श्री सरस्वतीपूजा धूमधाम से सम्पन्न हुई। १३ फरवरी माघी संक्रान्ति को श्रीगुरुप्रियादेवी का जन्मदिन मनाया गया।

१९ फरवरी माघी पूर्णिमा तिथि को श्री श्री माँ आनन्दमयी कन्यापीठ का वार्षिक उत्सव था। इस उपलक्ष्य में १७ फरवरी को दिव्य जीवन संघ के अध्यक्ष स्वामी चिदानन्दजी, सुदूर केरल प्रान्त के कन्ननगढ़ से पधारे थे। पू. स्वामीजी प्रतिवर्ष अपने व्यस्तकार्यक्रम में भी कन्यापीठ के लिये
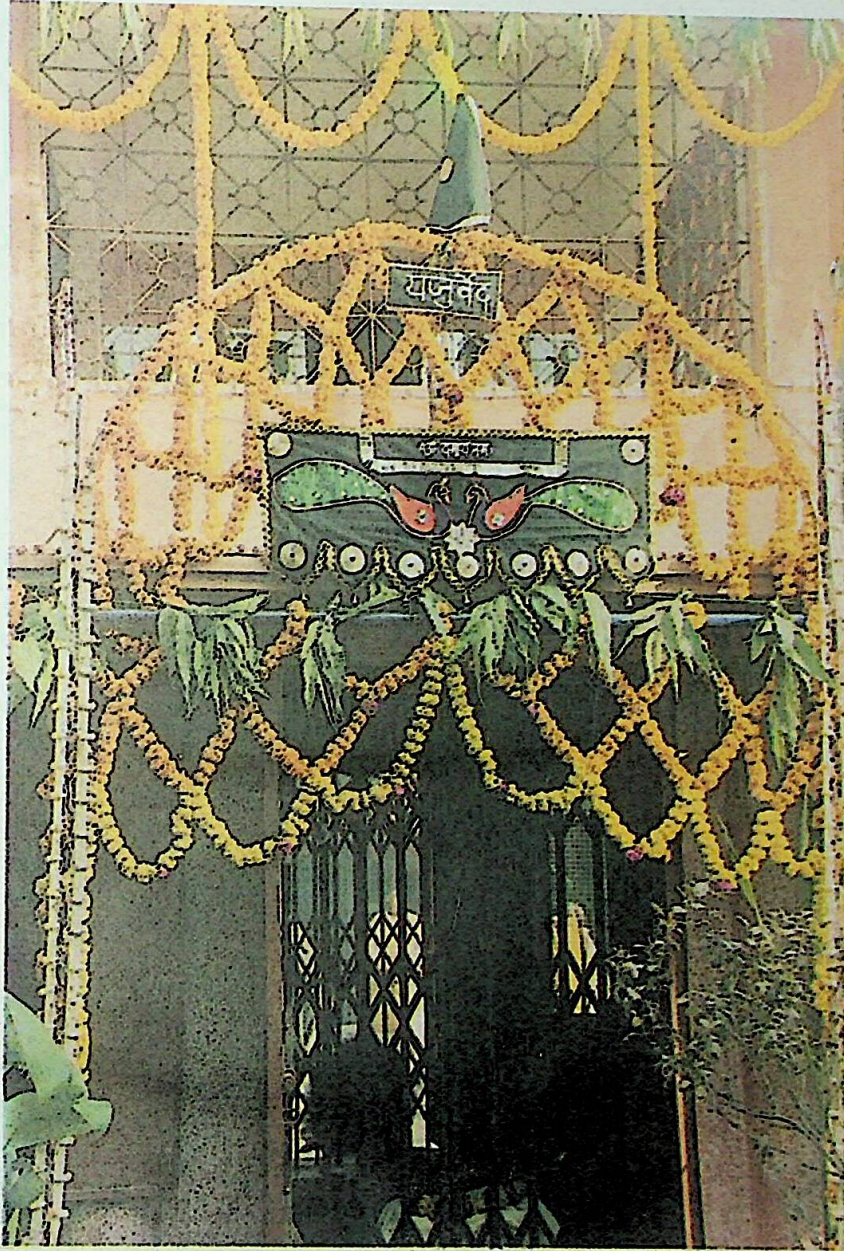
यज्ञशाला – दक्षिण द्वार
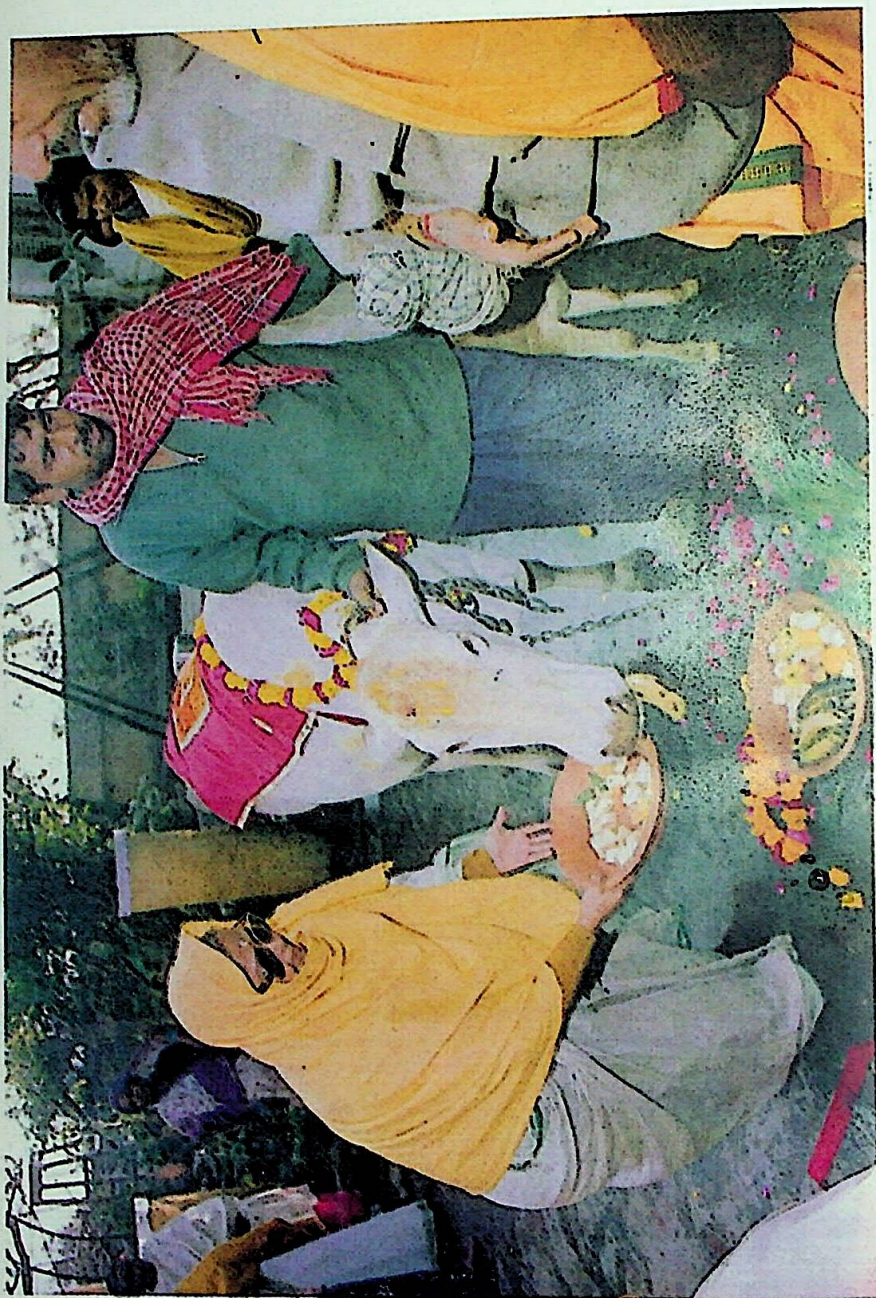
गोपूजन का दृश्य — 10th Jan.2000
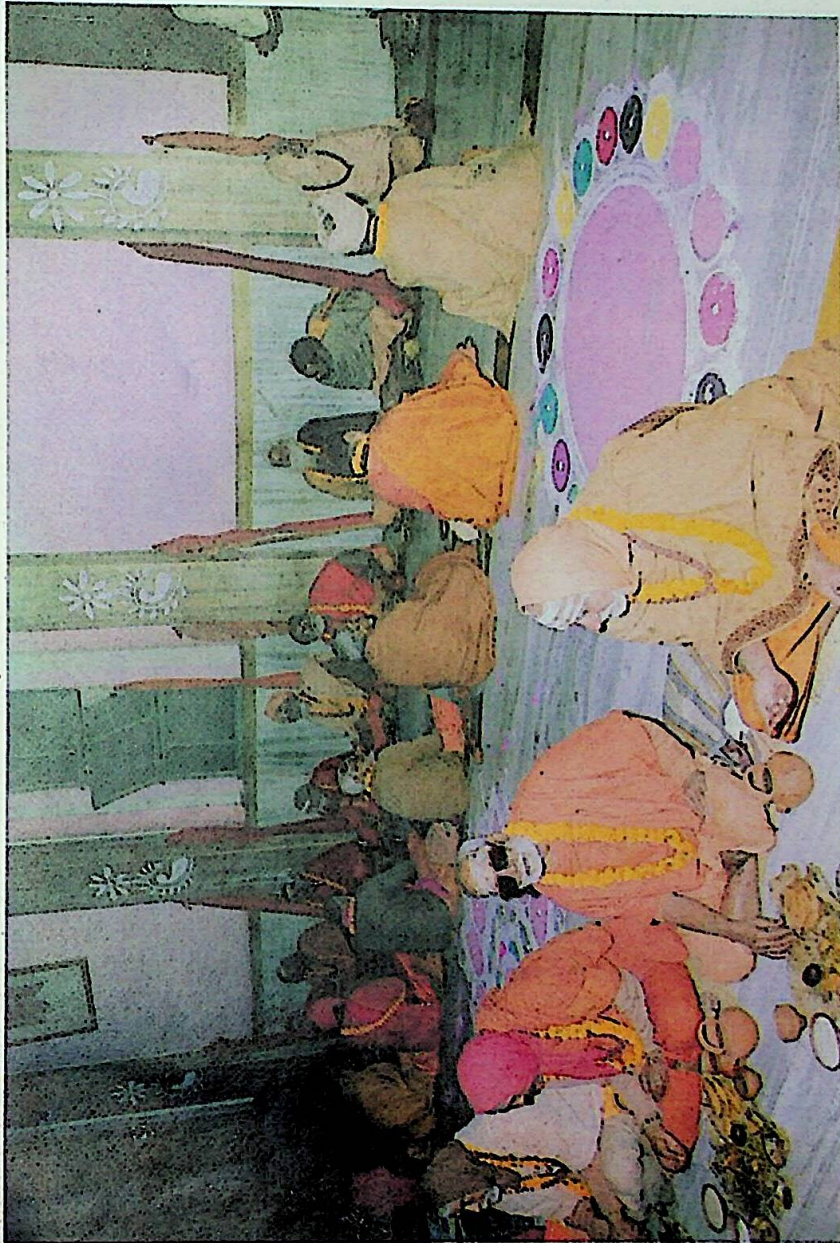
दण्डी-महात्मा भोजन — 12th Jan.2000
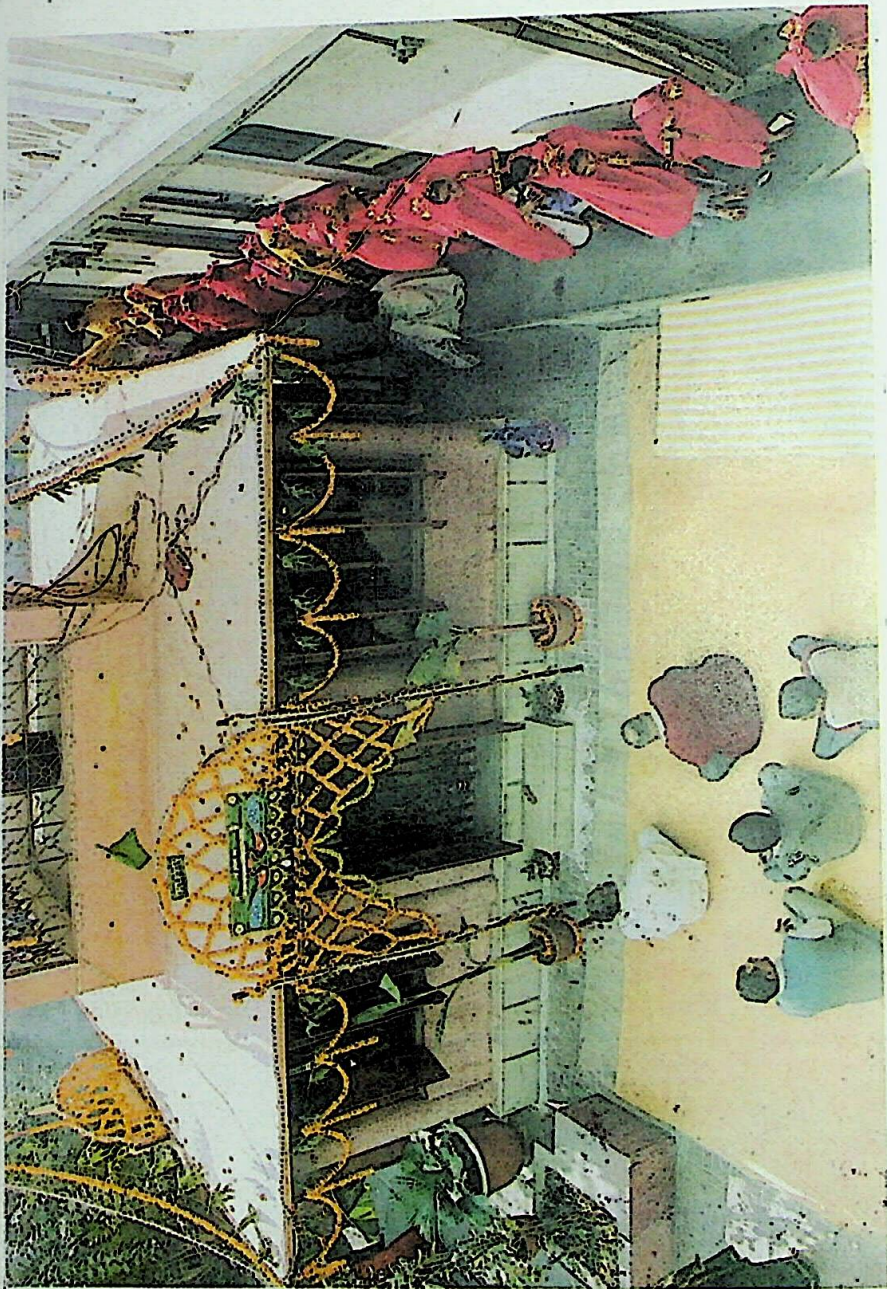
यज्ञशाला की परिक्रमा करते हुये कुमारी पूजा के लिये जाती हुई कन्यायें

— 13th Jan.2000

अपना समय रखते हैं। यह श्री श्री माँ की ही असीम कृपा है। स्वामीजी का शरीर यद्यपि पूर्ण स्वस्थ नहीं था पर फिर भी स्वामीजी ने अपने अमूल्य उपदेशों के अमृतवर्षण से सबको अभिसिंचित किया। १८ फरवरी को काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में पू. स्वामीजी का प्रवचन हुआ था। २० फरवरी को माता आनन्दमयी अस्पताल में पू. स्वामीजी ने नवनिर्मित तीन मंजिल भवन का अवलोकन किया। जिसका उद्घाटन पू. मोरारी बापू द्वारा गत दिसम्बर में हुआ था। पू. स्वामीजी के कर कमलों द्वारा गरीब बच्चों को वस्त्र एवं फल मिठाई वितरित की गयी। २१ फ़रवरी को स्वामीजी कलकत्ता रवाना हुये।

१९ मार्च को माता आनन्दमयी अस्पताल में दो महीने से चल रहे निःशुल्क चिकित्सा शिविर की समाप्ति थी। इस अवसर पर अस्पताल प्रांगण में एक सभा आयोजित की गयी थी। राज्य वित्तमन्त्री श्री हरिश्चन्द्र श्रीवास्तव इस सभा में मुख्य अतिथि के रूप में आमन्त्रित किये गये थे। आपने अपने भाषण में कहा कि "मैं अपना भाषण पहले से निश्चित करके नहीं आया था पर स्थान की महिमा ही ऐसी है जो मुझसे यह सब कहलवा रही है"। आपने कहा कि "मनुष्य जन्म से ही दूसरों पर निर्भर रहता है। जीवन धारण करता है माता के भरोसे, चलना सीखता है दूसरों का हाथ पकड़कर, बोलना सीखता है किसी का सुनकर इस प्रकार एक जीवन में न जाने कितनों की सहायता लेनी पड़ती है, अतः परोपकार करना तो मानवमात्र का ही कर्त्तव्य है, क्योंकि वह स्वयं परोपकार पर आश्रित है, इत्यादि" इसके अनन्तर आपने अस्पताल की उन्नति में सहायता प्रदान करने की बात भी कही थी।

२० मार्च को प्रतिवर्ष की भाँति फाल्गुन पूर्णिमा पर श्री श्री गोपालजी की षोडशोपचार पूजा हुई। १० अप्रैल चैत्र नवरात्र के षष्ठी के दिन से श्री श्री वासन्ती पूजा प्रारम्भ हुई। इस अवसर पर कलकत्ते से गीतश्री छविवन्द्योपाध्याय पधारी थीं। कलाकार श्रीमती एला भट्टाचार्य भी उपस्थित थी। इस वर्ष भक्तों का समागम अधिक संख्या में हुआ था। १३ अप्रैल को प्रातः ८:३० बजे दशमी पूजा समाप्त हुई, महामहिम काशीनरेश इस अवसर पर सपरिवार उपस्थित थे। छविदीदी ने समयोपयोगी कीर्तन से सबको भावविभोर कर दिया। १३ अप्रैल को महा विषुव संक्रान्ति पर श्री श्री १००८ मुक्तानन्दगिरिजी का संन्यासोत्सव था। गिरिजी के मन्दिर में कीर्तन भजन के साथ ब्र. गीता बनर्जी ने षोड़शोपाचार पूजा सम्पन्न की। आनन्दज्योर्तिमंदिर में इस उपलक्ष में साधु भोजन कराया गया। १४ अप्रैल को बंगाल का नया साल प्रारम्भ का दिन था इस उपलक्ष में भी आनन्दज्योर्तिमंदिर में ब्र. जया भट्टाचार्य द्वारा श्री श्री माँ की षोड़शोपचार पूजा सम्पन्न हुई। इस अवसर पर भी छबि दीदी ने अनेक भजन गाये थे।

धवलछीना (अलमोड़ा)

श्री श्री माँ की अशेष कृपा से धवल छीना आश्रम में अखण्ड नाम संकीर्तन आयोजित हुआ था। ११ मार्च की सान्ध्य वेला में अधिवास तथा १२ मार्च को उदयास्त नाम संकीर्तन होकर शाम को कीर्तन सम्पन्न हुआ।

वृन्दावन

४ मार्च, शनिवार को महाशिवरात्रि का महोत्सव सम्पन्न हुआ । एवं श्रीमद्भागवत् सप्ताह भी आयोजित किया गया ।

फाल्गुन पूर्णिमा होली के उपलक्ष में १५ मार्च से २१ मार्च तक विशेष अनुष्ठान अनुष्ठित हुये थे । इस अवसर पर रासलीला भी आयोजित की गयी थी ।

तारापीठ

१८ फरवरी माघी पूर्णिमा की पुण्यतिथि में श्री श्री माँ की षोडशोपचार पूजा एवं वार्षिकोत्सव सम्पन्न हुआ । इस उत्सव के उपलक्ष्य में १८ फरवरी सायंकाल नामयज्ञ का अधिवास हुआ । भक्तों के द्वारा सत्संग एवं भजन आदि किये गये । गीतश्री छबि बन्द्योपाध्याय इस अवसर पर उपस्थित थीं । स्वामी निर्मलानन्द जी तथा स्वामी अरुपानन्द जी भी उपस्थित थे । कार्यक्रम का संचालन किया था श्री प्रतिभा कुन्डु ने ।

१९ फरवरी को स्थानीय मन्दिरों में पूजा नगर भ्रमण व कीर्तन, हवन आदि हुये । शिवमन्दिर में रुद्राभिषेक भी हुआ । २० फरवरी साधु भण्डारा तथा नर-नारायण सेवा के उपरान्त आनन्दमिलनोत्सव की परिसमाप्ति हुई । नानास्थान से भक्तों का समावेश हुआ था ।

कनखल

श्री श्री माँ के कनखल आश्रम में ५ अप्रैल से १३ अप्रैल पर्यन्त श्रीमद्भागवत सप्ताह आयोजित किया गया ।

१३ अप्रैल महाविषुव संक्रान्ति को मुक्तानन्द गिरिजी का संन्यासोत्सव सम्पन्न हुआ । इस अवसर पर साधु भण्डारा हुआ ।

पुणे

१० फरवरी को श्री श्री माँ के आश्रम में सरस्वती पूजा सम्यक् रूप से सुसम्पन्न हुई । इस उपलक्ष्य में भजन कीर्तन के बाद महाप्रसाद वितरण किया गया ।

२२ फरवरी को श्री रामबाबा जयन्ती उपलक्ष्य में भण्डारा आयोजित किया गया ।

भीमपुरा

नर्मदा तट स्थित इस आश्रम में श्री भास्करानन्दजी की उपस्थिति में सात, आठ, नौ फरवरी को चण्डीपाठ का आयोजित किया गया था । १० ता. को श्री श्री माँ की प्रस्तर प्रतिमा प्रतिष्ठित हुई । तदन्तर १३ फरवरी से २० फरवरी पर्यन्त श्री अशोक भाई कुलकर्णी द्वारा श्रीमद्भागवत् की सप्ताह व्यापी कथा हुई । १०८ श्रीमद्भागवत पारायण भी हुआ । श्रीमद्भागवत के उद्योक्ता थी मातृभक्त अहमदाबाद की स्नेहवीणा बेन ।

भोपाल

बैरागढ़ स्थित श्री श्री माँ के आश्रम में २२ फरवरी शाम को स्वामी भास्करानन्द जी वृन्दावन से पधारे थे । २३ तथा २४ फरवरी को स्थानीय भक्त जनों ने दीक्षा ग्रहण की । स्वामी जी की उपस्थिति में प्रातः दस बजे सत्संग तथा रात्रि पौने नौ से नौ बजे तक ध्यान होता था । सायंकाल स्वामीजी मातृलीला प्रसंग एवं सत्संग की महिमा पर प्रकाश डालते थे । २५ फरवरी को स्वामी जी इन्दौर के लिये रवाना हुये ।

●

एक संस्मरण

गौर वर्ण, कोमल कान्त शरीर, छोटा कद, निरन्तर पूजा-पाठ में तल्लीन, एक सौम्य, शान्त व्यक्तित्त्व को प्रायः समस्त भक्त जनों ने श्री धाम वृन्दावन स्थित श्री श्री माँ आनन्दमयी आश्रम में श्री कृष्ण छलिया मंदिर के अन्दर या बाहर बहुधा देखा होगा– ये ही हमारे दादू पुजारी जिनके नाम व स्वरूप से सभी भलीभाँति परिचित हैं किन्तु इनका संस्कारगत नाम नारायण वन्द्योपाध्याय (बनर्जी) था ।

लगभग तीस वर्ष की युवावस्था में ये श्रीकृष्णाप्रेमवशात् श्री धाम वृन्दावन आए । कहावत है कि हार्दिक वेदना ही विरक्ति का रूप धारण कर लेती है ।

ऐसी ही विरक्ति 'दादू' को अपनी युवा पत्नी व पुत्री के असमय शरीर त्याग पर अनुभव हुई, जैसा कि उनके भतीजे ने बताया ।

एक समय श्री श्री आनन्दमयी विद्यापीठ की कक्षाऐं स्वामी शिवानन्द (शैलेश दा) के निर्देशन में अलमोड़ा स्थित आश्रम में संयोजित की जाती थी –उस समय दादू को रसोई घर की सेवा सोंपी गई–

वर्ष 1965 में श्री श्री माँ का जन्मोत्सव अलमोड़ा स्थित आश्रम में धूमधाम से सम्पन्न हुआ जिसमें पूज्य चरण हरी बाबा जी महाराज आदि विशिष्ठ महात्मा पधारे थे । उस समय स्वामी परमानन्द जी ने अनुभव किया कि दादू को कार्य करने में कुछ मानसिक तनाव होता है ।

फलतः उनकी राय से दादू का स्थानान्तरण श्री धाम स्थित मातृ-आश्रम में कर दिया गया–कुछ दिनों तक उन्होंने श्री महाप्रभु मन्दिर की विधिवत् सेवा की और श्री श्री माँ की आज्ञानुसार श्री श्री चैतन्य-चरितामृत का पाठ आजीवन किया ।

श्री वृन्दावन धाम में 7 सितम्बर 1966 में श्री कृष्ण छलिया व आनन्द कृष्ण लाल के विराजमान होने पर वे इस भव्य देवालय की सेवा में ऐसे तल्लीन हो गए कि वे स्वयमेव निजी परिकर के स्वरूप में ही अपने को मानने लगे । 'वे और उनके छलिया–

बस, यही उनका जीवन था । किसी व्यर्थ की बातचीत या अनर्गल कथा में उन्हें किसी ने कदाचित् ही देखा होगा–

दादू के उन्नत ललाट व नासिका पर गौड़ीय वैष्णव तिलक अत्यन्त शोभायमान होता था–गौड़ीय वैष्णव सम्प्रदाय में ही उनकी दीक्षा हुई थी ।

पिछली शिवरात्रि पर उन्हें अकस्मात् ऐसा बोध हुआ कि उनके शरीर त्याग का समय आ गया– अतः आतुरता में उन्होंने अपनी ताली सचिव महोदय श्री वासुदेवानन्द को सोंप दी और अपनी संकलित धन राशि भी बता दी–

श्री कृष्ण छलिया की कृपा व आश्रम वासियों की सेवा से वे स्वस्थ होकर पुनः श्री कृष्ण–छलिया की सेवा करने लगे ।

लगभग आठ माह के उपरान्त दादू के जिगर पर सूजन का प्रकोप हुआ– उनके पैर की व्यथा सूजन से बढ़ने लगी– फिर भी वे साहस करते हुए अपना निजी कार्य करते रहे ।

अन्त में दादू को आश्रम की गौ शाला के निकट 'राजा बहन' द्वारा निर्मित कुटिया में रहने का स्थान दे दिया गया– फिर भी वे लाठी के सहारे नित्य छलिया–दर्शन करते व श्री चैतन्य चरितामृत भी पढ़ते रहते । इतनी आयु में भी उनकी नेत्र ज्योति पूर्ण स्वस्थ थी–

ब्राह्मण शरीर होने के नाते उन्हें भोजन में अधिक रुचि थी– विशेष कर वे मिष्ठान्न प्रिय थे । लाई के पगे लड्डु उन्हें विशेष प्रिय थे ।

अन्त में अल्पे रुग्णावस्था के उपरान्त लगभग ३५ वर्ष श्री कृष्ण छलिया के अहर्निश ध्यान में रहकर पौष कृष्ण सफला एकादशी दिं. २ जनवरी २००० में उन्होंने अपना श्री धाम वृन्दावन में नश्वर शरीर त्याग कर निकुंज– लीला में प्रवेश किया–

"कृष्ण छलिया आनन्द लाल, ब्रजरमण प्राण गोपाल"– जय जय माँ जय श्री राधे–

●

शोक-संवाद

श्रीमती मदालसा नारायण–

पूज्य महात्मा गाँधी जी के प्रिय पात्र आदर्श चरित्रवान् परम देश सेवक श्री सेठ श्री जमुनालाल बजाज की सुपुत्री श्रीमती मदालसा नारायण का निधन चार अक्टूबर १९९९ को अपने निवास स्थान केवल निवास स्थान ही नहीं अपितु साधना स्थली वर्धा, सेवाग्राम में हुआ।

श्रीमंती मदालसा जी गुजरात राज्यपाल श्रीमन्नारायण की धर्मपत्नी थी, देशभक्त परिवार में जन्मी मदालसा बहन बाल्यकाल से ही एक परोपकार, सेवा परायण, दृढ़प्रतिज्ञ, कर्मठ, एवं अध्ययन शील स्वभाव की थीं। पूज्य पिता श्री जमुनालाल जी का अपने बच्चों के प्रति काफी सजग दृष्टि रहती थी, बाल्यकाल से सत्यनिष्ठा, वैभव में रहते हुये भी सामान्य जीवन यापन आदि आपकी शिक्षा थी, जिनका निर्वाह आपने अपने जीवन के अन्तिम क्षण तक किया। आपका विवाह पू. महात्माजी के ही चयन किये गये सुपात्र श्रीमन्नारायण से हुआ था। जो स्वयं देशसेवा की भावना से भावित थे।

श्री श्री माँ के प्रति श्री जमुनालाल बजाज की भक्ति भावना से मातृ भक्त परिवार परिचित हैं। श्री बजाज जी ने पू. महात्मा जी से कहा था "श्री श्री माँ के पास आकर मुझे जैसे शान्ति मिलती है वैसी अन्यत्र नहीं।" बजाज जी की आकस्मिक मृत्यु के उपरान्त श्री श्री माँ १९४२ में सेवाग्राम, वर्धा, पधारी थीं। श्रीमती जानकी बजाज एवं उनके शोक संतप्त परिवार को श्री श्री माँ की उपस्थिति से सान्त्वना मिली। पू. महात्माजी भी वहाँ उपस्थित थे। किशोरावस्था से आप श्री श्री माँ से भी प्रभावित हुई हैं।

आपका जीवन एक आडम्बर विहीन आदर्श देश सेविका का है। आपने "नारी जीवन" के सम्बन्ध में अनेक ग्रन्थ, लेख, एवं निबन्ध भी लिखे हैं। आपने अपनी माता "जानकी बजाज" के सम्बन्ध में एक पुस्तक लिखी है। जो नारी समाज को एक नया आदर्श दिखाती है

श्री श्री माँ के प्रति आपकी अगाध भक्ति थी। आप सब समय गुरुप्रिया दीदी से पत्र व्यवहार रखती थीं। जिसमें आश्रम की गतिविधियों के सम्बन्ध में जिज्ञासा एवं सहयोग करने की भावना रहती थी। आपने श्री श्री माँ के प्रति अत्यन्त भक्तिभावापन्ना गुजराती परिवार की विदुषी कन्या अमला जी को अपनी पुत्रवधू के रूप में स्वीकार किया था। सन् १९७२ में श्रीमन्नारायण के गुजरात राज्यपाल रहते समय आपने श्री श्रीं माँ को राजभवन में आमन्त्रित किया था। श्री श्री माँ एवं भक्तपरिवार के लिए आपने जो आयोजन किया था वह अविस्मरणीय है।

श्री श्री माँ के लिये निर्मित सत्संग के पण्डाल में दस हजार से भी अधिक जनता को श्री श्री माँ का दर्शन एवं वाणी का श्रवण करने का सौभाग्य प्राप्त होने का श्रेय भी आपको ही है।

आपके निधन से आनन्दमयीसंघ ने एक विशेष हित चिन्तक खो दिया। श्री श्री माँ के चरणों में आपको सदा के लिये चिर विश्राम प्राप्त हो यही प्रार्थना है।

संन्यासिनी नीलमगिरि–

पचास के दशक में कानपुर के सम्भ्रान्त ब्राह्मण परिवार की कन्या तथा सम्भ्रान्त वंशीय नवीना कुलवधू श्री प्रतिमा चटर्जी श्री श्री माँ के सान्निध्य में आया करती थीं । मधुर भाषिणी प्रतिमा "नीलिमा" के नाम से आश्रम में परिचित थी । थोड़े दिन गृहस्थाश्रम में रहने के बाद ही आपको विधि के विधान से तपस्वीनी का वेश लेना पड़ा । अत्यन्त नवीन आयु में आपके पतिदेव स्वर्ग सिधार गये थे । नीलिमा को श्री श्री माँ के चरणों का सहारा पहले से ही था । श्री श्री माँ के ही ख्याल से आपने पितृगृह कानपुर में रहकर उच्चशिक्षा अर्जन की एवं सरकारी विद्यालय में प्राध्यापिका के पद पर कार्यरत हुई । कानपुर में आप एक प्रतिष्ठासम्पन्न महिला के रूप में परिचित थीं । सन् १९७२ में आपने सरकारी कार्य से पूर्वावकाश स्वीकार कर श्री श्री माँ आनन्दमयी कन्यापीठ में सेवा का भार सँभाला । कहना न होगा श्री श्री माँ के ही विशेष ख्याल से यह सम्भव हुआ था । कुछ वर्षों तक कन्यापीठ में सेवा प्रदान कर आप श्री श्री माँ के साथ रह कर सेवा कार्य में व्रती रहीं ।

श्री श्री माँ के अव्यक्तधाम पधारने के उपरान्त आपने निर्वाणी अखाड़े के महन्त श्री गिरधर नारायण पुरी जी से सन्यास दीक्षा ग्रहण की एवं संन्यासिनी नीलमगिरि के नाम से परिचित हुईं । सर्वदा माँ के नाम का स्मरण आपका एक मात्र लक्ष्य था । इधर कुछ वर्षों से आप आँख की बीमारी से पीड़ित थी साथ और भी शारीरिक कष्ट थे । पर आपका प्रसन्न चेहरा सभी को आकर्षित करता था । गत १० नवम्बर १९९९को कनखल श्री रामकृष्ण मिशन अस्पताल में आप माँ के चरणों में सदा के लिये विलीन हो गयीं । श्री श्री माँ के चरणों में मातृप्राणा को सदा के लिये विश्राम मिले यही प्रार्थना है ।

श्री जगन्नाथ धमिजा–

श्री श्री माँ के भक्त एवं आनन्दमयी संघ के Governing body के सदस्य श्री जगन्नाथ धमिजा का महाप्रयाण ३० अक्टूबर १९९९ को हुआ ।

आप भारत सरकार के उच्चपदस्थ अफसर थे । आप केवल राजकर्मचारी ही नहीं अपितु एक सक्षम लेखक भी थे । अध्यात्म अनुशीलन में आपकी विशेष रुचि थी ।

आपने १९५० में दिल्ली में श्री श्री माँ का दर्शन किया था । सन् १९५६ में वृन्दावन आश्रम में माँ के ही विशेष ख्याल से आपको सस्त्रीक "मंत्र" प्राप्त हुआ था । श्री श्री माँ पर आपकी अगाध श्रद्धा थी । आप निरन्तर ३० वर्षों तक माँ की उपस्थिति में माँ का दर्शन एवं सत्संग का लाभ नियमित रूप से लेते रहे । श्री श्री माँ के अव्यक्तलीला धाम में प्रवेश के उपरान्त भी आप नियमित रुप से आश्रम के उत्सवादि में योगदान करते थे । संयम सप्ताह में भाग लेना आपका अनिवार्य कर्त्तव्य था ।

सम्प्रति ही श्री श्री माँ के सान्निध्य में आनेवाले विदेशी भक्तों की निवास की सुविधा के लिये आपके ही प्रयास से कनखल में आश्रम के पास ही एक "आन्तर्जातिक अतिथि गृह" का निर्माण हुआ है। जिसकी देख रेख का भार आपके ऊपर ही था।

आपके आकस्मिक निधन से श्री श्री आनन्दमयी संघ को गहरी चोट पहुँची है। आपकी धर्मपत्नी श्रीमती देविका धमिजा एवं परिवार वर्ग को इस दुःखद समय में श्री श्री माँ के चरणों में तथा माँ की अमृत वाणी में शान्ति प्राप्त हो, श्री श्री माँ के त्रिताप हारी चरणों में यही प्रार्थना है।

राजमाता कुसुमकुमारी, मण्डी.

सन् ५० के दशक में श्री श्री माँ मण्डी राज्य के निमन्त्रण पर मण्डी पधारी थी; मण्डी राज्य में श्री श्री माँ का भव्य स्वागत किया गया था। मण्डी नरेश श्री श्री माँ को विभिन्न स्थानों में स्वयं गाड़ी चलाकर दिखाने ले जाते थे। महारानी कुसुमकुमारी देवी सदा माँ की सेवा में पूजा अर्चना में तत्पर रहती थीं। "मण्डी रानी" यह शब्द उस समय श्री श्री माँ के आश्रम जनों का अत्यन्त आत्मीय शब्द था। श्री श्री माँ के प्रायः सभी उत्सवों में या ऐसे भी मण्डीरानी उपस्थित हो जाती थीं। श्री गुरुप्रिया दीदी के साथ आपका एक अत्यन्त निकट सम्बन्ध था जो वर्णन नहीं किया जा सकता। आप एक अत्यन्त भक्तिमती एवं सूक्ष्म बुद्धि की विदुषी महिला थीं। आश्रम की संचालना एवं सुख सुविधा में आपकी विलक्षण दृष्टि रहती थी। सन् १९५९ में वाराणसी में आपने श्री श्री माँ की उपस्थिति में शारदीय दुर्गापूजा करवायी थी। जो आनन्दमयी संघ के इतिहास में अविस्मरणीय है। मण्डी नरेश बाल सुलभ स्वभाव के थे श्री श्री माँ को मोटर में स्वयं चलाकर घुमाना, माँ के चित्र लेना एवं माँ के लीला विलास के "सचलचित्र" फिल्म लेने में आपको अत्यन्त आनन्द आता था।

श्री श्री माँ के पूना पधारने पर मण्डी राज परिवार अपने पुत्र कन्या के सहित श्री श्री माँ की सेवा में सर्वदा उपस्थित रहता था। राजमाता कुसुमकुमारी की माँ के प्रति श्रद्धा, प्रेम का वर्णन शब्दों में असम्भव प्रतीत होता है। यद्यपि आजकल आप अधिक उपस्थित नहीं हो पाती थीं। आज अत्यन्त दुःख के साथ सूचित करना पड़ रहा है कि गत २६ मार्च २००० को मण्डी राजमाता श्रीमती कुसुम कुमारी जी ने सदा के लिये श्री श्री माँ के चरणों में स्थान ग्रहण किया। इनके स्वर्गलोक वासी होने के साथ ही आनन्दमयी संघ का एक स्थान सदा के लिये रिक्त हो गया। अखिल मनोरथ पूर्णकारिणी श्री श्री माँ के चरणों में एकान्त प्रार्थना है कि आपके दुःखतप्त परिवार को इस असहनीय दुःख को सहन करने का सामर्थ्य प्रदान करें।

●

आगामी उत्सव तालिका

1.	श्री श्री माँ का जन्मोत्सव प्रारम्भ	–	२ मई, मंगलवार (ब्राह्ममुहूर्त रात्रि ३ बजे पूजा)
2.	अक्षय तृतीया	–	६ मई
3.	बाबा भोलानाथ की तिरोधान तिथि	–	वैशाख शुक्ला अष्टमी, ११ मई
4.	बुद्ध पूर्णिमा	–	१८ मई
5.	श्री श्री माँ की जन्मतिथि पूजा	–	ज्येष्ठ कृष्ण चतुर्थी- २१-२२ मई
6.	गंगा दशहरा	–	११ जून
7.	निर्जला एकादशी	–	१२ जून
8.	स्नान यात्रा (पूर्णिमा)	–	१६ जून
9.	अमावस्या	–	१ जुलाई
10.	रथयात्रा	–	३ जुलाई
11.	एकादशी	–	१२ जुलाई
12.	गुरुपूर्णिमा	–	१६ जुलाई
13.	एकादशी	–	२७ जुलाई
14.	अमावस्या	–	३१ जुलाई
15.	एकादशी (झूलनोत्सव प्रारम्भ)	–	१० अगस्त
16.	श्रावण पूर्णिमा, राखी	–	१५ अगस्त
17.	जन्माष्टमी	–	२२ अगस्त

STATEMENT ABOUT OWNERSHIP & OTHER PARTICULARS ABOUT NEWSPAPER ENTITLED "MA ANANDAMAYEE AMRIT VARTA" AS REQUIRED TO BE PUBLISHED U/S 190 OF THE PRESS AND REGISTRATION ACT.

1.	Title of Newspaper	:	Ma Anandamayee Amrit Varta
2.	Place of publication	:	Shree Shree Anandamayee Sangha, Bhadaini, Varanasi-1
3.	Periodicity of publication	:	Quarterly
4.	Printer's Name	:	Panu Brahmachari
	Whether citizen of India	:	Yes
	Address	:	Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Bhadaini, Varanasi-1
5.	Publisher's Name	:	Panu Brahmachari
	Whether citizen of India	:	Yes
	Address	:	Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Bhadaini, Varanasi-1
6.	Editor	:	Panu Brahmachari
	Whether citizen of India	:	Yes
	Address	:	Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Bhadaini, Varanasi-1
7.	Name & address of the owner who owns the Newspaper	:	Shree Shree Anandamayee Sangha, (Regd)
		:	Bhadaini, Varanasi-1

I, Panu Brahmachari, hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.

February 25, 2000

PANU BRAHMACHARI
Publisher

With best compliments from
RAM PANJWANI & COMPANY
Timber Importers & Financiers
1—Birla Road
Harwar—249401
: 427266, 424272, Fax : 0133—426001
Suppliers of :
Best Quality Himalayan Pine Timbers
Branches :
Jammu (J & K)
Yamuna Nagar (Haryana)
Parwanoo (H.P.)
Gandhi Dham (Gujrat)

❄ Branch Ashrams ❄

15. NEW DELHI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Kalkaji, New Delhi-110019 (Tel : 6840365)
16. PUNE : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Ganesh Khind Road, Pune-411007, (Tel : 327835)
17. PURI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Swargadwar, Puri-752001, Orissa.
18. RAJGIR : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Rajgir, Nalanda-803116, Bihar (Tel : 5362)
19. RANCHI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Main Road, P.O. Ranchi-834001, Bihar (Tel : 312082)
20. TARAPEETH : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Chandipur-Tarapeeth,
Birbhum-731233, W.B.
21. UTTARKASHI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Kali Mandir, P.O. Uttarkashi-249193, U.P.
22. VARANASI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Bhadaini, Varanasi-221001, U.P.
(Tel : 310054+311794)
23. VINDHYACHAL: Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Ashtabhuja Hill,
P.O. Vindhyachal, Mirzapur-231307, (Tel: 05442–64343)
24. VRINDAVAN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Vrindavan, Mathura-281121 U.P. (Tel : 442024)

IN BANGLADESH :

1. DHAKA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
14, Siddheshwari Lane, Dhaka-17 (Tel : 405266)
2. KHEORA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Kheora, Via-Kasba, Brahmanbaria.

REGISTERED WITH THE REGISTRAR OF NEWSPAPERS
FOR INDIA AS NO. 65432/97

रत्ना ऑफसेट्स लिमिटेड कमच्छा, वाराणसी, फोन–३१२८२०

माँ आनन्दमयी

SHREE SHREE ANANDAMAYEE SANGHA

❄ Branch Ashrams ❄

1. AGARPARA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P. O. Kamarhaiti, Calcutta-700058 (Tel : 5531208)
2. AGARTALA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Palace Compound, P.O. Agartala-799001. West Tripura
3. ALMORA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Patal Devi, P.O. Almora-263602, U.P. (Tel : 23313)
4. ALMORA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Dhaul-China, Almora-263881, U.P.
5. BHIMPURA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Bhimpura, P.O. Chandod, Baroda-391105, (Tel : 33208)
6. BHOPAL : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Bairagarh, Bhopal-462030, M.P. (Tel : 521227)
7. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Kishenpur, P.O. Rajpur, Dehradun-248009
U.P. (Phone: 684271)
8. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Kalyanvan, 176, Rajpur Road,
P.O. Rajpur, Dehradun-248009, U.P.
9. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Raipur Ordnance Factory, Dehradun-248010
10. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
47/A Jakhan, P.O. Rajpur, Dehradun, U.P.
11. JAMSHEDPUR : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Near Bhatia Park, Kadma, Jamshedpur-831005, Bihar
12. KANKHAL : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O.Kankhal, Hardwar-249408, U.P. (Tel: 416575)
13. KEDARNATH : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Near Himlok,
P.O. Kedarnath, Chamoli-246445, U.P.
14. NAIMISHARANYA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Puran Mandir,
P.O. Naimisharanya, Sitapur-261402, U.P.

माँ आनन्दमयी

अमृतवार्ता

श्रीश्री माँ आनन्दमयी के दिव्यजीवन

तथा

दिव्यवाणी की वाहिका त्रैमासिक पत्रिका

वर्ष–४ जुलाई, २००० सं.–३

वार्षिक चंदा (डाकव्यय सहित)

भारत में – ६० रुपये

विदेशों में – १२ डॉलर/या ४५० रुपये

एक प्रति – २०/- रुपये

साधारण नियम

यह त्रैमासिक पत्रिका चार पृथक भाषा—हिन्दी, बंगला, गुजराती तथा अंग्रेजी में जनवरी अप्रैल, जुलाई तथा अक्टूबर में प्रकाशित होती है । वर्ष का प्रारम्भ जनवरी से होता है ।

पत्रिका में मुख्यतया श्री श्री माँ पर आधारित लेखों को ही प्रधानता दी जाती है । इनके अतिरिक्त आध्यात्म पर आधारित हृदयस्पर्शी लेख; किसी भी देश तथा किसी भी सम्प्रदाय या धर्म के महापुरुषों की उपदेशात्मक शिक्षावलियों का भी पत्रिका में स्वागत है ।

जो भक्तगण माँ के सम्पर्क में आये हैं वे एकान्त व्यक्तिगत अनुभवों को छोड़कर ऐसे अनुभवों को आकलित कर सकते है जो कि श्री श्री माँ के लौकिक व्यवहार के प्रति आलोकपात करने वाले हों ।

सभी लेख फुलस्केप कागज के एक पृष्ठ पर टंकित या स्पष्ट लिखित होने चाहिये । लेखों की एक प्रति अपने पास अवश्य रखें । मनोनीत न होने पर लेखों को वापस भेजना कार्यालय के लिए असुविधाजनक है । सभी लेख सम्पादक के नाम भेजें ।

अग्रिम वार्षिक चंदा मनीआर्डर या बैंक ड्राफ्ट के माध्यम के "Shree Shree Anandamayee Sangha—Publication A/C".नाम पर भेजें ।

पत्रिका सम्बन्धी सभी प्रकार के पत्रादि व्यवहार तथा वार्षिक चंदा भेजने का पता :

कार्यकारी सम्पादक, "माँ आनन्दमयी - अमृतवार्ता"
माता आनन्दमयी आश्रम
भदैनी, वाराणसी -२२१००१

पत्रिका में विज्ञापन देने का नियम :–

सम्पूर्ण पृष्ठ – २०००/- पूरे वर्ष के लिये
आधा पृष्ठ – १०००/- पूरे वर्ष के लिये

अग्रिम शुल्क के साथ विज्ञापन का विषय (Matter) उपर लिखित पते पर भेजें ।

स्वामी श्री श्री आनन्दमयी संघ की ओर से मुद्रक तथा प्रकाशक श्री पानु ब्रह्मचारी द्वारा श्री श्री आनन्दमयी संघ, भदैनी, वाराणसी–२२१००१ (उ. प्र.) से प्रकाशित तथा रत्ना प्रिंटिंग वर्क्स, बी. २१/४२ कमच्छा, वाराणसी-१० (उ. प्र.) से मुद्रित । सम्पादक–श्री पानु ब्रह्मचारी ।

विषय-सूची

"हरि कथा ही कथा, और सब वृथा व्यथा"

—श्री श्री माँ आनन्दमयी

अमेरिका के पेन्सीलवेनिया राज्य में स्थायी रूप से पंजीकृत संस्था **माँ आनन्दमयी सेवा समिति (Mass, INC)** के स्वयं सेवकों की ओर से परमाराध्या श्री श्री माँ के सभी भक्तजनों को सप्रेम **"जय माँ"** ।

इस संस्था का उद्देश्य श्री श्री माँ की जीवन लीला रहस्य की सेवा, धार्मिक कार्य, सत्संग एवं जनसेवा सहित सनातन धर्म तथा श्रीमद् भागवत् धर्म युक्त प्रक्रिया है ।

अमेरिका सरकार द्वारा इस समिति के लिये सम्पूर्ण कर मुक्ति (Tax - exemption) प्राप्त है । जिसका नम्बर है 23-2967597 जो IRS Code 501 (C) (3) के अनुसार कार्यों के लिये है ।

अमेरिका एवं आस-पास के देशों में स्थायी रूप से निवास करने वाले मातृभक्तों से विनती है कि **"माँ आनन्दमयी अमृतवार्ता"** (त्रैमासिक पत्रिका) जो चार भाषाओं (हिन्दी, बगंला, गुजराती एवं अंग्रेजी) में श्री श्री माँ की दिव्य जीवन लीला सम्बन्धी गाथा एवं अमूल्य वाणी के संकलन के रूप में प्रकाशित होती है MASS, INC से प्राप्त कर सकते हैं । पत्रिका का वार्षिक चन्दा 12/- बाहर डॉलर मात्र है ।

अन्य विस्तृत जानकारी के लिये निंम्नलिखित पते पर कृपया सम्पर्क कीजिये :–

Mahadev R. Patel
President, Ma Anandamayee Seva Samiti, INC
212, Moore Road
Wallingford, PA 19086-6843
Tel : 610-876-6862 Fax : 610-876-1351
email : devpatel @ netscape. net.

जय माँ

मातृ-वाणी

निश्वास-प्रश्वास में सहज भाव से नाम जपते रहना। बिलकुल सहज साधारण रूप में।

प्रश्न– क्या इसे अजपा जप कहते हैं ?

माँ – अजपा जप उसे कहते हैं जो अपने आप हो जाता है। करना नहीं पड़ता।

प्रश्न– उस तरह की क्रिया होने के लिये कौन से उपाय करूँ ?

माँ – तुम सिर्फ उसी तरह नाम करते जाना और स्मरण करते रहना। नाम से ही जो होना है, अपने आप हो जाता है।

* * *

कल्पित राज्य के जिस अवलम्बन में तुम लोगों का शरीर है, उसी का एक भाग अन्तराल की क्रिया है। तुम्हीं तो बहु, नाना रूप, नाना आकार, नाना भाव में प्रकाशित। एक-एक आकार के, एक-एक भाव के, अभाव भंजन के रूप-और क्या ? विश्व ब्रह्माण्ड तुम्हारा ही आदान-प्रदान। तुम्हीं सब अभाव, तुम्हीं तो स्वभाव हो, तुम्हारी ही यह क्रिया है।

* * *

सत्त्व, रजः, तम इन क्रियाओं का जो मूल है तरंग के रूप में वही है प्राण। एक जीव से बहुत जीव, यह हुई जीवधारा। एक ईश्वर ही सभी जीव रूप में हैं। इसीलिये कहते हैं–यत्र जीव तत्र शिव।

* * *

तुम लोग समवेत रूप में आध्यात्मिक मार्ग की ओर अग्रसर होने का प्रयत्न करो। जैसे एक साथ भोजन करते हो, एक साथ सत्संग में बैठते हो, उसी प्रकार एकत्रित होकर आध्यात्मिक कर्म किया जा सकता है।

* * *

आसन लगाना और आसन होना दोनों अलग-अलग हैं। जब ठीक-ठीक आसन लग जाता है तब घड़े के ऊपर घड़ा बैठने पर जैसे नीचे वाला घड़ा ठीक से बैठ जाने पर ऊपर वाले बैठ जाते हैं, ठीक उसी प्रकार मेरुदण्ड के ज्वायन्ट स्क्रू लगने की तरह बिना हिले-डुले बैठ जाता है। उस वक्त हिलने का सवाल ही पैदा नहीं होता।

* * *

सत् कर्म का फल लेना चाहिये, जो क्रिया करे सत्त्व गुण । नित्य शुद्ध मुक्त, तुम ही वही तो स्वयं नित्यप्रकाश । कुछ करने से कुछ फल होता है । क्रिया बिना नहीं रह सकते तो सत् क्रिया करो । 'मैं' कौन हैं–यह रास्ता खुलने के लिये भगवत् कर्म जो है स्वयं प्रकाश के लिये रास्ता खोलना होगा । सब को लेना चाहिये–अपने को पाने के लिये । क्रिया करो अपने को पाने के लिये भगवान् को जानने के लिये ।

* * *

गुरु को ढूँढ़ना, मन में आता है । गुरु को पाना । तुमको M.A. B.A. पास करना पड़ेगा । जो पढ़ेगा खुद ढूँढ़ लेता है । वह जो गुरु है असली गुरु, तुम्हारे अन्दर बैठा है । उस अन्तर गुरु के प्रकट होने के लिये । बाहर के गुरु को अन्दर से चाहता है । भगवान् तो रूप में वही हैं । अरूप में भी वही हैं । वह रूप में प्रकट होकर आ जायेंगे ।

* * *

जैसे माँ बाप कहते हैं पति की चिन्ता में रहना । दूसरे पुरुष की चिन्ता करना पाप है सो भगवान् के सिवाय किसी की चिन्ता नहीं करनी चाहिये ।

* * *

भगवत् चिन्तन भगवान भागवत और भक्त एक हो जाय । बनियागिरी नहीं करनी चाहिये । जप करके यह नहीं सोचना चाहिये मैंने इतना किया, मुझे कुछ नहीं मिला । आशा रखो अच्छा है पर बनियागिरी नहीं । पैसा कमाने की इच्छा हो, पैसा खरचने की इच्छा । इस में रहना । यह विष्ठा है । विष भरा है । दान करना–अच्छे काम में लगाना यह पुण्य है । सुफल है ।

* * *

मौन का फल अमन हो जाना । चक्कर बन्द करने के लिये मौन करते हैं । चक्कर में पड़ गया ना–चक्कर से उठने के लिये । भगवान् विष्णु के हाथ में जो चक्र है, उसे समझने के लिये । गाड़ी की तरह चलता है चटपट । चलो चटपट मिल जायगा ।

* * *

गुरु में ईश्वर बुद्धि-ईश्वर में तो प्रेम होना ही चाहिये । ऐसा गुरु कृपा से ही होता है । गुरु जो कृपा करे तो तुम स्वयं शिष्य बने बिना रह नहीं सकते । गुरु शिष्य जो सम्बन्ध है, वह कृपा ही है । गुरु शक्ति से पार ले जायेगा ।

●

सहस्राब्दी का स्मरण

अगर कोई वास्तव में मन-प्राण से यह इच्छा करे कि अब तक काफी समय जगत् के आदान-प्रदान व्यवहार में, बातचीत में गुजर गया है; अब वह सब छोड़कर भगवान् के लिये भगवान् को लेकर रहूँगा तब भगवान् उसके लिये वैसी व्यवस्था कर देते हैं । यह शरीर एक ऐसी साधिका की कहानी सुन चुका है जो सूर्योदय से सूर्यास्त तक घर में बैठी जप-ध्यान किया करती थी । इससे शरीर अस्वस्थ नहीं होता । शरीर अस्वस्थ तभी होता है जब मन बाहरी आनन्द चाहता है और तुम उसमें बाधा दे रहे हो । सूर्य के प्रकाश में भले ही दिन में आप निकलें, पर शरीर स्वस्थ रह सकता है अगर वास्तविक जगत् को प्रत्याहार कर, मन में भगवान् को लेकर बैठने की तीव्र इच्छा जाग्रत हो ।

"हे भगवान् आप देखो मेरी कैसी दुरवस्था है मैं क्या खा रही हूँ ।" ऐसा कहते-कहते भगवान् मन की गति बदल देते हैं ।

इस छोटी बच्ची का तो कुछ कहना सुनना नहीं है । तुम लोग जैसे बजाओ वैसे ही बजती है । इस लड़की की यही प्रार्थना है यही विनती है—"आज से तुम लोग स्वरूप प्रकाश की ओर यात्रा करो । हरि चिन्तन में लग जाओ । बनते बनते बन जाय । करते करते अभ्यास होगा । जगत् के आनन्द में शान्ति नहीं है"।

—श्री श्री माँ आनन्दमयी

अन्तर की पुकार

गुरुदेव गुरुदेव गुरुदेव गुरुदेव
गुरुदेव गुरुदेव गुरुदेव गुरुदेव
शंकर प्रकाश ओहे महायोगी,
अनाथों के नाथ ओहे महायोगी,
परम दयाल ओहे महायोगी,
अहेतु कृपाल ओहे महायोगी,
अधम तारण ओहे महायोगी,

(श्री श्री माँ के मुखारविन्द से निःसृत शब्दावलि)

माँ क्षमापन-स्तोत्र

हम अगर माता जी भूल जायें तुम्हें,
तू मगर माताजी न भुलाना हमें ॥ १ ॥
तुम सदा मेरे हिय में समायी रहो,
भूल जायें तो पथ को दिखाना हमें ॥ २ ॥ टेक.
तुम हो माता मेरी मैं तेरा पुत्र हूँ,
भूल अपराध को हिय लगाना हमें ॥ ३ ॥ टेक.
हम हैं मानव सदा वासना के वशी ।
ज्ञान दीपक जलाकर बचाना हमें ॥ ४ ॥ टेक.
इस भवकूप में पड़ न जायें कहीं,
पार भवकूप से माँ लगाना हमें ॥ ५ ॥ टेक.
यह 'मधुप' तुझसे माँजी है करता विनय
खोजूँ तुझको जहाँ माँ दिखाना हमें ॥ ६ ॥ टेक.
हम अगर माताजी भूल जायें तुम्हें,
तुम मगर माताजी न भुलाना हमें ॥ ७ ॥

श्री श्री माँ आनन्दमयी प्रसंग

—स्व. अमूल्यकुमार दत्त गुप्त

श्री श्री माँ के चरणों में चोट—

२५ आषाढ़ बुधवार, ९-७-५२

आज भी प्रातः गीतापाठ एवं कीर्तन के उपरान्त कमलाकान्त दादा अपनी लिखी हुई पुस्तक पढ़ने लगे। उसी प्रसंग में ढाका में शशांक बाबू (स्वामी अखण्डानन्द गिरिजी) के घर श्री श्री माँ के पैरों में किस प्रकार चोट आयी थी वह माताजी ने सुनाया। माताजी ने कहा, "एकबार मनसा पूजा के उपलक्ष में शशांकबाबू इस शरीर को अपने घर ले गये थे। दो मंजिल पर यह शरीर था इतने में उन लोगों ने कहा कि उसी समय शाहबाग जाना पड़ेगा। इस शरीर की तब साधारण अवस्था नहीं थी। परन्तु उन लोगों के कथनानुसार उसी समय रवाना होना पड़ा। दो मंजिल से एक मंजिल में सीढ़ी से उतर रही हूँ, पर सीढ़ी पर पैर ठीक से नहीं पड़ रहा है। इस तरह उतरते-उतरते बेढंग से पैर पड़ गया और मैं लुढ़कती हुई सीढ़ी से नीचे गिर पड़ी। तभी मैंने देखा पैर के पंजे की ऊपर की हड्डी टूट गयी है। पैर के नीचे एवं एक अँगुली नीली हो गयी है। जो भी हो, उसी तरह चलकर मोटर पर बैठी। चलते समय ऐसा लग रहा था मानो टुकड़े भरी हुई कोई थैली हो। थप् थप् कर जमीन को छूती हुई चल रही हो। शाहबाग पहुँच कर भी इसी पैर को लेकर चलकर कमरे में गयी। तब भी इस बारे में किसी को भी कुछ कहा नहीं गया। कारण तब भी इस शरीर का अस्वाभाविक भाव चल रहा था। उस भाव के चले जाने पर कहा कि पैर के पंजे में काफी दर्द हो रहा है। तब भोलानाथ जी ने देखा कि पैर के पंजे में काफी सूजन आ गयी है और वह नीला पड़ गया है। उन लोगों को इतना कहकर यह शरीर फिर से लेट गया। भोलानाथ जी ने एक कपड़े में घी लगाकर उसे पैर के पंजे में लपेट दिया तथा चौकी पर लिटा दिया और कमरे से बाहर चले गये। थोड़ी देर बाद आकर उन्होंने देखा कि जिस कपड़े से पैर बाँधा था वह चौकी से काफी दूर कमरे के एक कोने में पड़ा है। वे जिस हालत में सुला कर गये थे उस हालत से कब उठकर यह शरीर कमरे में टहलने लगा, यह वे लोग जान भी न सके। इस शरीर को भी टूटा पैर लेकर चलने में कुछ पता भी न चला। जो भी हो पैर की हालत देख भोलानाथजी वगैरह काफी चिन्तित हुए। इस शरीर ने कहा था कि आठ दिन के बाद पैर ठीक हो जायगा और हुआ भी वैसे ही था।

सन्ध्या के उपरान्त डा. राधाकृष्णन् माताजी को देखने आये। विशेष कोई बातचीत नहीं हुई। उनकी बीमारी के समय माताजी उनको देखने गयी थीं। डा. राधाकृष्णन् के इसका कृतज्ञता सहित उल्लेख करने पर माताजी ने कहा, "उस दिन अस्पताल जाना हुआ था। जब सुना पिताजी वहीं

पर हैं, तब मैं पिताजी के कमरे में घुस पड़ी ।" डा. राधाकृष्णन् को अन्नपूर्णा विग्रह आदि दिखाये गये । उनके आश्रम से जाने से पहले ही मैं घर चला गया ।

२६ आषाढ़, बृहस्पतिवार, १०-७-५२

प्रातःकाल भी माताजी ने कमलाकान्त दादा के लिखे प्रसंग पर लक्ष्मी पूजा की कहानी सुनायी । माताजी ने कहा, "यह शरीर एकबार विद्याकूट गया था । तब वहाँ देखा कि बृहस्पतिवार को घर घर लड़कियाँ लक्ष्मीपूजा करती हैं । यह देखकर इस शरीर की माँ ने इस शरीर से कहा, "तू भी तो लक्ष्मी पूजा कर सकती है ।" तब इस शरीर के मुख से अच्छा यह शब्द निकला था । ढाका आकर भोलानाथ जी से कहा था, "तुम लोग यदि इस शरीर से लक्ष्मीपूजा करवाना चाहते हो तो एक कलश खरीद लाना ।" घड़ा कैसा होना चाहिये वह भी बता दिया । पर भोलानाथ जी को उस नमूने का कलश कहीं भी नहीं मिला । उनको फिर से ढूँढ़ कर देखने को कहा गया साथ ही यह भी कहा गया कि "यदि नया न भी मिले तो पुराना कलश होने से भी चलेगा । वे पुराने बरतनों की दुकानों पर ढूँढ़ कर देखें । इस बार ढूँढ़ने पर जैसा कहा गया था वैसा कलश भोलानाथ जी को पुराने बरतनों की दूकान पर मिला । कलश काफी पुराना था । उसका रंग भी बदल गया था । उस पर सिन्दूर का चिन्ह भी था । शायद किसी समय इस कलश पर लक्ष्मीपूजा ही होती थी । जो भी हो कलश को धो-माँज कर साफ कर उस पर लक्ष्मीपूजा आरम्भ की गयी, कारण, इस शरीर की माँ को बात दी गयी थी । साधारणतया लोग कलश को बदलकर लक्ष्मीपूजा करते हैं, पूजा हो जाने पर कलश को धो माँज कर हटा कर रख देते थे । यह शरीर ऐसा नहीं करता था । एक बार कलश स्थापना कर पूजा करने के बाद सात दिन तक वह कलश वैसा ही रहता था । सात दिन बाद जिस दिन पूजा होती थी उसे पूजन के लिये उठाया जाता था पुनः धो माँजकर पूजा के लिये स्थापित कर दिया जाता था । इस प्रकार कुछ दिनों तक चलता रहा । इस शरीर का तो कुछ भी ठीक नहीं रहता था । अनेक समय ऐसा भी हुआ कि रात्रि के दस बजे ख्याल आया कि आज गुरुवार है लक्ष्मीपूजा करनी है । पर पूजन की कोई व्यवस्था नहीं है । दिन को आम के पत्ते भी लेकर नहीं रखे गये । तब भोलानाथ जी को कहा जाता था कि, "रात को पेड़ के पत्ते नहीं तोड़ने चाहिये इस तरह का कोई संस्कार इस शरीर में नहीं है" अतः भोलानाथ जी को कहा जाता था- "आप डाली को नीचा कर दीजिये मैं आम्रपल्लव तोड़ लूँगी ।" वे ऐसा ही करते थे इस तरह आम की पत्ती का आयोजन कर पूजा की जाती थी । इसके बाद बृहस्पतिवार का भी ख्याल नहीं रहा करता था । इस समय अटल भट्टाचार्य के ढाका आने पर उसे यह कलश दिया गया । राजशाही जाकर वह उसी कलश पर प्रति बृहस्पतिवार को पूजा करने लगा । जब बांग्लादेश विभाजित होकर पाकिस्तान बना तब दीदी (खुकुनी दीदी) ने सोचा माँ ने जिस कलश पर लक्ष्मीपूजा की है वह पाकिस्तान में क्यों पड़ा रहेगा ? अतः उन्होंने उस कलश को लाने के लिये अटल के पास एक व्यक्ति को भेजा, पर अटल ने कहलवाया वह यह घड़ा कभी भी नहीं छोड़ेगा ।" (सभी की हँसी)

व्यक्ति को मृत्युभय क्यों होता है–

कमलाकान्त का पाठ समाप्त होने पर देवशंकर बाबू ने माताजी से कहा, "उसदिन एक प्रश्न उठा था, पर उसकी आलोचना नहीं हुई है। प्रश्न यह था व्यक्ति को मृत्युभय क्यों होता है ?

माताजी–मृत्यु का अर्थ क्या है ? मृत्यु का अर्थ तो परिवर्तन। परिवर्तन रहने से ही दो रहता है। जहाँ दो वहीं द्वन्द्व भय इत्यादि रहेंगे ही। इस स्थिति का लक्षण ही भीति है।

देवशंकर बाबू–अनेक समय देखा जाता है कि मृत्यु के दो एक दिन पहले अथवा दो-एक घन्टा आगे व्यक्ति बेहोश हो जाते हैं। उस हालत में उन्हें मृत्यु-भय नहीं रहता। ऐसा भी देखा जाता है कि किसी-किसी को मृत्यु के पहले तक पूरा होश रहता है। पर उन्हें मृत्युभय नहीं रहता। इन सब हालतों में मृत्युभय क्यों नहीं रहता ?

माताजी–एक मात्र ज्ञान का प्रकाश होने से ही मृत्यु भय चला जाता है। मृत्यु की जब मृत्यु होती है तब यह भय नहीं रहता है। बेहोशी की हालत में जिसकी मृत्यु होती है उसके लिये कहा जा सकता है कि उसे मृत्यु भय नहीं है। ऐसा भी देखा जाता है होश है पर मृत्यु भय नहीं है। "ज्ञान" शब्द से यहाँ जागतिक ज्ञान को ही कहा जा रहा है। इन सब क्षेत्रों में मृत्युभय नहीं दीखता उसके नाना कारण हो सकते हैं। अनेक लोग अधिक अवस्था अथवा रोग के कारण मृत्यु की कामना कते हैं। कभी तो वे इसके लिये तैयार भी रहते हैं। इन सब हालतों में मन की एक ऐसी दशा होती है कि जिस कारण मृत्यु भय नहीं रहता। परन्तु मन की इस दशा से यह नहीं समझना चाहिये कि उनको तत्त्वज्ञान हो गया है। अज्ञान अवस्था में रहने पर भी मन की ऐसी स्थिति हो सकती है। कितनी बार तो ऐसा भी देखा जाता है कि मृत्यु के लिये तैयार रहने पर भी मृत्यु के निकटवर्ती होने पर उनमें भय आ जाता है। यह सब अनन्त अवस्थायें हैं अतः उनके प्रकार भी अनन्त हैं।

साधना करते-करते किसी किसी को ऐसी स्थिति प्राप्त होती है जिसके फलस्वरूप विषयों के प्रति आकर्षण शिथिल हो जाता है एवं अभीष्ट प्राप्ति के लिये इतनी व्यग्रता आती है कि वह मृत्यु की परवाह भी नहीं करता। उसकी मनःस्थिति ऐसी होती है यदि मृत्यु आती है तो आये मैंने भगवत् प्राप्ति के लिये जो मार्ग अवलम्बन किया है उसे कभी भी नहीं छोड़ूँगा। यह भी ज्ञान की अवस्था नहीं है। इस प्रकार के वैराग्य से ज्ञान का प्रकाश सुगम होता है।

कितने ही लोग संसार से ठोकर खाकर वैराग्य का अवलम्बन करते हैं। इस तरह के वैराग्य में अनेक समय विषय भोग का बीज छिपा रहता है एवं वही एक समय उसे विषयों की ओर खींच ले जाता है। कोई पत्नी की बातों पर संसार से विरक्त होकर संन्यासी हुए, कुछ दिनों बाद वे खुद ही उसके लिये अनुतप्त होने लगे। इस प्रकार का वैराग्य बन्धन मुक्ति का कारण नहीं होता। भोग का बीज उसमें रहने के कारण उसे पुनः विषय की ओर खींच कर ले जाते हैं। परन्तु ऐसा भी हो सकता है, कोई यदि पत्नी के दुर्व्यवहार को उपलक्ष्य कर वैराग्य पथ पर चलते हुए उसमें रसास्वादन कर ले, तब उसका पत्नी के प्रति विरूप भाव नहीं रहता। तब वह पत्नी को ही गुरु

मानकर उसके प्रति श्रद्धासम्पन्न होता है, कारण उसकी यह अवस्था प्राप्त होने के मूल में उसकी सहधर्मिणी ही है। जिसकी ऐसी अवस्था होती है उसमें भोग के बीज नहीं रह सकते। इस प्रकार का वैराग्य उसके ज्ञान प्रकाश का सहायक होता है। जैसे तुलसीदास, बिल्वमंगल आदि को हुआ था। बात करते-करते दूसरे प्रसंग में आ गयीं।

मृत्यु भय की बातें हो रही थीं, द्वैतभाव के रहते यह भय पूरी तरह नहीं जाता है। जब अद्वैतज्ञान का प्रकाश होता है तभी सब भय चले जाते हैं। कारण इस अवस्था में दो के न रहने पर कौन किससे डरेगा ?

इस प्रकार बात-चीत के प्रसंग में दोपहर के बारह बज गये। आज गोपीबाबू के घर के सब लोग आश्रम में प्रसाद लेने आयेंगे। इस समय गोपीबाबू आश्रम में आये। मैं घर चला गया।

(क्रमशः)

"मैं भी भिक्षुक। जो मुझे जानता है। मैं और वह एक। जो मुझे जानने की कोशिश करता है। मैं उसके पास। जो मुझे नहीं जानता उसके लिए मैं भिक्षार्थी।"

–श्री श्री माँ

मेरी दीक्षा का विवरण
(उत्तरार्द्ध)

– स्वामी नारायणानन्द तीर्थ

मैं – माँ मैं तो दीक्षित नहीं हूँ। इष्ट पूजा किस प्रकार करूँगा किस की पूजा करूँगा? कौन मेरे इष्ट देवता हैं।

माँ– तुमने इतने दिनों तक दीक्षा नहीं ली?

मैं – नहीं माता जी मैंने अभी भी दीक्षा नहीं ली। दीक्षा लेने का अवसर जीवन में बहुत बार आया था क्योंकि छोटी उम्र से ही बहुत साधु संन्यासी, योगी और बड़े बड़े पण्डितों के सम्पर्क में आना जाना होता था एवं सब ही स्नेह करते थे, दीक्षा के लिए प्रार्थना करने पर ही वे दीक्षा दे देते; परन्तु माता जी आपके दर्शनों के बाद से ही मैंने मन में निश्चिय किया था कि यदि आपसे मुझको कोई मन्त्र या बीज मिले तभी उसको ग्रहण करूँगा, अन्यथा यज्ञोपवीत के समय आचार्य गुरु के श्रीमुख से जो गायत्री मंत्र मिला है उसी के जप से जीवन बिता दूँगा। दूसरे किसी से भी दीक्षा नहीं लूँगा। माता जी कृपा करके जब आपने इतना ही किया तब दीक्षा देकर श्रीचरणों में स्थान दीजिए। माँ मेरी यह अभिलाषा अनुग्रह करके पूरी कीजिए। इसके पहले माँ के पास ऐसी प्रार्थना मैंने कभी नहीं की। बिना प्रार्थना के ही जब जैसी आवश्यकता समझी माताजी ने पूरी की, मिनती विनती की अपेक्षा नहीं रखी। इसे उनकी अहैतुकी कृपा ही कहना पड़ेगा। अधिकार की ओर से विचार करने पर माँ से कुछ माँगने की योग्यता मुझमें नहीं है। मुझमें कितनी योग्यता है यह मैं भली-भाँति जानता हूँ। श्री श्री मातृ चरणों में दीक्षा के लिए प्रार्थना करने पर उन्होंने कहा यदि योगायोग हो तो सावन महीने में झूलन पूर्णिमा के दिन जो हो जाय। तब वैशाख का महीना था। सावन महीने की झूलन पूर्णिमा को श्री श्री माँ के मुखकमल से निःसृत आशा की वाणी सुनकर मेरे मन प्राण आनन्द से परिपूर्ण हो गये। उस दिन से आशान्वित होकर मैं दिन गिनने लगा। उस शुभ दिन के कितने दिन बाकी हैं। श्री श्री माँ के इस दिव्य शरीर में भी दीक्षा की लीला इस झूलन पूर्णिमा को ही हुई थी। माँ के श्री पाद पद्मों में पुनः हाथ जोड़कर प्रार्थना की कि माँ मैं मन्त्र तन्त्र पूजादि कुछ भी नहीं जानता, भक्ति श्रद्धा भी नहीं है। आज रात को जिस प्रकार तुम्हारी पूजा करूँगा, आप दया कर उसे ग्रहण कीजिएगा। पूजा की त्रुटि विच्युति आप न देखना। आपके चरणों में आज मेरी यह नम्र प्रार्थना है।

घटनाक्रम से प्रायः तीन महीने बाद सावन महीने में वर्षा के समय श्री श्री माँ विन्ध्याचल गईं। पिछले कुछ महीनों से मैं श्री माँ के साथ ही हूँ। देखते देखते झूलन पूर्णिमा का शुभ दिन आकर उपस्थित हुआ। उस पवित्र दीक्षा दिवस की याद में खुकुनी दीदी एवं हम में से कोई कोई इस झूलन पूर्णिमा के पुण्य दिवस को उपवास रखते थे। इसीलिए आज मैंने उपवास रखा था। विन्ध्याचल जाने के बाद मैंने कई बार दीक्षा के बारे में माँ से निवेदन किया था।

दोपहर को भोग के बाद माँ जब विश्राम करने के लिए ऊपर के घर में जा रही थीं तब उन्होंने कृपा करके मुझे भी अपने साथ दो मंजिल के कमरे में आने को कहा। अधिक कहना न

होगा मैं आज सुबह से ही छाया के समान माँ के पीछे पीछे चल रहा था । कब माँ कृपा करके मुझको बुलायें इसीलिए तो थोड़ी देर के लिए भी माँ के पास से दूर नहीं हटा । माँ के कमरे से जब सब लोग चले गये तब माँ ने मुझसे कहा कि देखो तो भाई जी की लिखी हुई मातृ दर्शन किसी के पास है या नहीं । मैंने ढूँढा पर कहीं नहीं मिली । माँ से यह कहने पर माँ ने कमरे के सारे दरवाजे बन्द करके मुझे अपने पास बैठने को कहा । माँ के आदेशानुसार कमरे के दरवाजे को बन्द करके मैं उनके पैरों के पास बैठा । उन दिनों यह सब काम अत्यन्त गुप्त भाव से होते थे एवं इसका महत्व भी गूढ़ होता था ।

परम करुणामयी श्री श्री माँ ने अपने बिस्तर पर लेट कर एक अक्षर का उच्चारण किया एवं उसके बाद अक्षर क्या है मुझसे पूछा मेरे द्वारा उस अक्षर का उच्चारण करने पर माँ ने कहा 'इस अक्षर के साथ उसको योग करने पर जो होता है वही तुम्हारा बीज मन्त्र है ।' इस प्रकार महाशक्ति स्वरूपिणी माँ से बीज मन्त्र का संकेत पाकर मैंने उस मन्त्र का उच्चारण किया, तब माँ ने कहा यही तुम्हारा बीज मन्त्र है । इसके बाद उन्होंने बीज मन्त्र का अर्थ एवं किस प्रकार बीज मन्त्र द्वारा प्राणायाम और जप करना पड़ेगा, वह विस्तृत रूप से कह दिया । उसके बाद कहा बीज मन्त्र के ऊपर विशेष पूजा की पद्धति एवं पूजा के बाद उस बीज मन्त्र से और क्या किया जा सकता है वह भी बताया । श्री श्री माँ की अनुमति के बिना और कुछ प्रकाश करना ठीक नहीं है । इसलिए इस प्रसंग को यहीं बन्द कर रहा हूँ ।

मैं बहुत से बीज मन्त्रों को जानता हूँ । परन्तु श्री श्री माँ के द्वारा दिया गया जो यह मन्त्र है वह साधारण से भिन्न है एवं इसका अर्थ भी व्यापक एवं गुरुत्वपूर्ण है । मेरी तरह साधारण व्यक्ति विश्वजननी के पास इससे अधिक और क्या आशा कर सकता है ।

इस घटना के करीब सात वर्ष बाद सन् १९५० में जब काशी आश्रम में श्री सावित्री यज्ञ की पूर्णाहुति हुई थी उस समय उत्तरकाशी के प्रसिद्ध और प्रवीण महात्मा श्रीमत् स्वामी देवी गिरि जी महाराज आकर माँ के वाराणसी आश्रम में कुछ दिन ठहरे थे । उस समय आश्रम के कुछ व्यक्तियों एवं माँ के भक्तों ने उनसे दीक्षा ली थी । वे अतिशय त्यागी, पण्डित एवं उच्च कोटि के आदर्श संन्यासी थे । विश्ववरेण्या श्री श्री माँ आनन्दमयी के विशेष आह्वान पर वे महापुरुष प्रायः पचास वर्ष उपरान्त अविमुक्त क्षेत्र वाराणसी में पूर्णाहुति के अवसर पर आये थे । एक दिन माँ ने मुझसे कहा– 'आज अनेक लोग देवी गिरिजी के पास दीक्षा ले रहे हैं । देखो तुम भी उनसे दीक्षा लोगे या नहीं? माँ की इस जिज्ञासा के उत्तर में मैंने विनीत भाव से उनसे निवेदन किया कि माँ इस एक मस्तक को कितनों के चरणों में अर्पित करूँगा ? मेरा यह उत्तर सुनकर माँ हँसकर बोलीं 'देखा जो मिला उससे सन्तुष्ट हो या नहीं ?'

श्री श्री माँ के प्रथम दर्शन के प्रायः 16-17 वर्ष बाद उन्होंने अपने श्री चरणों में आश्रय देकर मुझे कृतार्थ किया । इतना दीर्घ समय मैंने आशा में किस तरह बिताया यह केवल अन्तर्यामी माँ ही जानती हैं । किस मुहूर्त में किस पर वे कृपा करेंगी यह किसी को भी मालूम नहीं है । इसीलिए याचक की भाँति माँ की कृपा के लिए हमें उद्ग्रीव रहना पड़ेगा ।

●

नदी

– डॉ. अनुज प्रताप सिंह

दो दो नदियों को
आदमी लेकर चलता रहता है;
एक भीतरी
दूसरी बाहरी
बाहर की नदी का
सब कुछ निश्चित है ;
उम्र, स्वभाव, स्वरूप
व उपयोग
गहराई और लम्बाई-चौड़ाई
पर भीतरी नदी का
सब कुछ अनिश्चित
पर उपस्थिति निश्चित है
कोई देखे न देखे
बहती है जीवन भर
नालों, ताल, तलैया से
जल ले
प्रवाहित रहती है
तमाम रहस्यों के साथ
अन्तः सलिला
काया तीर्थों के साथ
मूलाधार चक्र से
ब्रह्मरंध्र तक
हिलोरें लेती है
तट बन्धों को झकझोरती है
उमड़ती, घुमड़ती है
कहीं कुछ दृश्य नहीं ;
अनुभव जन्य है ।
काशी, प्रयाग और संगम
फिर अगनित तीर्थार्थी हैं
अवगाहन है

अपनी-अपनी क्षमता से
बाहरी नदी
सब कुछ द्रष्टव्य
ऊँची, नीची
गुप्त-स्पष्ट
नदी, नाले, पहाड़ी, पेड़ से
टकराती
हरहराती
लोनी लताओं से इठलाती
इतराती
फिर समवेत
मैदान में चलती है
कुलाङ्गना-सी
देश-देश को
तीर्थ-तीर्थ को
जन-जन को
मिलाती है
सबका अभिषेक करती है
भीतरी नदी का अर्थ कहती है
इतिहास, भूगोल और संस्कृति
सभ्यता और प्राणी की
कथा कहती है
एक तारल्य सबको बाँटती है
सींचती है सूखते को
जोड़ती है खण्डित को
उपदेश देती
उदाहरण प्रस्तुत करती
चलते रहो – चलते रहो
लोक मंगल के लिए
अपने को सुखाते रहो
दूसरों के लिए
जीवन देकर जीवन को पालते रहो
सुनो हर-हर, कल-कल, छल-छल
फिर बिलकुल शांत
सागर में प्रवेश करो ।

●

श्री श्री माँ और विन्ध्याचल आश्रम्

– मोहन लाल आर्य

शक्ति स्वरूपा माँ –

घटना सन् 1962 की है । चीन ने भारत पर आक्रमण किया और आँधी-तूफ़ान की तरह बढ़ने लगा । भारत ने कभी कल्पना भी नहीं की थी कि चीन उस पर आक्रमण करेगा । इसीलिये कोई तैयारी भी नहीं थी । भारतीय सेनाएँ पीछे हटती जा रही थीं । ऐसी दशा में नेहरूजी को माँ की याद आयी । वे माँ के भक्त थे । उन्हें माँ की शक्ति का भान था । उन्होंने अपने पर्सनल सेक्रेटरी उपाध्याय जी को माँ के पास भेजा कि वे जाकर माँ से कहें कि यदि चीन इसी प्रकार बढ़ता रहा तो दक्षिण-पूर्व एशिया उसके अधिकार में आ जायेगा । उन्होंने जाकर कहा । माँ ने सुना लेकिन वे अपने स्वभाव के अनुसार चुप रहीं । कोई उत्तर नहीं दिया । क्या किया यह भी कोई नहीं जानता । सुबह उन्होंने अपने आस-पास के लोगों से पूछा–"किसी ने रेडियो सुना है क्या ? युद्ध की क्या खबर है ?" लोगों ने उत्तर दिया–"माँ, आश्चर्य हो गया । चीन ने एक तरफा युद्ध विराम कर दिया ।"

जो लोग ऐसी विभूतियों के विषय में नहीं जानते उनके लिये ऐसी बातों पर विश्वास करना बड़ा ही कठिन होगा । लेकिन जो जानते हैं उनके लिये अविश्वास की कोई बात ही नहीं है । विश्व प्रसिद्ध पुस्तक 'एक योगी की आत्म कथा' (Auto Biography of a yogi) में तिब्बत स्थित ज्ञानगंगा का वर्णन आता है जिसमें आज भी ऐसे महापुरुष हैं जो संसार की घटनाओं को नियंत्रित करने की शक्ति रखते हैं । माँ भी एक शक्ति सम्पन्न विभूति थीं, जो आवश्यकता पड़ने पर असम्भव को भी सम्भव कर सकती थीं ।

माँ कौन थीं ?

यह प्रश्न माँ के भक्तों में तब भी उठता था जब वे शरीर में थीं और आज भी उठता है जब वे शरीर में नहीं हैं । माँ के अनेक भक्तों ने उन्हें अपनी स्थूल आँखों से काली के रूप में, कृष्ण के रूप में; चैतन्य महाप्रभु के रूप में तथा अनेक देवी देवताओं के रूप में देखा था । "माँ, तुम कौन हो ?" यह पूछने पर प्रायः वे चुप रह जाती थीं । कभी-कभी कहती थीं,–, "बाबा, तुम लोग जो भी सोचते हो, जो भी कहते हो यह शरीर वह सब कुछ है ।" माँ प्रायः मैं, न कह कर 'यह शरीर' कह कर अपना परिचय देती थीं । एक बार जब वे महाभाव में थीं तो उनके पतिदेव (जो बाद में उनके शिष्य हो गये थे) ने उनसे पूछा था–"तुम कौन हो?" माँ ने उसी महाभाव में उत्तर दिया था–"मैं पूर्ण ब्रह्म नारायण हूँ ।" सम्भवतः पूरे जीवन काल में एक बार और मात्र एक बार माँ के श्रीमुख से ऐसी बात निकली थी । इसके बाद कहने-सुनने को क्या रह गया ? लेकिन मानव

स्वभाव ऐसा है जो अपने द्वारा अनुभूत सत्य को ही सत्य मानता है । इसीलिये साधु-सन्त माँ को 'जगज्जननी' कहते थे, सृष्टि की सर्वोत्तम कृति मानते थे ।

एक बार एक विदेशी भारत आया । यहाँ के साधु-सन्तों के दर्शन किये और अपने देश लौट गया । वहाँ से एक दूसरा व्यक्ति भारत भ्रमण के लिये आ रहा था । उसके पास समय कम था । उसने पहले व्यक्ति से पूछा–'यदि समयाभाव के कारण मैं किसी एक ही महापुरुष का दर्शन करना चाहूँ तो मुझे किसका दर्शन करना चाहिये ?" पहले व्यक्ति ने कहा–"माँ आनन्दमयी का" ।

विन्ध्याचल आश्रम :–

विन्ध्य क्षेत्र एक शक्तिपीठ है । यह एक अति जागृत स्थान है । यह शक्ति का स्रोत है । अनेक साधकों ने यहाँ साधनाएँ की हैं । आज भी न जाने कितने साधक आते हैं और साधना करते हैं । उनका सूक्ष्म प्रभाव यहाँ देखा जा सकता है । ऐसे स्थान पर श्री श्री माँ आनन्दमयी का आश्रम होना कोई संयोग मात्र नहीं है । यह अदृश्य शक्ति द्वारा सोची-समझी योजना का भाग है । माँ आप्त काम थीं । उनकी कोई इच्छा अनिच्छा नहीं थी । उनका कोई संकल्प-विकल्प नहीं था । जीव के कल्याण के लिये कभी-कभी उन्हें कुछ 'ख्याल' आते थे । उनके भक्त उन्हीं 'ख्यालों' को ध्यान में रख कर वैसे स्थानों पर आश्रम खड़ा कर देते हैं, जिसमें कभी-कदा माँ आती रहें, उनका दर्शन होता रहे और साधक लोग साधना करते रहें और घर-गृहस्थों का भी कल्याण होता रहे ।

एक बार एक व्यक्ति ने माँ से पूछा–"माँ ! आश्रम तो साधु-सन्तों के लिये होते हैं । घर-गृहस्थों से उनका क्या मतलब है ?" माँ ने उत्तर दिया–"बाबा ! साधु-सन्तों को आश्रम की क्या आवश्यकता है ? वे तो पेड़ के नीचे भी रह सकते हैं । आश्रम तो गृहस्थों के लिये होते हैं कि वे आवें, पूजा-पाठ करें, प्रभु का नाम लें, साधना करके जीवन को सफल बनावें ।"

माँ के आश्रमों में विन्ध्याचल आश्रम का अति विशिष्ट स्थान है । एक शक्तिपीठ विन्ध्याचल है । दूसरा शक्तिपीठ माँ का आश्रम है । जहाँ दो-दो शक्तिपीठ एक ही स्थान पर स्थित हों वहाँ की शक्ति के विषय में भला क्या कहना ?

विन्ध्याचल आश्रम–एक साधना केन्द्र :–

माँ ने स्वयं कहा है कि विन्ध्याचल आश्रम की इस भूमि पर 'देवी' का विशेष, प्रभाव है । विन्ध्यवासिनी का आदि स्थान, देवी-क्षेत्र, शक्ति साधना की पीठस्थली श्री श्री माँ आनन्दमयी आश्रम की महिमा अनुपम है । तंत्र साधना के विश्व प्रसिद्ध साधक, महान विद्वान महामहोपाध्याय पं. गोपी नाथ कविराज से माँ ने यहीं रह कर साधना करने का निर्देश किया था । समय समय पर माँ ने उनका मार्ग दर्शन किया था । माँ ने अपने पार्षदों जैसे भोला नाथ जी (जो पूर्ववर्ती जीवन में माँ के पति थे और बाद में उनके शिष्य होकर उन्हें माँ कह कर सम्बोधित करते थे), भाई जी (जिन्होंने माँ के पूर्ववर्ती नाम निर्मला देवी की जगह माँ आनन्दमयी के नाम से माँ को विभूषित किया), स्वामी अखण्डानन्द जी (जो पहले सिविल सर्जन थे), स्वामी तुरीयानन्द जी (जो पहले इंजीनियर

थे), गुरु प्रिया दीदी (जो उनकी मुख्य लीला सहचरी थीं) जैसे लोगों को यहाँ रख कर माँ ने साधना करायी थी। इस दृष्टि से यह स्थान आध्यात्मिकता से ओत-प्रोत है।

हर साधना से शक्ति का विकास होता है। यहाँ सन् 1929 से अर्थात् लगभग 70 वर्षों से लगातार साधना का क्रम चल रहा है। अतः विन्ध्य क्षेत्र का प्रमुख साधना केन्द्र है। आज भी नियमित रूप से सायं काल 7.30 बजे से रात्रि 9.00 बजे तक साधना होती है। इसके अन्तर्गत 7.30 से 8.45 तक कीर्तन-भजन होता है। रात्रि 8.45 से 9.00 तक मौनपालन (ध्यान) किया जाता है। ध्यान के समय ही माँ की कृपा का वितरण होता है। बहुतों को वहीं पर प्रत्यक्ष अनुभव होता है। बहुतों को उनके जीवन में माँ की कृपा दिखायी पड़ती है।

हर रविवार को सुबह 8.30 बजे से दोपहर 11.30 बजे तक सामूहिक साधना होती है जिसमें शहर के बहुत से लोग भाग लेते हैं। साधना का क्रम निम्नवत है : (१) माँ को पुष्प निवेदन (२) स्तुति पाठ (३) मातृ-वाणी का पाठ (४) धार्मिक समालोचना (५) गीता पाठ। बहुत से लोग इसके बाद चले जाते हैं। जो रुक जाते हैं वे दोपहर में 'ब्रह्म खिचड़ी' का महा प्रसाद पाते हैं। इसी प्रकार सायंकाल 3 बजे से 6 बजे तक क्रम चलता है। जिसके अन्तर्गत (१) सुन्दर काण्ड का पाठ (२) मातृ-सत्संग के प्रसंगों का वाचन (३) श्रीमद् भागवत का पाठ (४) भजन (५) प्रणाम-मंत्र (६) प्रसाद-वितरण होता है।

विन्ध्याचल आश्रम से जुड़े कुछ प्रसंग :–

माँ के श्रीमुख से सुना गया है कि शरीर (स्थूल) तथा अशरीरी (सूक्ष्म) देवी-देवताओं एवं महापुरुषों के दर्शन माँ को प्रायः हुआ करते थे। बहुत से दर्शन विन्ध्याचल आश्रम में भी हुए थे जिनमें से कुछ का वर्णन किया जा रहा है :

एक दिन खूब वर्षा हो रही थी। उस घनघोर वर्षा में न जाने कहाँ से तीन पहाड़ी बालाएँ अपने सिर पर सब्जी की टोकरी लेकर आ गयीं। माँ ने सब सब्जी खरीद ली। बाद में खोजने पर उनका कहीं अता-पता नहीं चला। पूछने पर माँ ने बताया–"गंगा, जमुना और सरस्वती ही इन रूपों में आयी थीं। तीनों देवियाँ कृपा करके दर्शन दे गयीं।"

आश्रम की जमीन में एक चिलबिल का पेड़ है। उसी के नीचे एक चबूतरा बनाया गया। माँ प्रायः वहाँ बैठा करती थीं और भक्तों से ध्यान कराती थीं। यह बहुत ही जागृत स्थान है। एक बार माँ वहाँ बैठी थीं तो मध्य रात्रि में उन्हें बहुत से दर्शन हुए जिनका वर्णन उन्हीं के श्रीमुख से इस प्रकार है–"इस शरीर ने देखा कि एक छाया (प्रभाव) आयी और इस चबूतरे को घेर लिया। भीतर प्रश्न उठा यह छाया उधर से क्यों आयी ? भीतर ही उत्तर भी मिला उधर देवी का प्रभाव क्षेत्र है। इसीलिये यह छाया उधर से आयी।" उसके बाद माँ ने आगे कहा–"फिर एक स्त्री मूर्ति दिखायी पड़ी जिसका केवल चेहरा ही दीख रहा था। उसकी लाल-लाल एक ही आँख थी। वह लाल साड़ी पहने थी। माथे पर घूँघट था।" (लगता है माँ ने विन्ध्यवासिनी देवी का दर्शन किया था जिनका एक नेत्र 'त्रिनेत्र' का प्रतीक है–लेखक)।

माँ के एक अनन्य भक्त थे डॉ. पन्ना लाल । वे कमिश्नर थे । उस समय वे भी माँ के पास बैठे चबूतरे पर भगवान कृष्ण का ध्यान कर रहे थे । अतः माँ को जो दीखा उसके विषय में उन्होंने बताया–"इसके बाद इस शरीर ने देखा एक बहुत लम्बा हाथ । जैसे भगवान कृष्ण का हाथ हो । वह बाबा (डॉ. पन्ना लाल) की ओर से आया और शून्य में आगे बढ़ता चला गया । कारण कि बाबा इस समय श्री कृष्ण का ध्यान कर रहे थे । इसीलिये ऐसा दीखा ।"

यहीं पर देखने का क्रम खत्म नहीं हुआ । वह आगे भी चला । माँ ने बताया–"तदनन्तर रुद्राक्ष धारी महात्माओं को देखा । उनके हाथ में भी रुद्राक्ष की मालाएँ थीं ।"

उस चबूतरे के पास एक युवा योगी आज भी सूक्ष्म रूप से वास करते हैं । बहुत से भक्तों ने उनका आभास पाया है । उस रात्रि में माँ ने भी उस योगी को देखा था जिनका बृहत वर्णन माँ ने किया है ।

सोलन नरेश श्री दुर्गा सिंह माँ के अनन्य भक्त थे । आश्रम के लोग उन्हें योगी भाई के नाम से पुकारते थे । एक बार उन्होंने माँ का विन्ध्यवासिनी देवी के रूप में दर्शन किया था । उसके बाद विन्ध्यवासिनी देवी के रूप में माँ की पूजा भी की थी ।

विन्ध्याचल आश्रम का महत्व :–

विन्ध्याचल आश्रम माँ को बड़ा प्रिय था । माँ इसकी बड़ी प्रशंसा करती थीं । जब उन्हें विश्राम करना होता था या अज्ञात वास करना होता था तो वे विन्ध्याचल आश्रम चली आती थीं । यहाँ के प्राकृतिक वातावरण में माँ का स्वास्थ्य भी ठीक रहता था ।

एक बार एक अंग्रेज दम्पति माँ का दर्शन करने आये । वे सामने बड़े चबूतरे पर बैठे माँ की प्रतीक्षा करने लगे । माँ को 'ख्याल' आया कि उसे कुछ दिखाना चाहिये । अतः अंग्रेज महिला ने आकाश में एक बहुत बड़ा त्रिभुज देखा उसकी चर्चा अंग्रेज ने बाद में माँ से की । माँ ने कहा–"मेम साहब ने गौर नहीं किया । उस त्रिभुज के केन्द्र में एक बिन्दु भी था । त्रिभुज के तीनों कोनों पर अष्टभुजा, विन्ध्याचल और काली खोह स्थित हैं । उसका केन्द्र बिन्दु यही आश्रम स्थल है ।"

माँ के आश्रम में एक गुफा है जिसमें एक शिव लिंग है । एक पत्थर है जिस पर माँ के युगल चरण खुदे हैं । यह ध्यान के लिये बड़ा उपयुक्त स्थान है । मौनी माँ नाम की एक उच्च साधिका थीं । वे माँ की अनन्य भक्त थीं । एक दिन जब वे गुफा में ध्यान कर रही थीं तो माँ का वह पाद पीठ उनके सम्मुख जाज्वल्यमान रूप में प्रकाशित हो उठा था ।

माँ के आश्रम में आम के दो बड़े-बड़े वृक्ष थे । उनकी घनी घनी छाया थी । मीठे-मीठे फल थे । माँ कभी-कभी वहाँ बैठा करती थीं । उनका फल खाती थीं । अचानक वे दोनों पेड़ मर गये । उनके विषय में पूछने पर माँ ने बताया था–"कभी-कभी ऋषि-मुनि भी वृक्षों के रूप में जन्म लेते हैं । ये दोनों भी ऋषि थे । इस छोटी बच्ची (माँ स्वयं) को थोड़ी छाँह देने एवं फल खिलाने की कामना शेष थी । इसीलिये ये जन्मे थे । उनकी इच्छा पूरी हो गयी और वे अपने धाम (मोक्ष) को चले गये ।" माँ ने उन वृक्षों की लकड़ियों को सहेज कर रखने के लिये कह दिया था । सन् 1947

से 1950 तक वाराणसी के आश्रम में सावित्री महायज्ञ हुआ था । यह यज्ञ तीन वर्षों में पूरा हुआ था । इसमें एक करोड़ गायत्री मंत्रों के साथ आहुतियाँ दी गयी थीं । सम्भवतः वाराणसी के इतिहास में यह सबसे बड़ा यज्ञ था । उस यज्ञ में उन लकड़ियों का प्रयोग करके माँ ने उन्हें सम्मानित किया था ।

माँ हर कुम्भ में जाती थीं । वे कुम्भ के आकर्षण का केन्द्र होती थीं । सभी साधु सन्त उनका सम्मान करते थे । सन् 1982 में प्रयाग में अर्ध कुम्भ है यह सुनकर महानिर्वाणी अखाड़े के सन्त लोग आये और माँ से कहा–"आप तो कुम्भ की ज्योति हैं । आपके न रहने पर कुम्भ सूना हो जायेगा । अतः निवेदन है कि आप अवश्य पधारें ।" उनके निवेदन पर माँ कुम्भ में गयीं । लौट कर फिर विन्ध्याचल आश्रम आयीं और कुछ दिन विश्राम किया । स्थूल रूप से इस आश्रम में माँ का वही अन्तिम प्रवास था ।

आज माँ शरीर में नहीं हैं लेकिन आश्रम के कण-कण में वे सूक्ष्म रूप से आज भी रची बसी हैं ।

'जय श्री माँ' ।

●

"सत्संग क्या ? ना, स्व– अर्थात् वही भगवान, सच्चिदानन्द स्वरूप, आत्म-स्वरूप, जो कहते हैं । स्व का संग, स्व-अंग अर्थात सर्व अंग ही भगवान का नित्य प्रकाशित । वह संग होने के लिए, इसलिए ही कहा जाता है, अंग माने सत्संग करो, स्व-अंग होने के लिए ।"

–श्री श्री माँ

चराचर जगत् में परिव्याप्त गुरु श्रेणियाँ

—डॉ. विमला कर्णाटक

(पूर्व प्रकाशित के बाद)

समुद्र से प्रसन्नता एवं गम्भीरता की शिक्षा

मनुष्य को सर्वदा समुद्र की भाँति प्रसन्न और गम्भीर रहना चाहिये । मनुष्य का सात्त्विक भाव अथाह, अपार और असीम होना चाहिये तथा किसी भी निमित्त से उसे क्षोभ न होना चाहिये । उसे ठीक वैसे ही रहना चाहिए, जैसे ज्वार-भाटे और तरङ्गों से रहित शान्त समुद्र । समुद्र वर्षा ऋतु में नदियों की बाढ़ के कारण बढ़ता नहीं और ग्रीष्म ऋतु में घटता नहीं है । वैसे ही भगवतपरायण साधक को भी सांसारिक पदार्थों की प्राप्ति से न तो प्रफुल्लित होना चाहिये और न उसके घटने से उदास ही होना चाहिये ।

पतंग की भाँति अपना सर्वनाश न करने की शिक्षा

अग्निशिखा पर अत्यन्त मोहित होकर जैसे पतंग, आग में कूदकर, अपना सर्वनाश कर बैठता है, वैसे ही अपनी इन्द्रियों को वश में न रखनेवाला पुरुष स्त्री पर मोहित होकर अपने लक्ष्य से च्युत हो जाता है । अतः मनुष्य को अपनी विवेक बुद्धि खोकर पतंगे की भाँति अपने को नष्ट नहीं होने देना चाहिये । क्योंकि यह मानव जीवन अत्यन्त दुर्लभ है ।

भ्रमर से सार-संग्रह की शिक्षा

हे राजन् मैंने भ्रमर से सार-संग्रह की शिक्षा ली है । जिस प्रकार भौंरा विभिन्न पुष्पों से चाहे वे छोटे हों या बड़े - उनका सार (पराग) संग्रह करता है, वैसे ही बुद्धिमान् पुरुष को चाहिये कि छोटे-बड़े सभी शास्त्रों से उनका सार (तात्पर्य) ग्रहण करे । उनके मतभेदों और उलझनों में अपनी बुद्धि को न थकाये । नहीं तो वह अपने उद्देश्य में असफल हो जाता है । जो गति किसी एक कमल का रस पीने वाले भौंरे की होती है, अर्थात् वह आसक्तिवश वहीं बंधकर नष्ट हो जाता है ।

मधुमक्खियों से संचय न करने की शिक्षा

हे राजन् ! मधुमक्खी से यह शिक्षा ग्रहण की है कि संन्यासी को अग्रिम दिवस के लिये भिक्षा का संग्रह नहीं करना चाहिये, अन्यथा मधुमक्खियों की तरह उसका जीवन ही दूभर हो जाता है । क्योंकि संग्रह शील मधुमक्खियाँ अपना जीवन भी गँवा बैठती हैं ।

हाथी से असङ्गता की शिक्षा-

हाथी से यह शिक्षा मिलती है कि संन्यासी को कभी पैर से भी काठ की बनी हुई स्त्री का स्पर्श नहीं करना चाहिये, अन्यथा जैसे हथिनी का संग करने वाले हाथियों को दूसरे बलवान् हाथी मार डालते हैं, वैसे ही स्त्रीसंग करने वाले साधकों को भी दुर्दशा भोगनी पड़ती है ।

मधु सञ्चय करने वाले की अपेक्षा दूसरे के लाभान्वित होने की शिक्षा

हे राजन् ! मैंने मधु निकालने वाले पुरुष से यह शिक्षा ग्रहण की है कि संसार के लोभी पुरुष बड़ी कठिनाई से धन का संचय तो करते रहते हैं किन्तु उसका उपभोग अथवा दान नहीं करते हैं । बस, जैसे मधु निकालने वाला मधुमक्खियों द्वारा सञ्चित रस को निकाल ले जाता है, वैसे ही उनके संचित धन को भी उसकी टोह रखने वाला कोई दूसरा पुरुष ही भोगता है । अतः मनुष्य को सञ्चित धन का दान आदि द्वारा उचित प्रयोग करना चाहिये ।

हरिण से विषय-गीत न सुनने की शिक्षा

हे राजन् ! मैंने हरिण से यह सीखा है कि वनवासी संन्यासी को कभी विषय-सम्बन्धी गीत नहीं सुनना चाहिये । अन्यथा विषय रूपी बहेलिये के गीत से मोहित होकर वह बँध जाता है । संन्यासी हिरण की भाँति विषय-गीत की कठपुतली बन जाता है ।

मत्स्य से जिह्वा-नियन्त्रण की शिक्षा

जैसे मछली कांटे में लगे हुए मांस के टुकड़े के लोभ से अपने प्राण गँवा देती है, वैसे ही स्वाद का लोभी दुर्बुद्धि मनुष्य भी अपनी बलवती जिह्वा के वश में हो जाता है और मारा जाता है । इसलिये सबसे कठिन है स्वाद-इन्द्रिय पर विजय प्राप्त करना । मनुष्य तब तक जितेन्द्रिय नहीं माना जाता है, जब तक वह रसनेन्द्रिय को अपने वश में नहीं कर लेता है ।

पिंगला से येन केन प्रकारेण धन संग्रह की हठमूल कामना परित्याग की शिक्षा

पिंगला वेश्या की स्वेच्छाचारिता, जो धन संग्रह की हठ मूलकामना के निमित्त उसके विनाश का कारण बनी । जब उसे अपने स्वरूप का यथार्थ बोध हुआ, तब तक बहुत देर हो चुकी थी । उसे बोध हुआ कि अरे, मेरे हृदय में ही सच्चे स्वामी भगवान् विद्यमान हैं । वे ही वास्तविक प्रेम-सुख और परमार्थ का सच्चा धन भी देने वाले हैं । मैं तो 'कस्तूरी कुण्डल बसे मृग ढूँढ़े वनं माही' की भाँति इधर-उधर भटकती रही । हे राजन् ! सचमुच आशा ही सबसे बड़ा दुःख और निराशा ही सबसे बड़ा सुख है । क्योंकि पिंगला वेश्या ने जब पुरुष की आशा त्याग दी, तभी वह सुख से सो सकी ।

कुरर पक्षी से अकिञ्चनभाव से रहने की शिक्षा

कुरर पक्षी जब तक अपनी चोंच में मांस का टुकड़ा लिये हुए था, तब तक दूसरे बलवान् पक्षी, जिनके पास मांस नहीं था, उससे छीनने के लिये उसे घेरकर चोंचें मारने लगे । ऐसी अवस्था में जब कुरर पक्षी ने अपनी चोंच से मांस का टुकड़ा फेंक दिया, उसे तभी सुख मिला । तात्पर्य यह है कि परिग्रह से ही दुःख है । हे राजन् ! जो बुद्धिमान् पुरुष यह बात समझकर अकिञ्चनभाव से रहता है, उसे अनन्त सुखस्वरूप परमात्मा की प्राप्ति होती है ।

बालक से आत्मक्रीड की शिक्षा

मैंने बालक से आत्मक्रीड (मौज मस्ती से निश्चिन्त) रहने की शिक्षा ग्रहण की है । इस जगत् में दो ही प्रकार के व्यक्ति निश्चिन्त और परमानन्द में मस्त रहते हैं, एक तो भोला-भाला नन्हा सा बालक और दूसरा वह पुरुष जो गुणातीत हो गया हो ।

कुमारी कन्या से एक में विवाद की स्थिति न उत्पन्न होने की शिक्षा

एक दिन कुमारी कन्या जब घर पर अकेले थी, उसे वरण करने के लिए कुछ व्यक्ति पहुँच गये । उसने स्वयं उनके आतिथ्य सत्कार की व्यवस्था की । भोजन कराने के लिये जब धान कूटने लगी तो उसके हाथों की चूड़ियाँ जोर-जोर से बज रही थीं । ऐसी आवाज सुनकर अतिथि लोग समझ जायेंगे कि इसके घर में चावल नहीं है । इसलिये उसने हाथ में दो-दो चूड़ियाँ बचाकर अन्य सभी चूड़ियाँ तोड़ दीं । लेकिन जब दो-दो चूड़ियाँ भी हाथ में टकराने लगीं तो उसने दोनों हाथ की एक-एक चूड़ी और तोड़ दी । उस समय लोगों का आचार-विचार परखने के लिये इधर-उधर घूमता हुआ मैं कन्या के घर जा पहुँचा । हे राजन् ! मैंने उससे यह शिक्षा ग्रहण की कि जब बहुत लोग एक साथ रहते हैं तब कलह होता है और दो आदमी साथ रहते हैं तब भी बातचीत तो होती ही है; इसलिये कुमारी कन्या के समान अकेले ही विचरण करना चाहिये ।

धनुषकार्मिक से तन्मयता की शिक्षा

हे राजन् ! मैंने बाण बनाने वाले से यह सीखा है कि आसन और श्वास को जीतकर वैराग्य और अभ्यास के द्वारा अपने वश कर मन को एक लक्ष्य में लगा दे । जब परमानन्दस्वरूप परमात्मा में मन स्थिर हो जाता है, तब धीरे-धीरे कर्मवासनाओं की धूल धुल जाती है । सत्वगुण की वृद्धि से अन्य वृत्तियों का त्याग हो जाता है और फिर मन वैसे ही शान्त हो जाता है, जैसे ईंधन के बिना अग्नि । मैंने देखा कि एक बाण बनाने वाला कारीगर बाण बनाने में इतना तन्मय हो रहा था कि उसके पास से ही दलबल के साथ राजा की सवारी निकल गई और उसे पता तक न चला ।

सर्प से एकाकी विचरण की शिक्षा

हे राजन् ! मैंने सर्प से यह शिक्षा ग्रहण की है कि संन्यासी को सर्प की भाँति अकेले ही विचरण करना चाहिये ।

मकड़ी के द्वारा जाल संरचना से शिक्षा

जैसे मकड़ी अपने हृदय से मुँह के द्वारा जाल बुनती है, उसी में विहार करती है और अन्त में उसे निगल जाती है । वैसे ही परमेश्वर भी इस जगत् को अपने में से उत्पन्न करते हैं, उसमें जीव के रूप में विहार करते हैं और फिर उसे अपने में लीन कर लेते हैं । अतः मनुष्यों को संसार के प्रति आसक्ति नहीं रखनी चाहिए ।

भृङ्गी से तद्रूपता की शिक्षा

हे राजन् भृंगी से मैंने तद्रूप होने की शिक्षा ग्रहण की है । यदि प्राणी स्नेह से द्वेष से अथवा भयवश भी जानबूझ कर एकाग्ररूप से अपना मन किसी में लगा दे तो उसे उसी वस्तु का स्वरूप प्राप्त हो जाता है । जैसे भृङ्गी एक कीड़े को ले जाकर अपने बिल में बन्द कर देता है और वह कीड़ा भय से उसी का चिन्तन करते-करते उसी शरीर से तद्रूप हो जाता है । इसलिये मनुष्य को अन्य भौतिक वस्तु का चिन्तन न करके केवल विराट् शक्ति (परमात्मा) का ही चिन्तन करना चाहिये ।

हे राजन् ! इस प्रकार मैंने अनेक गुरुओं से शिक्षा ग्रहण की । इतना ही नहीं यह शरीर भी मेरा गुरु है । क्योंकि यह मुझे विवेक और वैराग्य की शिक्षा देता है । हे राजन् ! आयु पूरी होने पर यह स्वयं तो नष्ट होता ही है, वृक्ष के समान दूसरे शरीर के लिये बीज बोकर उसके लिये भी दुःख की व्यवस्था कर जाता है । जीवनकाल में ज्ञानेन्द्रियाँ और कर्मेन्द्रियाँ इसे सताती रहती हैं । अपना-अपना विषय ग्रहण करने के लिये आतुर रहती हैं । वैसे तो भगवान् ने अपनी अचिन्त्य शक्ति से पशु पक्षी आदि अनेक योनियाँ रचीं, परन्तु उनसे उन्हें सन्तोष न हुआ । तब उन्होंने मनुष्य की सृष्टि की । यह मनुष्य शरीर ऐसी बुद्धि से युक्त है जो विराट् शक्ति (ब्रह्म) का साक्षात्कार कर सकता है । इससे उन्हें बड़ी प्रसन्नता हुई कि यदि मनुष्य चाहे तो अपने जीवन के मुख्य उद्देश्य मोक्ष (ब्रह्मरूपता) को प्राप्त कर सकता है । अतः हे राजन् ! मनुष्य को अपने जीवन को व्यर्थ नहीं जाने देना चाहिये । सृष्टि रूपी ग्रन्थ शिक्षित करने के लिये सर्वत्र खुला हुआ है । इस प्रकार राजा यदु ने ब्रह्मवेत्ता दत्तात्रेय से जीवन के मर्म को समझा ।

●

आनन्दमयी स्मृति

– चित्रा घोष

२७ जून, शुक्रवार, सोलन 1958

आज रात को माताजी अपने कमरे में बैठकर शंकरभारती के तिरोधान के सम्बन्ध में काफी चर्चा करती रहीं । सच्चे महात्मा थे अपनी पूरी शक्ति का प्रयोग किया था । पहले पहल यह शरीर जैसे सबका हाथ लेकर मस्तक पर स्पर्श कर नमो नारायण करता है वैसे करने पर झट् से दूर हट गये । उसके बाद ऐसा न करके दूर से नमोनारायण करती थी । आखिरी बार वाराणसी में जब एकान्तवार्ता करने आये तब अपने आप ही माँ के हाथों को लेकर मस्तक पर स्पर्श कराया । माँ ने कहा, तब मानो शिशु का भाव, परिचय मानो चिरकाल का है । इस भाव से तीन घन्टे तक बातचीत हुई । शब्द वाणी दो तरह सुनाई पड़ते हैं । एक तो काल्पनिक मन की बात होती है । वे तो जाग्रत शुद्ध मन की वाणी सुनते थे, पर जिस बाधा विघ्न की बात कही गयी, वह तो इस शरीर के साधन जीवन में भी हुआ था । इस शरीर ने सुनते सुनते कहा "यह सुना हुआ है ।" जो कह रहे हैं वह सुनने की क्रिया है । यह तीन पोटली-त्रिपुटी नाश होना, इसके भी पार जाना होगा । मैं ऐसा सुनना नहीं चाहता । यह वाणी दुःखजनक है । यह सब भाव के पार जाने का प्रयास करते हैं । पिताजी चाहते थे, अपने ही अपने भाव में मग्न रहना । यह सब वाणी उसमें बाधायें पहुँचा रही हैं, इसका कारण क्या है ? माँ ने कहा था, "वह सब आते हैं आने दो, कुछ परवाह नहीं करना, लक्ष्य स्थिति में पहुँचने की इच्छा । मनोनाश न होने से वह होता नहीं । जिस स्थिति में थे उससे ऊपर जाने की इच्छा । बीच में बाधा कम हो गयी थी ।

मृत्यु के कुछ दिन पहले माताजी को अपने हाथों से पहली बार पत्र लिखा, फिर से विघ्न आया है - माँ जो उचित समझें ।

एक बार शंकर भारती जी ने माताजी गेरुआ (काषाय वस्त्र) क्यों नहीं पहनती इस पर विचार करने के बाद में कहा, गेरुआ तो स्थिति के अनुसार पहना जाता है । माताजी तो सब स्थिति से परे हैं । अतः किसी रंग का प्रश्न ही नहीं है । माताजी के श्री शरीर पर तो सफेद ही ठीक है ।

× × ×

५ सितम्बर, शुक्रवार, वाराणसी

इस बार जन्माष्टमी में गोपाल जी का कालन दीदी से मुकुट माँगने के प्रसंग ने सबको मोह लिया । घटना यह हुई कालन दीदी अपने नियमानुसार प्रतिदिन प्रातः काल वाराणसी आश्रम स्थित गोपालजी के दर्शन करने जाती हैं । मार्च महीने के एक प्रातः प्रतिदिन की भाँति कालन दीदी श्री गोपालजी के दर्शनों को गयीं । गोपाल जी को प्रणाम् करते हुए उन्होंने सुना "हर समय क्या चाँदी

का मुकुट पहनना अच्छा लगता है ।" उन्होंने इस बात पर कोई ध्यान नहीं दिया । दूसरे दिन जब वह पुनः प्रणाम करने गयीं तो कल की बात उन्हें सुनायी पड़ी । उनका दृढ़ विश्वास हो गया । हो न हो श्री गोपाल जी की यह साक्षात् वाणी है । ऐसा उनको विश्वास हो गया कि गोपाल जी ही उनसे सोने के मुकुट के लिये मचल रहे हैं । उन्होंने मन ही मन सोचा लड़के को महीने - महीने जो २५० रुपये देना पड़ता है, यदि उसकी नौकरी होती तो देना नहीं पड़ता और उसी से ही सोने के मुकुट का खर्च निकल आता ।

देखा जाय गोपाल जी जो कराते हैं । इधर १५ दिनों के भीतर उनके लड़के की नौकरी भैया (श्री बी. के. शाह) के आफिस में लग गयी । पर फिर भी छह महीनों तक कालन दीदी सोने के मुकुट का आर्डर नहीं दे रही हैं ।

वर्षा के दिन थे अगस्त का महीना था । दोपहर को अपने कमरे का ताला खोल कर कालन दीदी ने देखा कि बिस्तर पर जहाँ तकिया है और पलँगपोश से ढका भी है वहाँ पर धूल से भरे दो छोटे-छोटे चरणों के छाप हैं । कोई मेरे बिछौने पर चढ़ा होगा सिरहाने की ओर रखे हुए गोपाल जी के चित्र को उतारने के लिये । यह कहते हुए धूल से भरे पद चिन्हों को दो तीन जन को दिखा कर झाड़ दिया । जिन्होंने पद चिन्हों को देखा था उन्होंने आकर कन्यापीठ की सबसे छोटी लड़की (चार साल) शुक्ला के पैरों से नाप कर देखा पर उक्त पद चिह्न और भी छोटे थे । तब कन्यापीठ की तत्कालीन व्यवस्थापिका क्षमादी ने कहा, गोपाल जी को मुकुट नहीं दे रही हैं यह उन्हीं का ही काम है । बारिश के दिनों में धूल कहाँ से आयेगी ।" माताजी ने दिल्ली में यह प्रसंग सबको सुनाया ।

कालन दीदी के विशेष अनुरोध से माताजी इस बार वाराणसी आयी हैं, सोने का मुकुट पहनाने । माताजी ने आते ही कहा था; "काले में काला एक हो गया, काले के बिछौने पर काले की छाप ।" कालन दीदी को उद्देश्य करके ही माताजी कह रही थीं । कालनदीदी का रंग काला था । माताजी ने आगे कहा–"चेहरा काफी उज्ज्वल हो गया है । हर वक्त एक लक्ष्य गोपालजी की चिन्ता में मग्न । कुर्ता, बिछौना सब रात जागकर बनाया है इसीलिये मोटी हो गयी हैं । माताजी आज शाम के चार बजे विन्ध्याचल गयीं ।

जन्माष्टमी पर माताजी अधिक समय तक गोपाल जी के कमरे में ही थीं । माताजी ने कहा, जाग्रत ठाकुर हैं । घर-घर में रखकर पूजा करनी चाहिये । स्नान के बाद माताजी के निर्देश से चित्र लिये गये । मामाजी पीले रंग का उत्तरीय (चादर) ठीक से नहीं पहना सक रहे थे । यह देखकर माताजी ने खुद ही बड़े ही सुन्दर ढंग से गोपाल जी को उत्तरीय पहना दिया । सोने का मुकुट पहनाकर गोपालजी को खूब आदर किया । नीचे चण्डीमण्डप में हम लोगों के ठाकुरजी थे । सुशील (सत्यानन्द) ने बड़ी ही सुन्दर रंग बिरंगी अल्पना बनाई थी । माताजी नीचे आरती के समय आकर बैठीं । गोपालजी की पूजा के समय फिर ऊपर गयीं ।

जन्माष्टमी का सब से सुन्दर अनुष्ठान था कन्यापीठ के ठाकुर घर में माताजी की पूजा । माताजी को गंगा दी ले गयीं । माताजी ठाकुरघर के सिंहासन पर बैठीं । गंगादी ने माताजी को पीले

रंग की धोती, गुलाबी बनारसी चादर, गुलाबी गुलाबों का मुकुट, फूलों की बाँसुरी हाथों में । चरणों में चाँदी का पाजेब पहना दिया । पहले माताजी कह रही थीं "मैं एक दौड़ लगाऊँगी - बारह बजने को दस मिनट है सबसे कह देना ध्यान-जप करने, शंख ध्वनि करने ।" जो मेरे प्रिय इष्ट हैं । आत्मा प्राणों के प्राण - वे इस समय प्रकट हुए हैं । उनकी बात शान्त होकर बैठकर मैं सोचूँगी ।" हमलोगों से माताजी ने यह कहा । उसके बाद चन्दन ने जब पूजा प्रारम्भ की माताजी ने आँख बन्दकर हाथ जोड़कर सब ग्रहण किया । मिश्री मक्खन, नारियल के लड्डू सभी कुछ किंचित् किंचित् स्वीकार किया । हम लोगों ने माताजी को पुष्पाञ्जलि प्रदान की । दूसरे दिन नन्दोत्सव था । लड़कियों ने माँ के सामने भगवत् चरित्र की लीला की । कानू बलाई को लेकर छोटे बच्चों की तरह खेल करने लगीं, दही छिड़कने के माध्यम से । माताजी गोविन्द- गोविन्द प्राण-गोविन्द, राधे गोविन्द, राधा रमण हरि आदि कीर्तन करने लगीं ।

१० सितम्बर बुधवार.

माताजी आज विन्ध्याचल से शाम को लौटीं ।

●

"मैं सबसे बड़ी भिखारी हूँ । तुम्हारे लोभ मोह अभिमान की भिक्षा माँग रही हूँ तुम्हारे मन्दिर के देवता के चरणों में अर्पण करने के लिए ।

—श्री श्री माँ

ध्यान क्या है ?

(पूर्व प्रकाशित के बाद)

—श्री टी. के. घई

ध्यान जब अभ्यास बन जाता है तब उसका असर साधक के जीवन पर पड़ता है । ५-१० मिनट का सच्चा सहज ध्यान साधक को पूरे दिन शान्ति और ताजगी देता है, जो सामान्य मनुष्य काफी पैसे खर्च करने पर भी नहीं पा सकता है ।

ध्यान का असर आध्यात्मिक जीवन पर तो पड़ता ही है, साथ-साथ साधक के स्वभाव पर भी पड़ता है । जब साधक का प्राकृतिक स्वभाव ऊपर को गतिमान होता है और सात्विकता में प्रवेश करता है तो यह समझना चाहिये कि ध्यान को सुन्दर फल भगवान दे रहे हैं ।

हृदय की और आँखों की निर्मलता ध्यान का प्रथम चरण है । साधक के मन और अन्तःकरण में शान्त भाव की धारा सतत बहने लगती है । चाहे वह घर का या बाहर का काम करता हो उसका अंतःकरण हमेशा ईश्वर के साथ जुड़ा रहता है । उसके भीतर चल रहे विचारों, विवादों और चर्चाओं का अन्त हो जाता है । मन में जब स्वस्थता और शान्ति आये तो समझना चाहिये कि प्रभु साधक को बालक की तरह एक सीढ़ी आगे खींच रहा है । हृदय से किया गया ध्यान, सतत अभ्यास और सद्गुरु की कृपा सब मिलकर भावातीत ध्यान को अद्वैत में बदलते हैं । यह साधक की साधना के रूप में अन्तिम अवस्था है । उस के बाद प्रभु कृपा ही केवलम् ।

परमात्मा स्वयं रस का दाता है । यदि उसकी अनुभूति करनी है और उसे पाना है तो उसके प्रेमसागर में गोता लगाना ही पड़ेगा । किनारे खड़े-खड़े तो उसकी झाँकी कैसे देख सकते हैं । प्रेम के समुन्दर का महासुख पाना है तो ईश्वर प्रेम के सागर में सद्गुरु का हाथ पकड़कर छलाँग लगानी ही पड़ेगी ।

भगवान श्री कृष्ण ने स्वयं गीता में कहा है कि ज्ञानी भक्त मुझे अति प्रिय है । ज्ञानी भक्त भगवान का भाव हृदय में रखकर साधना करेगा । वह सद्गुरु द्वारा यथार्थ ज्ञान प्राप्त करेगा । सद्गुरु साधक को आत्मा की अनुभूति के उसी मार्ग पर प्रेम से ले जायेंगे जिस पर वे खुद चलकर प्रकाश को प्राप्त हुए हैं । आगे बढ़ने के लिये सद्गुरु में पूर्ण श्रद्धा और उनके वचन में पूर्ण विश्वास चाहिये । भगवान भी कहते हैं "श्रद्धावान् लभते ज्ञानम्" ।

ज्ञान का दीपक और ध्यान का मार्ग दोनों एक दूसरे के पूरक हैं । योग्य समय पर वैराग्य का फल मिलेगा । ध्यान का फल वैराग्य है । "सहज वैराग्य" का अर्थ है, कुछ भी जबरदस्ती नहीं छोड़ना है, सब अपने आप ही स्वाभाविक रूप से टूटता जाता है । जैसे-जैसे संसार मन से टूटता जायेगा, परमात्मा का शुद्ध दिव्य प्रकाश अन्तर में फैलता जायेगा और उसकी अनूभूति होती

जायेगी । मन जैसे-जैसे संसार से विरक्त होता जायेगा, वैसे-वैसे ईश्वर के शुद्ध प्रेम की अटूट और अख़ण्ड धारा बहना शुरू हो जायेगी । इसे व्यर्थ न बहने देना यह साधक का कर्तव्य होगा । वही उसकी साधना होगी ।

ध्यान में आसन सिद्ध होने के बाद जरूरी नहीं कि एक ही आसन पर बैठकर और आँखें मूद कर ध्यान हो । साधक खुली आँख से भी सतत ध्यान कर सकता है । ऐसा ध्यान परमात्मा के साथ नित्य अनुसन्धान है । चाहे कुछ भी काम करें, अन्तरमन तो प्रभु के पास रहे । उसमें दिव्यता है, प्रसन्नता है । ध्यान का मूल यह है कि साधक अपने को एक क्षण भी ईश्वर से अलग न कर सके । प्रभु के प्रेम का प्रत्युत्तर उसे जरूर मिलेगा

"मन सागर संसार में, तरंग-तरंग नित होई ।
चरण कमल नित ध्यान में, तरगांतीत मैं होई" ॥ १ ॥

"प्रणाम दो तरह के होते हैं । एक तो जैसे भरे हुए घड़े को उलट कर पानी उड़ेल दिया । उसी तरह हृदय और मन का सब भार उड़ेल कर अपने इष्ट को समर्पण कर देना । और दूसरा जैसे 'पाउडर बक्स' के छोटे छोटे छेदों से पाउडर छिड़कना, इसमें मन का अधिकांश भाव मन के अन्दर ही रह जाता है ।"

—श्री श्री माँ

पराज्ञान

–सीतारानी, (मकड़ाई)

धरती में जिस तरह नदी दोनों तटों को सींचती वन उपवनों को घनत्व देती चलती है एवं निज उद्गम "महा समुद्र" की ओर उमंग सहित बढ़ती है, मनुष्यों को भी निज उद्गम की यात्रा में सहयात्रियों के संग भातृत्व बांटते सृष्टिकर्ता के गुण गाते बढ़ना है ।

सृष्टिकर्ता वह है जो सृजन के सारे आयाम और सृजित सभी वस्तुओं के अणु-अणु के स्वयं बीज हैं । साथ ही स्वयं निर्लिप्त भोक्ता भी आप ही हैं । ऐसे वे शौर्य के सागर जो एकमात्र अकेले हैं उन्हें कोई भी व्यक्ति उच्च ज्ञान में समर्थ हुए बिना जान नहीं सकता । श्रद्धावान सद्चित्त से तत्वज्ञ- सद्गुरु के दिग्दर्शन मैं सत्चिंतन एवं सत्कर्मों से चित्त को परिमार्जित करते रहने पर हृदयाकाश में विज्ञान-अनुमोदित उत्तर अंकित हो ही जाते हैं । जैसे कि–

1. मन के चिन्तन की उत्कृष्टता,
   शुद्ध आचरण को जन्म देती है ।
2. शुद्ध आचरण जितना घनीभूत-सशक्त होगा, चित्त को जीवन तत्व समझने की योग्यता प्रदान करता है ।
3. चित्त अपनी योग्यता में जितना पुष्ट होगा, जीवन तत्व समझ में बैठता रहेगा ।
4. जीवन तत्व जितना समझ में आयेगा, कर्म उतना ही महान बनता जायेगा और विश्वास पंख लगा के उड़ने लगेगा, वही हमें विकास की ओर ले जायेगा । इसलिए चित्त को उपयुक्त रखने के लिये मनन-चिंतन निर्मल रखना आवश्यक है । शौर्य आदि पुरुषार्थ जहाँ से उत्पन्न होते हैं, उन अगम-पुरुष का संदेश है :–
   "निर्मल मन जो, सो मोहि पावा
   मोहि कपट, छल, छिद्र न भावा ।"
   सारे ही धर्माचरण, तीर्थव्रत, पूजा-पाठ, परोपकार की परिणति इसी में है–

मन को:–विकृति हीन होना है । वचन को:–सत्य अनुशासित रहना है । ज्ञान को:–पूर्ण शाश्वत नीति हृदयंगम करके आचरण में ढलते जाना है । भक्ति को:–शुद्धाचरण से चलकर निर्मल कार्य को जन्म देना है । कर्म को:–निर्भीकता प्राप्त कर शौर्यप्रद आदर्श–व्यक्तित्व गठन करना है ।

सुकृति

शुद्धचित्त एवं उत्कृष्ट कर्म के बिना हमारे जीवन में दैन्य व संकोचन आरम्भ होता है । मानव-विकास श्रेष्ठता की ओर न ज़ाकर निम्नगति में ढलने लगता है । फलस्वरूप हृदयस्थान में असहजता, व्यवहार में कपटता, मस्तिष्क में उलझन, वाणी में कटुता उपजकर व्यक्तित्व अमानवीय

हो जाता है । सौष्ठव पूर्ण रहन-सहन, कथन, व्यवहार की मंजूषा खोकर, जीवन का माधुर्य ही लोप हो जाता है । कृतिं को पंकिल रखने पर कर्ता कितना भी बलवान क्यों न हो, "पंक" में धँस ही जाता है । यही देखते आते हैं जीवन को परखने वाले अनुभूति-सम्पन्न विद्वतजन । मनुष्य तो वही है जिसने अपने शौर्य को विकासोन्मुख रखकर परिसर सहित स्वयं को आलोकित रखा है; जिस प्रकाश-पुन्ज में निर्बल भी अपने अनसुलझे-ग्रन्थी को सुलझा सके और यह भी कि क्रमशः आयु प्रवाह में क्षीण होते चलते अपनी देह को । विश्वपिता की आरती को–प्रज्ज्वलित ज्योतिआधार "पलिता" समझ सके । हम मानव को, प्रकृति की अनुकूलता की मात्र बाट न जोहकर, अमूल्य-समय का सदुपयोग करना है तथा राह बनाने जुट जाना है ।

सर्वे भवन्तु सुखिनः

पूजा–अर्चना स्थलों में "सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामया" की वेद-ध्वनि द्वारा, आचार्य गण आराधकों का सृष्टि-कल्याण के मूलमंत्र की ओर ध्यानाकर्षण कराते हैं । अकाल-पुरुष के सर्वव्याप्त पादपद्मों में हम अपने पल-छिन "सुवासित पुष्प ज्यो" अर्पण करके सुख पावें तो चहूँ ओर सुन्दरता खिले, मंगल जाग उठे ।

संसार में "प्रकृति के विधिनियम" अनुसार अगर उन कल्याणमय महामन्त्र का प्रसार न हो तो अपने लाड़ले सृजितों को कल्याण–पथ से भ्रष्ट देखकर ईश्वर भी विचलित होता. । यह प्रकृति की सुषमा, नैसर्गिक–मोहकता कहाँ दृष्टि–गोचर होती ? सब कुछ स्वार्थ के प्रहार से उजड़ गया होता, और उस उखड़े-उद्यान में विधाता भी सिर धुनने को विवश होता ।

हमारी श्री सम्पत्ति-शालिनी धरा जननी असहयोग की आग एवं दुर्वासना की विभीषिका से त्रस्त न हो । जिस पुण्य भू में उमड़ते "पराज्ञान" के सिंचन से महामानवों को गढ़ती आई है वसुन्धरा, जहाँ भरण-पोषण को विचरती है अन्नपूर्णा, दुर्गति नाश को सक्रिय है दुर्गा, विद्यादान को हंसवाहिनी शारदा, एवं ज्ञानदान से कल्याण-विभाग की शाखाओं को हरियाली पहुंचाने श्मशान-श्मशान विचरते हैं आशुतोष ।

पराभक्ति

ऐसी ऐश्वर्यशालिनी धरणी की पराभक्तिदायी अमृत-धारा के आकांक्षी रहते हैं सभी देव–गन्धर्व–मानव । जिस धारा को छूकर बहती हवाओं का एक झोंका भी साधारण मानव को महामानवता की ओर बढ़ाता चलता है । धरा की इसी विशिष्टता के कारण जीवन–मुक्त जन भी पावन पृथ्वी को नमन करते हैं । भक्ति में विभोर साधक कह उठते हैं–

"प्रभुजी तुम घन और मैं मोरा
जैसे चितवत चन्द्र चकोरा ।"

हे सृष्टिमय मिठास में घुलना (परा–मुक्ति) नहीं प्रभु भक्ति में "मधुकर" बनना चाहते हैं ।

छहो शास्त्र, अठारह पुराणों के रचनाकार श्री वेदव्यासजी के भी मन को तब तक तृप्ति न मिली जब तक धरा में ही सृजन को नायक बना कर कालिन्दी के तीर, गोपी–ग्वाल के बीच न नचा लिये, गोपाङ्गनाओं को जार-जार न रुला लिये, एवं 'तीनों भुवन के धनी' को मोर-पिच्छ, जंगली-गुन्जा न पहिरा लिये । पूज्यपाद श्री व्यास जी के "चित्तपटल" पे शृंगारिकता रसिकता, अजेय-पौरुषता, भगवत्ता का समन्वय एक ही मेधा सम्पन्न व्यक्ति में जब तक न करवा लिया, तब तक व्यास जी की रचना में परब्रह्म ने चैन नहीं पाया । जगताधार की मुरली-ध्वनि से स्थावर-जंगम, स्वर्ग, मर्त्य को बावरा न बना लिया, प्रकृति-पुरुष का यथार्थ रास न रचवाया एवं महाज्ञानी अक्रूर जी के रग-रग में रसीली-भक्ति की मुग्धकारी धारा प्रवाहित न करा ली, सर्व नियंता ने रचनाकार की लेखनी को विराम न दिया, न ही लेखक को शान्ति बख्शी । अपने भक्तों के आकर्षण के कारण ईश्वर को भी यह धरती बड़ी प्यारी है । क्योंकि अपने सृजन में चरम-उत्कृष्टता पाने के लिए उनको भी यह हिरण्यगर्भा-वसुन्धरा की मृत्तिका ही तो उपयुक्त लगती है ।

मिलनोत्सव

पृथ्वी में हमें सब को संग लेकर सद्भावना बाँटते हुए चलना है । ईश्वर करें हमारा मन सर्वकल्यांण में सदा जाग्रत रहे । नहीं तो "भव–हाट" की भूल-भुलैया में बन्धुही न रह जाने से एकाकी रह जायेंगे । इसलिए कल्याण योजना के अन्तर्गत हर्षोल्लास बाँटते चलने के लिये वर्ष भर में कितने ही मिलनोत्सव मनाये जाते हैं । होली, दीपावली, नवरात्र, गणेशोत्सव, विवाह, जन्मोत्सव जैसे त्यौहार इसके रूप हैं ।

रचनात्मक कार्यों का आग्रही हमारा क्रियाशील मन जो अपनी परिधि में उपलब्ध हो वही आत्मसात करता है । शुद्ध-अनुकूल न मिलने पर अशुद्ध-प्रतिकूल ही बटोरेगा, इसलिए हमारी दिनचर्या के 'असन-वसन व भोजन' प्रत्येक कार्य में सत-चिंतन द्वारा मन को सक्रिय रखना आवश्यक है, जिससे जीवन ऊर्जा का अपव्यय न करके हमारा मन दिनदूना विकासोन्मुख बना रहे । ये मिलनोत्सव सहज ही चित्त को सजीवता और सरसता से भरते हैं एवं खुशियाँ बाँटने की संतुष्टि चित्त को दिया करते हैं ।

जन्मोत्सव

रचनात्मक कार्य द्वारा, 'ईश्वर पूजन के निमित्त' शौर्य उत्पादन को, हम मनुष्य महीयसी धारणी में जन्म लेते हैं । पावन धरा–धाम में उच्चाकांक्षायें लेकर जन्म–ग्रहण करने वाले बाल रूप "गोपाल" को शुभेच्छा न्यौछावर करना हमारा सदा से ही सामाजिक कर्तव्य है । हार्दिक स्वागत करना हमारा धर्म है :–

स्वस्थमन जाग्रत चेतना, उच्च मन तुझको मिले ।
भाव में देवत्व उपजे, मन में जीवटता खिले ॥
कुसुम ज्यों हो चित्त मृदु, और वाणी मधुसे हो सनी ।
ढलते जायें कर्म सत–पथ, हों जो जगहित को बने ।

दो सहारा "बन अमानी" रुग्ण को, निःसहाय को कुलिष बन उस पथ चलो, पहुंचे जो अमृत धाम को (शिशु कोई भी वर्ग में जन्मा क्यों न हो समाज का एक उदीयमान नव–सदस्य होता है)। होनहार बनके वे विकास पावें जिससे-समाज गर्वान्वित हों। हम सब उनमें "बीज में वट वक्ष" होने की आशा रखें। दीन–हीन कुंठित न बने वह।

झूले खुशी के पलना, आरोग्यवान ललना।
उपकारी हो जहां के, विद्वान में हो गणना॥

हमारे जीवन की जो कुछ संग्रहीत-अनुभूति हो, इन उदीयमानों को विरासत में सौंप सकें, जो उनके व्यक्तित्व–निर्माण में सहायक हो और धरातल के निवासी रहते ही वे अपेक्षाकृत शीघ्र लक्ष्य पा सकें। महतजनों की चेतावनी अनुसार चलते समय यह कहना न पड़े "वक्त दे दे तो तेरी वंदगी करूं", समस्त जीवन का वक्त अवहेलना में गुजार, यह कहना पड़े तो शर्म की बात होगी।

सदा से संसारी माताओं की भी अपने संतानों के भविष्य के लिये ईश्वर से यही याचना रही है।

"अनुरागी सत्य व्रत को, बन के सुपुत्र तेरे,
जीते जगत के हिय जो, हो पुण्य भाग्य मेरे।"

विरासत में हमें पीढ़ी दर पीढ़ी यही देते चलना जो है।

विवाहोत्सव

विवाह समारोह भी "सर्वे भवन्तु सुखिनः के मानव-कल्याण के अंग हैं।" नई पीढ़ी को समाज–कल्याण में दीक्षित कराने का यह आयोजन "यज्ञमंडप" में देव–पितृ–अग्नि के साक्ष्य में कराया जाता है। निष्ठा में आस्था बनाये रखने का संकल्प "सप्तपदी" के सात फेरे लेकर किया जाता है, जिससे प्रार्थी जन "सबके हित में अपना हित" जैसे कल्याण–वाक्य को सम्मान देना सीखें।

संग न छूटे इसलिये "गठबंधन" साथ लिये
चलने को पाणि-ग्रहण "जैसे संस्कार बने हैं।"

माल्यार्पण द्वारा एक दूजे को सुख सौभाग्य वर्धन "मिल के चलो" की भावना जताने का समारोह है।

सहयात्रा को समाज के समक्ष संकल्प लेते खड़े नव युगल को हमारा यह आशीर्वाद हो।

दिन हो सुवर्णमय और रातें रजतमयी हों,
भानु, शशि, सितारे, मुटठी में जगमगी हों।
मंगल जगे जगत माहि, पथिक युगल को,
पितु-मातु भव के नियरावे, जीवन उज्ज्वल हो।

उतंग-लक्ष्य शुभ में गति तीव्र पाओ,
भौतिक डगर पे परमार्थ कुसुम सजाओ ।
कल्याण-पथ में मिलि के, शुभ को जगाओ,
निर्बल के बांह थामी, उत्थान को बढ़ाओ ।
हिय-सम्पदा उपजी के, बढ़े पग सहज-शुभग के,
हरिपद रजत कणों के, तव मन में ज्योति चमके ।
युग-युग सुदृढ़ चलि के, "तेजस" समय बिताओ,
आगोश में ले नभ को, सब को गले लगाओ ।
जब तक बहे गंग-जमुन की धारा,
अचल रहे अहिवात तुम्हारा ।

सीतारानी

वसुधैव-कुटुम्बकम् का क्रियात्मक-पक्ष यह भी है कि हर विवाह द्वारा दो कुटुम्ब सम्बन्धों में जुड़ते हैं । फिर परिवार से परिवार जुड़ते चले जाने से सम्बन्धों में प्रसार आता है और वसुधा को ही कुटुम्ब मानने का शुभ संकल्प विश्वव्यापी बनता जाता है ।

त्रिकालदर्शियों को अनुभूति में प्राप्त 'कल्याण प्रद नीति' पालन से मानव-समाज सत्य-पथ को परिवर्धन पाता है । वेदध्वनि द्वारा अनवरत आदिकाल से जागृत किये जा रहे "मंत्र" की शक्ति से, दो अलग मन एक ही तार में बज के युगलबंदी को चल पड़ते हैं ।

आदर्श व्यावहारिक-नीति के उल्लंघन होने से अनीति का भाव-संक्रमण हो के देश व्यापी उच्छृंखलता फैलती जाती है । लोकालय के अवनति में उतरने से मानव–निकेतन पशुगाह बनकर रह जाता है । ऐसी विडम्बना न उपजे इसी कारण मानव-समाज को नीति-नियम का बंधन स्वीकार कर चलना है 'विराट' की ओर ।

सृजनहार का सुघड़ संसार विश्रृंखल हो जाय तो, सुषमायें किस ठौर विराजेंगी । भव-नायक उस "मरु में घिरे" किस नायिका को रिझाते वंशी वादन से । अजस्र शुद्धचित्त गोपाङ्गनाओं की प्रतीक्षा किन कदम तले करते, कैसे साबित करते पुरुषोत्तम ही मात्र पुरुष है, सभी जीव तो नारी है ।

हमें चलना है सत पथ को–

विनीत समर्पण करो हरि को, कर्मा कर्म सुपुर्द ।
सुख दुःख छोड़ो यहाँ ही भव में, हंसा चलोरे शुद्ध ।

●

गुजरात में माँ की यादें

— ब्र. गुणीता

२६ अप्रैल, १९९९,

रात्रि का अन्तिम प्रहर था । मयूरों की केकाध्वनि प्रारम्भ हो गयी थी । अभी आकाश में तारे टिमटिमा रहे थे । हमें लम्बी यात्रा तै करनी थी । हम अब सौराष्ट्र से गुजरात की ओर जा रहे थे । हम सारी तैयारी करके माँ के कमरे में गये माँ को प्रणाम करके हम रवाना हुए । श्रीयुत शिवराज सिंह जी ने सपविार अत्यन्त प्रेम से हमें विदा किया । अहमदाबाद तक के लिये गाड़ी की व्यवस्था भी आप लोगों ने ही की थी । गोंडल छोड़ने से पहले हम आशापूरा देवी के मंदिर में प्रणाम करने गये । हमारी मोटर सौराष्ट्र के मार्ग से सरपट दौड़ती हुई चली ।

राजकोट होते हुए हम आगे बढ़ रहे थे । बारह बजे के करीब हम अहमदाबाद पहुँचे । अहमदाबाद एक सम्पन्न शहर है । कपड़ों की मिलों के लिये यह प्रसिद्ध है । व्यापार के क्षेत्र में यह अग्रगण्य माना जाता है । शहर के बाहरी क्षेत्रों में बड़े-बड़े कारखाने हैं । शहर के भीतर आसमान को छूने वाली अट्टालिकायें हैं । बहुत ही सोच समझकर इस नगर को सजाया गया है । यहाँ की मंजिलों पर बने हुए आवासों की व्यवस्था बहुत ही सुन्दर है । अहमदाबाद वह शहर है जिससे हम बहुपरिचित हैं । अखण्ड सावित्री महायज्ञ के साथ इसका अनन्य सम्बन्ध है । यहीं के सेठ श्री कान्ति भाई मुन्शा एवं श्री मुकुन्द भाई के अतुलनीय सहयोग से वाराणसी को श्री श्री माँ के आश्रम में अनुष्ठित तीन वर्ष व्यापी अखण्ड सावित्री महायज्ञ में गो-घृत की व्यवस्था की गयी थी । यहाँ तक कि इस कार्य के लिये इन धर्म प्रेमी भक्तों ने एक अलग ही डेरी खोली थी । श्री श्री माँ का यहाँ अनेक बार पदार्पण हुआ है । आज हम उसी स्थान पर जा रहे हैं, जहाँ श्री श्री माँ एवं महात्माओं की उपस्थिति में संयम सप्ताह महाव्रत, श्री श्री माँ का जन्मोत्सव आदि मुख्य अनुष्ठान विशेष समारोह के साथ अनुष्ठित हुए हैं, जिनकी याद आज भी आनन्दमयी संघ के इतिहास में ताजी है ।

हम अहमदाबाद शहर में पहुँच चुके थे, परन्तु हमें हमारे गन्तव्य स्थल पर पहुँचने में थोड़ी असुविधा हो रही थी, क्योंकि पुराने मार्ग एवं स्थान परिवर्तित हो चुके थे । हम आज भी मुन्शा परिवार के ही अतिथि होकर जा रहे थे । फोन द्वारा हमारी आगमन-वार्ता पाकर हमारे मार्गनिदर्शन के लिये श्री कान्तिभाई मुन्शा की भ्रातुष्पुत्री श्रीमती स्नेहवीणा बेन ने अपनी गाड़ी भेज दी । आगे मार्ग निदर्शन करती हुई गाड़ी चल रही थी उसके पीछे-पीछे हम थे । थोड़े ही क्षणों में हम एक विराट् परिसर में उपस्थित हुए, जहाँ तीन भागों में छह सात मंजिलों के आधुनिक आवास बड़े ही सुन्दर ढंग से बने थे । परिसर के मध्य आधुनिक रुचि का परिचायक एक सुरम्य परन्तु छोटा सा "स्वीमिंग पुल" भी था । परिसर के चारों ओर पुरानी चहार दीवारी थी जिसके किनारे किनारे पुरानी स्मृतियों को ताजा करने वाले बड़े-बड़े पेड़ थे । हमारे साथ ब्र. पानु दा थे । उन्होंने हमें श्री श्री माँ के रहने के स्थानों को दिखाया । जहाँ पर श्री श्री माँ की कुटिया थी वह स्थान

खुला ही था । श्री श्री माँ के चरण चिन्हित बहुचर्चित श्री कान्ति भाई मुन्शा के इस भवन परिसर में पदार्पण कर हमें अत्यन्त आनन्द की अनुभूति हुई ।

हम स्नेहवीणा बेन के ५ वीं मंजिल पर बने आवास में गये । यह नवनिर्मित आवास उन्होंने आश्रमवासियों के लिये ही रखा है । यहाँ प्रति रविवार को स्थानीय भक्त जन एकत्रित होकर सत्संग करते हैं । हमारे लिये शुद्धता से भोजन की पूरी व्यवस्था थी । हमारे लिए वहाँ उत्तरा बेन, हंसा बेन आदि मातृ भक्त उपस्थित थे । थोड़ी देर में स्व. श्री कान्तिभाई मुन्शा एवं कुन्दन बेन की पुत्रवधू मनोरमा बेन हमलोगों से मिलने आयीं । आपके पति श्री मधुकर मुन्शा का दो तीन वर्ष पूर्व देहावसान हो गया आज हमें मधुकर भाई की बहुत याद आ रही थी । सब के साथ मातृ सत्संग हुआ । श्री श्री माँ की आनन्दमयी स्मृति में बड़ा आनन्द आया ।

श्री श्री माँ के पुराने भक्त चिनु भाई के पुत्र एवं उनकी माता भी हमसे मिलने आयीं । चिनु भाई के पुत्र १९५२ में दक्षिण यात्रा में श्री श्री माँ के साथ थे । उन्होंने हमें उस समय के कुछ प्रसंग सुनाये । साथ ही श्री अरविन्द आश्रम की मदर के साथ श्री श्री माँ के साक्षात्कार का विवरण भी सुनाया ।

शाम के समय हम लोग साबरमती के तट पर निर्मित श्री गीता भारती जी के आश्रम दर्शन करने गये । इस आश्रम व मंदिर के उद्घाटन के समय श्री गीताभारती जी के हार्दिक आमन्त्रण पर श्री श्री माँ यहाँ पधारी थीं, बहुत बड़ा स्थान है ।

हम श्री श्री माँ के भक्त श्री नानु भाई शास्त्री जी के यहाँ भी गये जहाँ पर श्री श्री माँ कुछ दिन ठहरी थीं । शास्त्रीजी की बहन शान्ता बेन बड़ी ही धर्मपरायण महिला हैं । आपने हमें श्री श्री माँ के विश्राम कक्ष को दिखाया, जहाँ आज भी श्री श्री माँ की शय्या पर श्री श्री माँ का चित्र रखा है । माँ की पादुका विराजमान है । माँ की व्यावहारिक वस्तुओं को काँच की आलमारियों में संग्रह शाला के समान बहुत ही सुन्दर ढंग से रखा है । यहाँ पर एक बहुत ही सुन्दर गणपति जी हैं । इन गणपति जी के कुछ रोचक प्रसंग आपने सुनाये । आप जैसी भक्तिमती महिला से मिलकर हमें अत्यन्त प्रसन्नता हुई ।

थोड़ी देर में हम लोग वापस आ गये । रात्रि में भी श्री श्री माँ के कुछ भक्त आये, जिन्होंने पुराने मातृ प्रसंग की चर्चा की ।

२७ अप्रैल, १९९९

प्रातःकाल उठकर हम स्नानादि से निवृत्त हो लिये । आज भी हमारा बाहर जाने का कार्यक्रम था । श्रीमती मनोरमा बेन तथा उत्तरा बेन हमें लेने आये । हम लोग पहले श्री मुकुन्द भाई के घर पर गये जहाँ पर श्री श्री माँ की उपस्थिति में ५0 के दशक में श्रीमद्भागवत सप्ताह हुआ था । आपके पुत्र श्री हर्षद भाई एवं उनकी धर्मपत्नी शालिनी बेन से हमारा परिचय हुआ । श्री मुकुन्द भाई के घर में श्री श्री माँ के लिये उस समय का बनवाया हुआ कमरा आज तक उसी प्रकार सजा कर रखा हुआ है । श्री श्री माँ जहाँ बैठी थीं वह स्थान आज भी अत्यन्त श्रद्धा के साथ रखा हुआ है । श्री श्री माँ के हाथ से दिया हुआ महाप्रभु-चित्र को उन्होंने शीशे में मढ़वा कर दीवार पर टाँग रखा है । उसके नीचे कुर्सी पर बैठ कर नित्य अपनी पूजा करती हैं । शालिनी जी ने हमें वह

रोचक प्रसंग सुनाया जब वह अपने ससुर जी के साथ श्री श्री माँ के पास अलमोड़ा गयी थीं । किस प्रकार श्री श्री माँ ने उनको बिना कुछ कहे ही उनके इच्छानुरूप गरम वस्त्र दिया था । श्री माँ की अहैतुकी कृपा का स्मरण करके उनके नेत्र छलछला गये । श्री श्री माँ का आश्रय प्राप्त होने के कारण हम भी अपने को धन्य महसूस कर रहे थे ।

हमने उस संन्यास आश्रम का भी अवलोकन किया जहाँ पर श्री श्री माँ सर्वप्रथम पधारी थीं । दोपहर तक हम वापस अपने निवास स्थान पर आ गये थे ।

शाम को हम महात्मा गांधी के साबरमती आश्रम को देखने गये । यह स्थान बड़ा ही एकान्त में है । बहुत ही सुन्दर ढंग से इसकी देख रेख की जाती है । आज भी साबरमती आश्रम का बरामदा उसके कमरे उसी प्रकार रखे गये हैं जैसे बापू के समय में थे । बापू की लाठी, ऐनक, लेखनी सभी वस्तुएँ बड़े ही सुनियोजित ढंग से रखी गयी हैं । यहीं से बापू का सत्याग्रह आन्दोलन तथा डाण्डी यात्रा आरम्भ हुई थी । यहाँ पर हमें एक सज्जन मिले जो सच्चे मन प्राण से गांधीवादी थे । हमें इस स्थान से प्रेरणा मिल रही थी काश ! कुछ देर और हम रुक सकते । सन्ध्या हो रही थी । अभी ध्वनि-प्रकाश का कार्यक्रम प्रारम्भ होने वाला था । लोगों का आना आरम्भ हो रहा था । हम चले आये । पीछे मुड़कर हमने फिर एकबार उस पुण्य स्थान को प्रणाम किया, जो हमारे लिए तीर्थ स्थान था, जहाँ से निकल कर एक महात्मा ने परतन्त्रता की शृंखलाओं से करोड़ों को मुक्ति दिलायी ।

सन्ध्या ने धीरे-धीरे अन्धकार का रूप लिया । बिजली की चकाचौंध से चमकने लगा यह शहर । हम अपने आवास को लौट आये ।

२८ अप्रैल, १९९९

आखिरी दिन था हम प्रातःकाल ही समर्थेश्वर महादेव के मन्दिर में दर्शन करने गये । मन्दिर शहर के एक ओर है । मन्दिर में काफी भीड़ थी । हमने भगवान् को स्पर्श कर प्रणाम किया । हमारी गुजरात यात्रा का आज आखिरी पड़ाव था ।

लौटते हुए हम श्री प्रियकान्त मुन्शा जी के निवास पर गये । वहाँ पर भी हमारा आदर से स्वागत किया । कुछ देर तक श्री श्री माँ के प्रसंगों पर चर्चा होती रही । थोड़ी देर बाद हम अपने निवास पर वापस आ गये ।

आज हमें रवाना होना था । जल्दी जल्दी भोजनादि से निवृत्त होकर हमने अपना सामान तैयार किया ।

अपरान्ह चार बजे ब्र. पानुदा दिल्ली के लिये रवाना हो गये । हम लोग करीब ५.३0 बजे स्टेशन रवाना हुए । मनोरमा बेन एवं उत्तरा बेन हमें स्टेशन पहुँचाने आयी थीं । हम राजकोट-भोपाल एक्सप्रेस से भोपाल आने वाले थे । स्टेशन पर गाड़ी की प्रतीक्षा में हम श्री श्री माँ के प्रसंग ही सुनते एवं सुनाते रहे । थोड़ी देर में गाड़ी आ गयी । हम चल पड़े । जय माँ जय माँ की ध्वनि से भक्तों ने हमें विदा किया । गुजरात में माँ की यादों से भरी हमारी यात्रा के आनन्द का अनुभव करते हुए हम यथा समय भोपाल पहुँचे ।

●

ब्रह्मा का दूत

— संकलन —श्री शिवानन्द

एक व्यक्ति ने सांसारिक दुःखों से पीड़ित होकर संन्यासी होने का निश्चय किया और वह जंगल में जाकर निवास करने लगा। कुछ दिन वन में निवास करने के उपरान्त उसे घर की याद आई। जब वह घर की ओर लौट रहा था, रास्ते में एक अन्य यात्री मिला जो उधर ही जा रहा था।

चलते हुए रात होने पर एक गाँव में दोनों ने रुकने का निश्चय किया। एक घर में दस्तक देने पर गृहस्वामी ने उनका स्वागत किया एवं सम्मानपूर्वक उनकी रहने व खाने की व्यवस्था की।

दूसरे दिन जब वे खाना खाकर विदा हुए तो उस साधु को पता चला कि साथ वाले व्यक्ति ने गृहस्वामी के खाने के बर्तन में से एक सोने की कटोरी चुरा ली है। साधु ने उस व्यक्ति को इसके लिए बुरा भला कहा।

दूसरे दिन जब वे शाम को अन्य गाँव में पहुँचे तो उस गाँव में अपरिचित होने के कारण किसी ने भी उन्हें अपने घर में आश्रय नहीं दिया। फलस्वरूप विवशता में उन्होंने एक गौशाला में रात्रि विश्राम किया। प्रातः चलते समय उस व्यक्ति ने कटोरी को उस गौशाला में छोड़ दिया। साधु ने पूछा कि जब कटोरी को इस प्रकार छोड़ना था तो उसने चोरी क्यों की, किन्तु उस व्यक्ति ने कोई उत्तर नहीं दिया।

अगले दिन वे गाँव के एक ब्राह्मण के अतिथि बने, ब्राह्मण तथा उसकी पत्नी ने उनका सादर सत्कार किया, भोजन करने के बाद जब वह विश्राम कर रहे थे तो ब्राह्मण का एक मात्र पुत्र भी उनके साथ ही खेलने लगा तथा उस व्यक्ति के साथ थोड़े ही समय में घुल-मिल गया। ब्राह्मण-दम्पति के किसी कार्य से घर से बाहर जाते ही उस व्यक्ति ने मौका पाकर उस बच्चे की गला दबा कर हत्या कर दी तथा साधु को खींचते हुए भाग खड़ा हुआ।

साधु उस व्यक्ति के इस कृत्य से स्तब्ध रह गया। उसने बिना कारण ब्राह्मण पुत्र की हत्या के लिए उस व्यक्ति को तिरस्कृत करते हुए कारण पूछा तो वह व्यक्ति फिर भी चुप रहा।

कूछ दूर चलने पर उन्होंने नदी किंनारे एक बच्चे को खेलते देखा, उस व्यक्ति ने अचानक उस बच्चे को धक्का देकर नदी में डुबो दिया। यह दृश्य देख कर साधु अपने को वश में नहीं रख सका। "दुष्ट राक्षस तुझे अब एक पल के लिए भी जीवित नहीं रहना चाहिए, तेरा अभी अन्त करता हूँ" कहते हुए उस व्यक्ति को मारने के लिए उस पर टूट पड़ा।

किसी तरह अपने को बचाते हुए उस व्यक्ति ने कहा, जानना चाहते हो मैं यह सब क्यों कर रहा हूँ तो सुनो।"

साधु ने कहा "बोल, दुष्ट ! नहीं तो तुझे जिन्दा नहीं छोड़ूँगा।"

उस व्यक्ति ने इस तरह बताना शुरू किया–

"सुनो, जिस घर से मैंने कटोरी चुराई थी वह गृहस्वामी शिष्ट व अतिथि-परायण तो था, किन्तु अतिथि की सेवा उसने भावों के अनुसार की थी। साधु को भोजन देते समय स्वर्णपात्र की क्या आवश्यकता थी इसके लिए बहुमूल्य पलंग सोने के लिए देना क्या उचित है? इससे साधु वृत्ति की क्षति होती है और लोभ में पड़कर इससे साधु का पतन भी हो सकता है। यह बात वह व्यक्ति नहीं जानता था, वह बताने के लिए ही मैंने उसकी कटोरी चुराई। अब वह कभी साधु को कीमती बर्तनों में खाना नहीं देगा, अब वह साधु के साथ साधु के अनुरूप ही व्यवहार करेगा, इसमें साधु और उस गृहस्थ दोनों का ही हित होगा।

दूसरे दिन हमने जिस गाँव में गौशाला में रात्रि व्यतीत की थी उस गाँव के रहने वाले अतिथि सेवा तो जानते ही नहीं थे। साधु महात्मा को अपमानित करके भगा देते थे, अब जब गाँव में यह समाचार फैलेगा कि अगर कोई साधु एक रात भी किसी घर में गुजार देता है तो उसकी कृपा से सोने की कटोरी जैसी बहूमूल्य वस्तु मिलती है, तब सभी लोग अतिथिपरायण हो उठेंगे, साधु संन्यासी को आदर सम्मान के साथ घर में स्थान देंगे, उससे उन गाँववासियों का भला होगा, इसलिए सोने की कटोरी गौशाला में छोड़ कर आया था।

जिस घर में हमने ब्राह्मण दम्पति के एक मात्र पुत्र की हत्या की थी उसका कारण यह था कि ब्राह्मण दम्पति पहले भगवान नारायण के परम भक्त थे। वे साधु-सन्तों की सेवा किये बिना जल भी ग्रहण नहीं करते थे। उनका घर एक पवित्र आश्रम के समान था, किन्तु जब से उनके पुत्र का जन्म हुआ, उनकी न भगवान के भजन में रुचि रह गई है और न ही साधु-सन्तों की सेवा में मन लगता है। ऐसी मोहजन्य स्थिति उस पुत्र के कारण उत्पन्न हो गई थी। उनके कल्याण के लिए ही उनके पुत्र की हत्या की है। अब फिर से इनका मन भगवान भजन में निमग्न हो जायेगा।

उस लड़के को जल में डुबोकर हत्या की थी, उसका कारण यह था कि व्यक्तिगत हित से समष्टि का हित ज्यादा अच्छा होता है। इस राज्य के कुछ दुष्ट लोग राजा के पुत्र की हत्या करके षड़यन्त्रपूर्वक इस बच्चे को राजा बनाना चाहते थे। इससे राज्य में अराजकता फैलती, प्रजा दुखी होती, राज्य में भ्रष्टाचार पनपता जिससे देश की दुर्दशा होती। उस एक की मृत्यु से देश का हित हुआ। इसी कारण मैंने उस बच्चे को डुबा कर मार दिया। अगर तुम्हें मेरी बात पर विश्वास न हो तो यह कागज पढ़ कर देख लो इसमें षड़यन्त्र का पूरा कार्यक्रम लिखा है।

साधु उस व्यक्ति की बात सुनकर व पत्र पढ़ कर आश्चर्यचकित रह गया, उसके मुख से कोई शब्द नहीं निकला। वह सोचने लगा यह व्यक्ति कौन है जो हर बात को पहले से ही जानता है।

कुछ देर तक चुप रहने के पश्चात् हिम्मत करके उसने उस व्यक्ति से पूछा "महाशय आप कौन हैं? आपको यह सब पहले से ही कैसे विदित हुआ?"

वह व्यक्ति बोला, "मैं सृष्टिकर्ता ब्रह्मा का दूत हूँ" और इतना कहते हुए वह व्यक्ति अदृश्य हो गया।

●

आश्रम-संवाद

कनखल—

कनखल में श्री श्री माँ के आश्रम में गत १३ अप्रैल, सन् २००० को स्वामी मुक्तानन्दगिरिजी के संन्यास उत्सव के उपलक्ष में गिरिजी के मन्दिर में गिरिजी की विशेष पूजा तथा साधु भोजन सम्पन्न हुआ।

२ मई से २१ मई तक श्री श्री माँ का १०५ वाँ जन्ममहोत्सव बहुत ही सुन्दर ढंग से सम्पन्न हुआ। इस उपलक्ष में अनेक महात्मा तथा मातृभक्तों की उपस्थिति से उत्सव विशेष शोभामण्डित हो उठा।

१५ मई को जन्मोत्सव के विशेष उद्घाटन समारोह में कैलास पीठाधीश्वर महामण्डलेश्वर स्वामी विद्यानन्दगिरिजी, परम श्रद्धेय स्वामी चिदानन्दजी, भोलागिरि आश्रम के महामण्डलेश्वर स्वामी देवानन्दजी, महामण्डलेश्वर स्वामी श्यामसुन्दरदास जी तथा निर्वाणी अखाड़े के महन्त श्री गिरिधर नारायण पुरी जी उपस्थित थे।

उत्सव में प्रायः प्रतिदिन सायंकाल स्वामी विद्यानन्दजी, स्वामी मङ्गलानन्दजी, स्वामी देवानन्दजी, स्वामी प्रकाशानन्दजी, स्वामी श्यामसुन्दर दास जी आदि महात्माओं के विद्वत्तापूर्ण भाषण होते थे। २० मई को महामण्डलेश्वर स्वामी सत्यमित्रानन्दजी का मधुर प्रवचन श्रवण कर सब आनन्दित हुए।

जन्मोत्सव के उपलक्ष में निम्नलिखित कार्यक्रम सम्पन्न हुए—

श्री श्री माँ के पवित्र जन्मदिवस तथा जन्मतिथि के दिन श्री श्री माँ की विशेष पूजा, भोग तथा पुष्पाञ्जलि, श्री शतचण्डी पाठ, पूजा तथा हवन, बुद्ध पूर्णिमा के दिन स्थानीय मन्दिर समूह में विशेष पूजन एवं १०८ कुमारी पूजा व वटुकपूजा तथा भोजन, २० मई को १०८ ब्राह्मण भोजन तथा दरिद्रनारायण भोजन आदि सम्पन्न हुए। प्रतिदिन रास लीला तथा महाप्रभुलीला होती थी। २२ मई को मध्याह्न में प्राय १२० महात्माओं का भोजन एवं सायंकाल नाम यज्ञ का अधिवास तथा अखण्डनाम यज्ञ प्रारम्भ हो कर २३ मई को सायंकाल समाप्त हुआ।

१६ जुलाई को गुरुपूर्णिमा का महोत्सव मनाया जायेगा।

जमशेदपुर—

स्वामी भास्करानन्दजी के आगमन पर दीर्घ समय के अन्तराल के बाद श्री श्री माँ का जमशेदपुर आश्रम पुनः उत्सव के उल्लास से उल्लसित हो उठा। विगत १९ जनवरी, सन् २००० को करीब १६ मातृभक्त दीक्षालाभ कर धन्य हुए। भास्करानन्दजी के साथ स्वामी निर्गुणानन्द जी भी श्री पद्मनाथ को साथ लेकर आये थे। पद्मनाभ का दर्शनकर भक्तगण विशेष आनन्दित हुए।

गत ५ मार्च को महाशिवरात्रि की पूजा शिव मन्दिर में सम्पन्न हुई।

प्रत्येक अमावस्या की रात्रि को श्री काली माता की विशेष पूजा तथा प्रत्येक पूर्णिमा को श्री सत्यनारायण की पूजा एवं भक्तों की इच्छा से प्रति शनिवार को सायंकाल श्री शनिदेवता की विशेष पूजा होती है ।

विगत ६ मई को अक्षय तृतीया के दिन मातृमन्दिर में श्री श्री माँ की मूर्ति प्रतिष्ठा का द्वितीय वार्षिक उत्सव मनाया गया । श्री श्री माँ के पवित्र जन्मदिवस तथा जन्मतिथि पर विशेष पूजा सम्पन्न हुई ।

इस उत्सव के उपलक्ष में प्रतिदिन संध्याकीर्तन, आरती, भजन इत्यादि होते थे । २१ मई को संध्या के समय अधिवास कीर्तन तथा दूसरे दिन पवित्र ब्राह्ममुहूर्त्त में प्रातः तीन बजे श्री श्री माँ की विशेष पूजा प्रारम्भ हुई । मंगलारती के बाद सूर्योदय से सूर्यास्त तक होने वाला अखण्ड 'जय माँ' नाम कीर्तन प्रारम्भ हुआ ।

पूजा के बाद हवन, पुष्पाञ्जलि तथा भोगारती के उपरान्त दरिद्रनारायण भोजन तथा भक्तों को प्रसादवितरण किया गया ।

सन्ध्या को नाम कीर्तन समापन, सायंकालीन कीर्तन, आरती तथा प्रणाम मन्त्र के साथ उत्सव का समापन हुआ ।

पुणे–

२० मार्च को होली का त्यौहार बड़े सुन्दर ढंग से मनाया गया । उस दिन श्री चैतन्य महाप्रभु की जन्मतिथि के उपलक्ष में विशेष पूजन तथा उदयास्त नाम कीर्तन हुआ ।

श्री श्री माँ का १०५ वाँ शुभ जन्मोत्सव भी सुसम्पन्न हुआ । २१ मई को रात में ९ बजे से ३ बजे तक भजन, कीर्तन तथा मातृलीला के विडिओ प्रदर्शन के बाद ठीक तीन बजे से श्री श्री माँ की विशेष पूजा, कुमारी पूजा एवं पुष्पाञ्जलि हुई ।

२२ मई को प्रातः १० बजे से १ बजे तक कुमारी पूजा, हवन, मध्याह्न में भोगारती के बाद महाप्रसाद वितरण किया गया ।

वाराणसी–

विगत १० अप्रैल से १३ अप्रैल तक श्री वासन्ती पूजा धूमधाम से सम्पन्न हुई । इस उपलक्ष में अनेक मातृभक्तों का समागम हुआ । विशेषतः कलकत्ता से अनेक भक्त आये हुए थे ।

श्री वासन्ती माँ की विशेष पूजा, पुष्पाञ्जलि, कीर्तन, स्तव, भजन इत्यादि से उत्सव का विशेष शोभावर्धन हुआ । इसबार गीतश्री छवि वन्द्योपाध्याय के वाराणसी में उपस्थित रहने से तथा उनके भावपूर्ण कीर्तन, भजन इत्यादि से आनन्द-मन्दाकिनी की पीयूषधारा प्रवाहित होने लगी । कलकत्ते की कलाकार श्रीमती इला भट्टाचार्य के भावपूर्ण भजन गायन से सब आनन्दित हुए । काशी के बंगीय समाज के अध्यक्ष श्री सन्दीप सेन का भजन गायन भी सराहनीय रहा । वासन्ती पूजा की अष्टमी के दिन श्री अन्नपूर्णा माँ की पूजा हुई । विजयादशमी के दिन प्रातः श्रद्धेय काशी नरेश आये तथा विसर्जन पूजन के समय उपस्थित रहे । महाराजकुमारियाँ तथा महाराजकुमार ने प्रतिदिन आकर सायंकालीन आरती का दर्शन किया । विजयादशमी के दिन सायंकाल छविदीदी का "निमाई-संन्यास" कीर्तन सुन कर सभी भाव विभोर हो उठे ।

१३ अप्रैल को श्री श्री स्वामी मुक्तानन्द गिरिजी के संन्यास उत्सव के उपलक्ष में गिरिजी के मन्दिर में गिरिजी की विशेष पूजा एवं साधु भोजन सम्पन्न हुआ । १४ अप्रैल को नववर्ष के दिन श्री श्री माँ की विशेष पूजा हुई । २ मई से २२ मई तक श्री श्री माँ का जन्मोत्सव सम्पन्न हुआ ।

६ मई को अक्षयतृतीया की पवित्र तिथि पर श्री श्री माँ, श्री गोपाल जी, श्री योगमाया तथा शिवजी का पोडशोपचार विशेष पूजन व भोग सम्पन्न हुआ । गिरिजी के मन्दिर में गिरिजी की विशेष पूजा हुई । उस दिन २५ साधु तथा १२ ब्राह्मणों को वस्त्र तथा दक्षिणा के साथ भोजन कराया गया ।

इसी अक्षय तृतीया पर श्री श्री माँ की उपस्थिति में आज से अनेक वर्ष पूर्व छविदीदी के राधा गोविन्दजी की प्राण प्रतिष्ठा हुई थी । अतः इस उपलक्ष में छविदी प्रतिवर्ष अक्षय तृतीया को विशेष उत्सव मनाती हैं । इस बार छवि दी वाराणसी में थीं अतः अक्षयतृतीया का उत्सव धूमधाम से सम्पन्न हुआ । श्री राधागोविन्द जी की भी विशेष पूजा हुई ।

अक्षय तृतीया के अगले दिन ५ मई को गोपाल जी के सामने सुन्दर मंच सजाया गया । उस दिन सायंकाल नाम यज्ञ का अधिवास कीर्तन सम्पन्न हुआ । दूसरे दिन ६ मई को अक्षय तृतीया के दिन उदयास्त नाम कीर्तन हुआ । कन्यापीठ की ब्रह्मचारिणियों ने दिन भर कीर्तन किया । सायंकाल नाम कीर्तन के समापन के समय छवि दीदी के अपूर्व कीर्तन से सुन्दर भावप्रवाह की सृष्टि हुई । इस प्रकार अक्षयतृतीया का उत्सव सुन्दर ढंग से सम्पन्न हुआ । १०-मई को वैशाखी शुक्ला सप्तमी तिथि में बाबा भोलानाथ की निर्वाण तिथि के उपलक्ष पर बाबा भोलानाथ की विशेषपूजा एवं साधु भोजन हुआ ।

१० मई को वैशाखी शुक्ला सप्तमी तिथि को बाबा भोलानाथ की निर्वाण तिथि के उपलक्ष में बाबा भोलानाथ की विशेष पूजा एवं साधु भोजन हुआ ।

२१ मई को रात्रि में २।१० बजे से कीर्तन प्रारम्भ हुआ । ठीक ३ बजे ब्राह्ममुहूर्त्त के पवित्र क्षण में श्री श्री माँ की पूजा प्रारम्भ हुई । तत्क्षण वेद ध्वनि तथा शङ्खध्वनि की गई । ब्रह्मचारिणी जया भट्टाचार्य पूजा कर रही थीं । इधर सवा तीन बजे से पौने चार बजे तक मौन के उपरान्त स्तव तथा कीर्तन प्रारम्भ हुआ । अपूर्व भाव के बीच श्री श्री माँ की उपस्थिति का आभास सबको हुआ ।

२२ मई को मध्याह्न में मिठाई एवं अनेक प्रकार के व्यञ्जनों से १०८ प्रकार के पकवान भोग लगाये गये । श्री श्री माँ के भोग में जो-जो दिया जाता था विशेषरूप से उन व्यज्जनों की रसोई की गई तथा माँ को भोग दिया गया । सब कुछ सुन्दर ढंग से सजाया गया था । सजावट सराहनीय थी । दीप प्रज्ज्वलन की शोभा का अवलोकन कर सभी आनन्दित हुए । भोग तथा आरती के उपरान्त सबने प्रसाद ग्रहण किया ।

११ जून को गंगादशहरा के दिन श्री गंगापूजा अनुष्ठित हुई ।

गुरुपूर्णिमा के पवित्र अवसर पर आगामी १६ जुलाई को वाराणसी आश्रम में भी विशेष पूजा आदि सम्पन्न होगी ।

राँची–

प्रतिवर्ष की भाँति इस बार भी राँची आश्रम में विगत १३ अप्रैल को स्वामी मुक्तानन्दगिरिजी की संन्यास तिथि अनुष्ठित हुई । इस उपलक्ष में मंगलारती, उषाकीर्तन, षोडशोपचार से गिरिजी की विशेष पूजा, आरती एवं पुष्पाञ्जलि इत्यादि अनुष्ठित हुए । गीता, चण्डीपाठ, भजनकीर्तन तथा

मध्याह्न में भोग तथा आरती के उपरान्त साधु भोजन हुआ । तदनन्तर मातृभक्तों ने प्रसाद ग्रहण किया । संध्या कीर्तन तथा मौन के बाद उत्सव का समापन हुआ ।

२ मई से २१ मई तक श्री श्री माँ का १०५ वाँ जन्मोत्सव अनुष्ठित हुआ । २ मई, महिला भक्तवृन्दों (मातृगोष्ठी) के द्वारा सायंकाल एक विशेष सत्संग का आयोजन किया गया एवं रात को श्री श्री माँ की विशेष पूजा हुई । शाम को सत्संग में राँची अद्वैत आश्रम के स्वामी पूर्णानन्द के विद्वत्तापूर्ण प्रवचन के द्वारा सत्संग का उद्घाटन हुआ । प्रवचन, कीर्तन, भजन तथा सामूहिक मातृनाम कीर्तन से आश्रम मुखरित हो उठा था । मातृगोष्ठी की इच्छा से मूक तथा बधिर विद्यालय के छात्रों को एक दिन का भोजन दिया गया, अस्पताल में रोगियों को फल, मिठाई दी गई । आश्रम तथा मातृगोष्ठी के सहयोग से २१ मई को दरिद्रनारायण भोजन कराया गया । आश्रम में सूर्योदय से सूर्यास्त तक अखण्ड जप, स्थानीय मन्दिरों में विशेष पूजा, पूरी रात तक समवेत मातृ नाम कीर्तन, कुमारी पूजा, षोडशोपचार से श्री श्री माँ की विशेष पूजा, हवन इत्यादि सम्पन्न हुए । २२ मई को आश्रम में भजन, कीर्तन तथा माँ की विशेष पूजा हुई । इस उपलक्ष में योगदा आश्रम के महात्माओं का आगमन तथा उनके सत्कार का समारोह विशेष आकर्षणीय रहा । स्वामी अच्युतानन्द जी तथा डा. वीरेश्वर गांगुली का प्रवचन भक्तों ने ध्यानपूर्वक सुना । २२ मई को आश्रम में अनेक मातृ भक्तों का समागम हुआ । पुष्पाञ्जलि, भोगारती तथा प्रसाद वितरण के बाद उत्सव का समापन हुआ । सम्पूर्ण अनुष्ठान का परिचालन स्वामी अच्युतानन्दजी ने किया ।

देहरादून–

माँ का जन्मोत्सव समारोह देहरादून आश्रम में भी बड़े उत्साह के साथ मनाया गया । २ मई को ब्राह्म वेला में ३ बजे परम्परा के अनुसार किशनपुर आश्रम में मातृमन्दिर में प्रथम पूजन सम्पन्न हुआ तथा चण्डीपाठ प्रारम्भ हुआ । ६ मई को अक्षयतृतीया के उपलक्ष में कीर्तन हुआ । ७ मई को कल्याण वन आश्रम में गीता ज्ञान यज्ञ तथा अन्नप्रसाद ग्रहण हुआ । १० मई को श्री भोलानाथ की निर्वाण तिथि के उपलक्ष में बाबा भोलानाथ की पूजा तथा साधु-भंडारा हुआ । २२ मई को ब्राह्म मुहूर्त में ३ बजे प्रातः किशनपुर आश्रम में तिथि पूजा माता जी के श्री विग्रह पर सम्पन्न हुई । चण्डीपाठ समाप्त हुआ तथा हवन हुआ । २१ मई को तिथि पूजा के उपलक्ष में अखण्ड रामायण पाठ प्रातः आठ बजे-प्रारम्भ हुआ और २२ मई को दोपहर को सम्पन्न हुआ । तत्पश्चात् भण्डारा में लगभग ६०० मातृभक्तों ने अन्न प्रसाद ग्रहण किया ।

८ जून, १९३२ ई. में श्री श्री माँ के प्रथम रायपुर में आगमन के उपलक्ष में रायपुर स्थित आश्रम में विशेष समारोह का आयोजन किया गया । ७ मई को प्रातः ८ बजे अखंड रामायण पाठ का प्रारम्भ किया गया, जो ८ जून दोपहर को सम्पन्न हुआ । दो दिन की निरन्तर वृष्टि के बावजूद मातृभक्तों ने दोपहर को अधिक संख्या में सम्मिलित होकर अन्नप्रसादग्रहण किया । माँ की जय जयकार की ।

●

शोक-संवाद

श्रीमती शान्ति घोष

कलकत्ता के अति पुरातन भक्त स्वर्गीय माखनलालघोष की धर्मपत्नी श्रीमनी शान्तिघोष गत ७ जनवरी, १९९९ ई. में, गुरुवार को मातृ चरणकमलों में सदाके लिए लीन हुई हैं । उनके पति श्री माखन घोष सेन्ट्रल बैंक ऑफ इण्डिया के उ़च्चपदस्थ कर्मचारी थे । दीर्घकाय गौरवर्ण सुपुरुष अतिशय व्यक्तित्व सम्पन्न थे । वे पति-पत्नी दोनों श्री श्री माँ के विशेष कृपापात्र थे । इस भक्त दम्पति ने सदा ही श्री श्री माँ के विभिन्न आश्रमों के अनेक कार्यों एवं साधु सन्तों की सेवा में अपने को पूर्ण रूप से समर्पित कर दिया था । शान्ति दी दीर्घकाल तक अस्वस्थ रहने पर भी निऊआलिपुर के अपने आवास स्थित मातृ मन्दिर की सेवा अपने हाथों से करती थीं ।

श्री श्री माँ का शुभ आगमन उनके आवास भवन में सन् १९५९ में प्रथम बार हुआ था । इसके बाद श्री श्री माँ उनके घर अनेक बार पधारीं । श्री श्री माँ के रहने के लिए उनके मकान में अलग से सुन्दर व्यवस्था की गई थी । आज भी मकान का वह अंश मातृ मन्दिर के रूप में सुरक्षित है । अनवरत साधु महात्माओं के समागम एवं भजन-कीर्तन से मातृ मन्दिर उल्लसित तथा मुखरित हो उठता था । कितने ही भक्तों की दीक्षा इस मातृ मन्दिर में हुई है । शान्ति दी मातृ भक्तों की अतिशय प्रिय थीं ।

शान्ति दी को सन् १९५२ में सर्व प्रथम माँ का दर्शन प्राप्त हुआ था । १९६१ ई. में अपने पति के साथ शान्ति दी को दीक्षा प्राप्त हुई ।

शान्ति दी जैसी स्नेहमयी, ममतामयी निष्ठावती महिला वास्तव में दुर्लभ थी ।

प्रारब्धवश उन्हें शारीरिक तथा मानसिक अनेक कष्ट झेलने पड़े । किन्तु आपने अपने जीवन में श्रद्धेय भाईजी की अन्तिम वाणी को चरितार्थ कर दिखाया । श्रद्धेय भाईजी (श्री ज्योतिषचन्द्रराय जी) ने कहा है–

"प्रारब्ध काटने के लिए अधिक तपस्या की आवश्यकता है । शोक, सन्ताप आदि हमारे प्रारब्ध के अवश्यम्भावी फल हैं । इस बात को याद रख कर सुख-दुख में स्थिर रहे तथा मनमें यह दृढ़ विश्वास रखें कि सम्पत्ति तथा विपत्ति में उनकी (भगवान की) अनन्त करुणाधारा हमारे ऊपर निरन्तर बरस रही है ।"

श्री श्री माँ उनकी पवित्र आत्मा को सद्गति प्रदान करें तथा शोक सन्तप्त परिवार को धैर्य प्राप्त हो, यही माँ के चरणों में प्रार्थना है ।

श्री शशिकान्त जयकिशन जी चोकूशी–

गुजरात, राजपीपला के अति प्राचीन मातृभक्त श्री शशिकान्त जयकिशन जी का गत २८ फरवरी, सन् २००० को देहावसान हो गया है । भीमपुरा आश्रम के निर्माण में आप का विशेष योगदान रहा है । उनकी आत्मा को चिरशान्ति प्राप्त हो तथा परिवारवर्ग सान्त्वना प्राप्त करें यही माँ के चरणों में प्रार्थना करते हैं ।

श्री सुशील चन्द्र सेन शर्मा–

श्री श्री माँ के पुराने भक्त श्री सुशील चन्द्र सेन का ९ मार्च, सन् २००० को स्वर्गवास हो गया है ।

श्री श्री माँ के चरणों में आप को सदा विश्राम प्राप्त हो तथा परिवारवर्ग सान्त्वना प्राप्त करें यही श्री श्री माँ के चरणों में प्रार्थना है ।

श्री सतीन्द्र नाथ दत्त–

जमशेदपुर के श्री श्री माँ के पुराने भक्त श्री सतीन्द्रनाथ दत्त गत २१ मार्च को श्री श्री माँ के चरणों में सदा के लिये लीन हुए हैं ।

जमशेदपुर में श्री श्री माँ का जो नूतन आश्रम निर्मित हुआ है, इस आश्रम के निर्माणकार्य में आप का योगदान अविस्मरणीय है । आश्रम के मन्दिर में श्री कालीमाता की मूर्ति की स्थापना आप के ही आर्थिक सहयोग से हुई है । आप केवल जमशेदपुर आश्रम कमेटी के उपाध्यक्ष ही नहीं थे, अपितु आश्रम के प्रत्येक उत्सव आदि में आप का सक्रिय योगदान रहता था । आप जमशेदपुर आश्रम के स्तम्भ स्वरूप थे ।

उनके अचानक परलोक गमन से जमशेदपुर के भक्तों ने एक विशिष्ट कर्मी को खो दिया ।

श्री श्री आनन्दमयी संघ के प्रत्येक उत्सव में उनकी उपस्थिति अवश्य होती थी । वाराणसी आश्रम में वासन्ती पूजा में इस बार भी अप्रैल के प्रथम सप्ताह में आप के आने की सूचना हमें प्राप्त हुई थी, किन्तु स्थूल शरीर में अब वे इस पूजा में उपस्थित नहीं हो सके ।

श्री श्री माँ उनकी आत्मा को चिर शान्ति प्रदान करें यही माँ के चरणों में प्रार्थना है ।

श्री रणजीत कुमार बनर्जी–

कलकत्ता के अति पुराने मातृभक्त श्री रणजीतकुमार बनर्जी सर् आर. एन. मुखर्जी के दौहित्र एवं विश्वप्रसिद्ध "इम्पिरियल टोबाको" कम्पनी के प्रथम भारतीय चेयरमैन थे । विगत २९ मार्च, २०००ई. में आप ८७ वर्ष की अवस्था में श्री श्री माँ के चरणों में सदा के लिए लीन हुए हैं ।

श्री रणजीत दा अत्यन्त मेधावी छात्र थे । सीनियर केम्ब्रिज में प्रथम स्थान प्राप्त करने के बाद आप ने कलकत्ता विश्वविद्यालय से बी. एस. सी. परीक्षा में द्वितीय स्थान प्राप्त किया । इसके बाद केम्ब्रिज के टिनिटि कॉलेज से आपने Management Degree प्राप्त की ।

आपकी पत्नी श्रीमती भवानी देवी को किशोरावस्था में ही माँ का सान्निध्य प्राप्त हुआ था। विवाह के बाद श्री रणजीत दा को भी श्री श्री माँ के त्रितापहारी चरणों का आश्रय प्राप्त हुआ।

अवकाश प्राप्त करने के बाद आपने आश्रम की सेवा में अपने को पूर्ण रूप से समर्पित कर दिया था।

वर्षों तक वे आगरपाड़ा आश्रम के अध्यक्ष थे एवं श्री श्री आनन्दमयी संघ के Governing Body के सदस्य थे।

सन् १९५९ में देहरादून आश्रम में शिवप्रतिष्ठा के समय रणजीत दा तथा भवानी दी के नाम पर शिव प्रतिष्ठा की गई थी एवं १९६६ ई. में वृन्दावन में श्री छलिया मन्दिर प्रतिष्ठा के समय श्री राधिका जी की एक मूर्ति की स्थापना उन्हीं के आर्थिक सहयोग से की गई।

माँ के चरणों में आप की आत्मा को चिर शान्ति प्राप्त हो तथा परिवारवर्ग को सान्त्वना मिले यही माँ के चरणों में प्रार्थना करते हैं।

●

❄ Branch Ashrams ❄

15. NEW DELHI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Kalkaji, New Delhi-110019 (Tel : 6826813)

16. PUNE : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Ganesh Khind Road, Pune-411007, (Tel : 5537835)

17. PURI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Swargadwar, Puri-752001, Orissa.

18. RAJGIR : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Rajgir, Nalanda-803116, Bihar (Tel : 5362)

19. RANCHI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Main Road, P.O. Ranchi-834001, Bihar (Tel : 312082)

20. TARAPEETH : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Chandipur-Tarapeeth,
Birbhum-731233, W.B.

21. UTTARKASHI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Kali Mandir, P.O. Uttarkashi-249193, U.P.

22. VARANASI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Bhadaini, Varanasi-221001, U.P.
(Tel : 310054+311794)

23. VINDHYACHAL: Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Ashtabhuja Hill,
P.O. Vindhyachal, Mirzapur-231307, (Tel: 05442– 42343)

24. VRINDAVAN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Vrindavan, Mathura-281121 U.P. (Tel : 442024)

IN BANGLADESH :

1. DHAKA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
14, Siddheshwari Lane, Dhaka-17 (Tel : 405266)

2. KHEORA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Kheora, Via-Kasba, Brahmanbaria.

REGISTERED WITH THE REGISTRAR OF NEWSPAPERS
FOR INDIA AS NO. 65432/97

रत्ना ऑफसेट्स लिमिटेड कमच्छा, वाराणसी, फोन-३१३८३०

माँ आनन्दमयी

अमृत वार्ता

SHREE SHREE ANANDAMAYEE SANGHA

❄ Branch Ashrams ❄

1. AGARPARA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P. O. Kamarhaiti, Calcutta-700058 (Tel : 5531208)
2. AGARTALA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Palace Compound, P.O. Agartala-799001. West Tripura
3. ALMORA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Patal Devi, P.O. Almora-263602, U.P. (Tel : 23313)
4. ALMORA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Dhaul-China, Almora-263881, U.P.
5. BHIMPURA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Bhimpura, P.O. Chandod, Baroda-391105, (Tel : 33208)
6. BHOPAL : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Bairagarh, Bhopal-462030, M.P. (Tel : 521227)
7. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Kishenpur, P.O. Rajpur, Dehradun-248009
U.P. (Phone: 684271)
8. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Kalyanvan, 176, Rajpur Road,
P.O. Rajpur, Dehradun-248009, U.P.
9. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram.
P.O. Raipur Ordnance Factory, Dehradun-248010
10. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
47/A Jakhan, P.O. Rajpur, Dehradun, U.P.
11. JAMSHEDPUR : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Near Bhatia Park, Kadma, Jamshedpur-831005, Bihar
12. KANKHAL : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O.Kankhal, Hardwar-249408, U.P. (Tel: 416575)
13. KEDARNATH : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Near Himlok,
P.O. Kedarnath, Chamoli-246445, U.P.
14. NAIMISHARANYA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Puran Mandir,
P.O. Naimisharanya, Sitapur-261402, U.P.

माँ आनन्दमयी

अमृतवार्ता

श्रीश्री माँ आनन्दमयी के दिव्यजीवन
तथा
दिव्यवाणी की वाहिका त्रैमासिक पत्रिका

वर्ष–४ अक्टूबर, २००० सं.–४

✤

वार्षिक चंदा (डाकव्यय सहित)
भारत में – ६० रुपये
विदेशों में – १२ डॉलर/या ४५० रुपये
एक प्रति – २०/- रुपये

साधारण नियम

यह त्रैमासिक पत्रिका चार पृथक भाषा–हिन्दी, बंगला, गुजराती तथा अंग्रेजी में जनवरी अप्रैल, जुलाई तथा अक्टूबर में प्रकाशित होती है । वर्ष का प्रारम्भ जनवरी से होता है ।

पत्रिका में मुख्यतया श्री श्री माँ पर आधारित लेखों को ही प्रधानता दी जाती है । इनके अतिरिक्त आध्यात्म पर आधारित हृदयस्पर्शी लेख; किसी भी देश तथा किसी भी सम्प्रदाय या धर्म के महापुरुषों की उपदेशात्मक शिक्षावलियों का भी पत्रिका में स्वागत है ।

जो भक्तगण माँ के सम्पर्क में आये हैं वे एकान्त व्यक्तिगत अनुभवों को छोड़कर ऐसे अनुभवों को आकलित कर सकते है जो कि श्री श्री माँ के लौकिक व्यवहार के प्रति आलोकपात करने वाले हों ।

सभी लेख फुलस्केप कागज के एक पृष्ठ पर टंकित या स्पष्ट लिखित होने चाहिये । लेखों की एक प्रति अपने पास अवश्य रखें । मनोनीत न होने पर लेखों को वापस भेजना कार्यालय के लिए असुविधाजनक है । सभी लेख सम्पादक के नाम भेजें ।

अग्रिम वार्षिक चंदा मनीआर्डर या बैंक ड्राफ्ट के माध्यम के "Shree Shree Anandamayee Sangha—Publication A/C".नाम पर भेजें ।

पत्रिका सम्बन्धी सभी प्रकार के पत्रादि व्यवहार तथा वार्षिक चंदा भेजने का पता :

कार्यकारी सम्पादक, "माँ आनन्दमयी - अमृतवार्ता"
माता आनन्दमयी आश्रम
भदैनी, वाराणसी -२२१००१

पत्रिका में विज्ञापन देने का नियम :–

सम्पूर्ण पृष्ठ – २०००/- पूरे वर्ष के लिये
आधा पृष्ठ – १०००/- पूरे वर्ष के लिये

अग्रिम शुल्क के साथ विज्ञापन का विषय (Matter) उपर लिखित पते पर भेजें ।

स्वामी श्री श्री आनन्दमयी संघ की ओर से मुद्रक तथा प्रकाशक श्री पानु ब्रह्मचारी द्वारा श्री श्री आनन्दमयी संघ, भदैनी, वाराणसी–२२१००१ (उ. प्र.) से प्रकाशित तथा रत्ना प्रिंटिंग वर्क्स, बी. २१/४२ कमच्छा, वाराणसी-१० (उ. प्र.) से मुद्रित । सम्पादक–श्री पानु ब्रह्मचारी ।

विषय-सूची

●

विशेष-सूचना

सभी भक्तों को सूचित किया जा रहा है कि जनवरी सन् २००१ में प्रयागराज में पूर्णकुम्भ का विशेष योग उपस्थित हुआ । जो इस सदी का पहला पूर्णकुम्भ होगा । इसके मुख्य स्नान के दिन क्रमशः इस प्रकार है–

१. प्रथम विशेष स्नान – मकर संक्रान्ति, १४ जनवरी
२. द्वितीय विशेष स्नान – मौनी अमावस्या, २४ जनवरी
३. तृतीय विशेष स्नान – वसन्तपञ्चमी, २९ जनवरी

जो भक्त इस अवसर पर श्री श्री माँ के आश्रम के शिविर में आकर स्नानों में सम्मिलित होना चाहते हैं वे १५ नवम्बर तक निम्नलिखित पते पर लिख कर भेजें । व्यक्तियों की संख्या, पहुँचने एवं रहने की अवधि की सूचना विस्तृत रूप से १५ नवम्बर तक अवश्य लिख भेजने का कष्ट करें ।

१ अक्टूबर, २०००

श्री पानु ब्रह्मचारी
श्री श्री माँ आनन्दमयी आश्रम
भदैनी, वाराणसी– २२१००१

Ma in a highly ecstatic mood during the Durga Puja in Bombay in October, 1966, with Didima sitting on her right.

मातृ-वाणी

विषय जो कहते हैं, विषय माने जिसमें विष है, जो हानि पहुँचाते हैं, मृत्यु की ओर खींच ले जाता है । निर्विषयअमृत है, जहाँ विष की गन्ध नहीं है, उसका प्रकाश ।

* * *

अप्राप्ति की ज्वाला तो अच्छी है । खाया है उसकी डकार तो आयेगी ही । साध करके गहना पहनते हो, उसका भार वहन तो करना ही, परन्तु बात यह है कि यह भार हट जायेगा, क्योंकि हटने की ही चीज है न ।

* * *

जिस क्षण में जिसने जन्म लिया है, वह उसे भोग कराये जाता है । और साधन करके जो क्षण मिला वह क्षण उसे सब क्रियाओं की पूर्णता की ओर ले जाता है । अर्थात् कर्मो को पूर्ण कर देता है ।

* * *

यह जो तुमलोग दुःख पाते हो कहते हो, और यह भी कहते हो कि भगवान् तुमलोगों को दुःख क्यों देते हैं, इसका कारण यह है कि वे विपद् देकर विपद् दूर कर देते हैं । बिना दुःख दिये वे अपनी ओर किसी को नहीं ले आ पाते । माता-पिता जिस प्रकार झापड़ मारकर बच्चों को गलत रास्ते से सही रास्ते पर लाने का प्रयत्न करते हैं, भगवान् भी उसी तरह अपनी ओर ले आने के लिए दुःख देते हैं । कुन्ती देवी ने श्री कृष्ण से कहा था—हे प्रभु, तुम मुझे दुःखों के बीच रखना, ताकि तुम्हारी बातें मेरे मन में बनी रहे । सुख में रहने पर मैं तुम्हें भूल जाऊँगी । तुम लोग समझ नहीं पाते, इसलिए सोचा करते हो कि मंगलमय, करुणामय भगवान् संभवतः अमंगल कर रहे हैं । शायद वे निर्दयी हैं किन्तु ऐसा नहीं है ।

* * *

तुम किसी के हो जाओ तो, और सोचो कि जो कुछ कर रहे हो, उन्हीं की शक्ति से । आत्मध्यान करने की इच्छा हो तो वही करो । नाम जपने की इच्छा हो तो वही करो । शरीर द्वारा करते-करते मन द्वारा भी हो जाने की आशा है । देखते नहीं नित्य पत्थर पर एक-एक बूँद पानी पड़ते रहने से उस पर गड्ढा हो जाता है । पहले अनुराग, फिर त्याग, वैराग्य अपने आप आ जायगा । अपने को बिना मारे अपने को पाया नहीं जा सकता । किसी के जिम्मे अपने को बिना छोड़े अपने को मारा नहीं जा सकता ।

* * *

मन क्यों भगवान् की ओर नहा रहता, इसका कारण यह है कि मन बर्हिमुख हो गया है, पर अनवरत अभ्यास के द्वारा मन जैसे जा सकता है, उसी प्रकार आ भी सकता है ।

* * *

धीरे-धीरे अभ्यास होगा । अभ्यास कर कर के दुनिया में फंस गया । अभ्यास करो देखो उनके लिये प्रियता आयेगी । उनके चरण के साथ फाँस हो जायगी । फाँस माने फँसना ।

* * *

वहाँ कोई विचार नहीं, गरीब ले जाय राजा ले जाय, पैसा कहाँ से कौन जगह में आता है । गरीब के लिये भी अमीर के लिये भी । भंडार एक जगह से देखिये तो भण्डार एक । अभ्यास से बनता है काम । बाबा, परमार्थ चिन्तन जो है अभ्यास से बनता है ।

* * *

तुम मैं मैं करके भगवान का चीज भगवत् बुद्धि से करो तो मृत्यु की जय हो जायगी । मेरा बच्चा मेरी सन्तान मेरा मेरा मानो मरो – मरता है । तेरा- तेरा करो तो अमर हो जायेगा । जन्म होने से मरना यह खतम नहीं होता ।

* * *

[1]बच्चे को कुछ देने के लिये माता पिता बुलाते हैं । (जीव) भिक्षुक है ना । प्राप्ति चाहता है, जो प्राप्त होने से और पाने की इच्छा ना रहे । देने लेने का सवाल ना रहे । दुनिया में सब देने का है, अप्राप्त है । देओ देओ को पूर्ण करने के लिये बुलाया । आ जाओ आ जाओ ऐसा चीज ले लो, तुम्हें और माँगना न पड़ेगा । और पाने की इच्छा भी नहीं रहेगी । इच्छा पूरण करने के लिये– अमृतत्त्व किसको देते हैं, उनकी सन्तान है न ! वही प्रेम देने के लिये बुलाया ।

* * *

तुम जो आत्मा है निरावरण है आत्मस्वरूप है भक्त है नित्यदास है वही प्रकट होने के लिये । संयम-नियम । जिस नियम से चलने से क्रिया लेने से तुम्हारा जो असंयम है संयम हो जायगा । तुम कौन है जानने के लिये - प्राकृत जगत् में होता क्या है– तुम्हारी क्रिया शक्ति, उस शक्ति से विषय वासना न बढ़ाकर जिस शक्ति से तुम्हारे अमृत का रास्ता खुले - आत्माराम है - नित्य प्रकट है । तुम्हारे में जो क्रिया शक्ति तुम काम में लगा दो । भगवान् में लगा दो । लोहा, लोहा को ठंडा नहीं रखना । गरम, गरम माने भगवत् चिन्तन जिससे दुनिया में मन नहीं जाये ।

* * *

---

1. श्री श्री माँ के श्री मुख नि-सृत एक पद कीर्तन है – "धर लओ धर लओ धर लओ, निताई डाके आये गौर डाके आये" अर्थात् गौरांग महाप्रभु एवं नित्यानन्द आह्वान करते हैं ले लो । ले लो आ जाओ आ जाओ । माँ से किसी ने पूछ - आ जाओ क्यों कहा, इसी के उत्तर में यह वाणी है ।

तुम में ही तुम है ना - अर्पित रूप में तुम है । आकर्षण रूप में तुम है । तुम में तुम आकर्षण है । शुभगुण जहाँ है - आकर्षण आता कहाँ से - उन्हीं ही से । अपने में अपना । अपना भी कौन - वही है ना - अपने में अपना अर्पित होगा, तभी प्रकट होगा– मैं कौन - जब तक मैं अपने में आप प्रकट न हो कैसे पता लगे ! आकर्षण वहीं से आता है ।

●

सहस्राब्दी की अनुभूति

बाबा, तुम यह फिक्र मत करो । तुम जप ध्यान करते रहो । तुम्हारी सृष्टि जिसने की है वह तुम ही हो और कोई नहीं, तुम किसकी चिन्ता करोगे । अपनी चिन्ता में मस्त रहो । परमार्थ चिन्तन माने अपना चिन्तन । अपने को लेकर-अपना है । दूसरे को लेकर रहा है - यही तुम्हारे दुःख का कारण ।

दो रहने से ही लड़ रहे हो । तेरा मेरा, तुम अपनी चिन्ता में अपनी मौज में रहो । जितना डर और भय है–डर में अन्धेरा है । एक वही है कौन किससे डरे । जो दो लेकर दुनिया में रह रहे हैं उससे डर है । दो में द्वन्द्व और दुःख है । अपना पर्दा आप ही है । दो में भगवान् रहे नहीं । भगवान् और भक्त में द्वन्द्व नहीं । भगवान – नित्यदास । प्रभु और दास । वहाँ पर्दा कहां? नित्यानित्य की धारणा नहीं । नित्य दास महावीर । प्रश्न - तुम्हारे रामचन्द्र कौन है? महावीर ने अपनी दृष्टि में कहा – सर्वरूप हैं – आत्म स्वरूप । दो है ही नहीं । एक आत्मा और अंश दृष्टि में देखें तो वह पूर्ण मैं अंश । तू प्रभु मैं दास ।

—श्री श्री माँ आनन्दमयी

जीवन-पाथेय

हर्ष या विषाद अथवा सुख-दुख में,
पुकारो माँ माँ माँ माँ माँ ।
मातृ गर्भ से जब बाहर आया,
माँ ने तब ही गोद उठाया ।
ओं आ मन्त्र से किया दीक्षित,
सीखा पुकारना माँ माँ माँ ।
निजस्वरूप में अपनापन भर कर,
भूल गये हो वह आदि ध्वनि ।

अतः ढूँढते फिरते हो वेदतन्त्र,
असीम अनन्त की सीमा ।
यदि हृदतत्त्व को चाहते हो समझना,
नाम रूप सुर "माँ" बीज में रम जाना ।
बह जाना आँसुओं में बोलो माँ माँ माँ ।
करो पाथेय जीवन पथ का श्री आनन्दमयी माँ ।

(स्व० श्री ज्योतिषचन्द्र राय)
—"भाई जी"

नोटः— मूल बंगला से अनूदित

श्री श्री माँ आनन्दमयी प्रसंग

—स्व. अमूल्यकुमार दत्त गुप्त

३२ आषाढ़ बुधवार, १६-७-५२.

आज शाम के करीब पाँच बजे माताजी विन्ध्याचल गयीं । प्रातःकाल तक हमें पता नहीं चला कि माता जी आज ही कहीं जाने वाली है । माताजी शीघ्र ही अन्यत्र जाने वाली हैं ऐसी शंका हम कर ही रहे थे । माताजी की गतिविधियाँ ऐसी ही आकस्मिक होती है कि कोई यह अनुमान तक नहीं लगा सकता, माताजी कब क्या करेंगी ।

जितने दिन माताजी यहाँ थी । उन दिनों कोई विशेष उल्लेख योग्य घटना नहीं घटी । विशेष तात्त्विक आलोचनायें हुई हैं ऐसी बात भी नहीं है । देवशंकर बाबू वगैरह के साथ जो सब आलोचनायें हुई हैं वह पुरानी बातों की पुनरावृत्ति मात्र है । कमलाकान्तदादा जब श्री श्री माँ के जीवन की घटनाओं की चर्चा करते थे तब उस सन्दर्भ में माताजी स्वयं ऐसे ऐसे प्रसंग सुनाती थी जो इसके पहले प्रकाश में नहीं आये हैं । माताजी की बात की विशेषता यह है कि वे एक बार में पूरी बात खुलकर नहीं करतीं । किसी घटना का उल्लेख करते हुए एक बार में कुछ अंश कहा, काफी अंश अवशिष्ट रह गया कुछ दिन बाद उसी घटना की पुनरावृत्ति करते हुए अवशिष्ट अंश को जोड़ दिया इसलिए पूर्व या परवर्ती घटनाओं में असमंजस की स्थिति उत्पन्न हो ऐसा नहीं होता । परन्तु परवर्ती घटनाओं में ऐसे प्रसंग रहते हैं,,जिन्हें माताजी के श्री मुख से न सुनकर यदि हम किसी दूसरे की जबानी सुनें तो उन प्रसंगों पर विश्वास करना ही कठिन हो जाता है । बाबा भोलानाथ की दीक्षा के सम्बन्ध में माताजी ने इस बार जो प्रसंग सुनाये, इससे पहले वह सुनने में नहीं आये । भोलानाथ जी ने भी इन प्रसंगों को कभी व्यक्त नहीं किया था । बाबा भोलानाथ जी की दीक्षा के बारे में माताजी से जो सुना वह यह है–

बाबा भोलानाथ जी की दीक्षा–

माताजी ने कहा, "झूलनपूर्णिमा के दिन रात को इस शरीर में दीक्षा का खेल हुआ था । उस रात भोलानाथ इस शरीर के क्रियाकलाप देखते देखते सो गये । अतः किस प्रकार इस शरीर का दीक्षा का खेल हुआ यह वह देख नहीं सके । जब उनकी नींद खुली, तब उन्होंने देखा यह शरीर बैठ कर उँगलियों पर जप कर रहा है । यह देख कर वह आश्र्च्यचकित हो गये । इससे पहले उन्होंने कभी मुझे जप करते नहीं देखा, और किस प्रकार जप किया जाता है, सीखाने वाले किसी व्यक्ति को भी उन्होंने मेरे पास आते नहीं देखा ।

इसी दिन से ही नियमितरूप से प्रातः सायम् जप होने लगा । इस शरीर के यह भाव को देखकर भोलानाथ बेचैनी महसूस करने लगे। कारण दीक्षा हुई नहीं, पर सुबह शाम जप कर रही हूँ यह कैसी बात है? इस शरीर के ममेरे भाई निशिबाबू तब बाजितपुर में रहते थे । भोलानाथ जी ने सब वृतान्त उन्हें सुनाया । भोलानाथ जी से उन्होंने कहा, दीक्षा बिना लिये जप करना ठीक नहीं है, इस शरीर की दीक्षा हुई है या नहीं वह इस शरीर से पूछते क्यों नहीं है । परन्तु भोलानाथ जी स्वतःप्रेरित होकर इस शरीर से यह प्रश्न करने का साहस नहीं कर पाते थे ।

एक दिन शाम को यह शरीर आसन लगा कर बैठा है, सिर पर वस्त्र नहीं है, सर्वाङ्ग भी वस्त्र से ढका नहीं है, एक अस्वाभाविक भाव, इस अवस्था में जप होता जा रहा है । इसी समय भोलानाथ निशिबाबू को साथ लेकर इस शरीर के पास आये । निशिबाबू इस शरीर से ऊम्र में बड़े हैं । भोलानाथ के सामने यह शरीर कभी भी लम्बा घूँघट किये बिना उनके सामने नहीं निकलता था । परन्तु उस दिन यह सब नहीं था । वे लोग मेरे सामने आये हैं इसकी परवाह भी मुझे नहीं थी । यह देख निशिबाबू भोलानाथ से कहने लगे", अभी पूछो ना," अर्थात् इस शरीर की दीक्षा हुई है या नहीं पूछने कहा, यह सुनकर इस शरीर ने कहा "क्यों रे क्या पूछोगे? बात करने का तरीका देखो । इस शरीर से जो उम्र में बड़े हैं, एवं भोलानाथ की उपस्थिति में जिसके सामने कभी बात तक नहीं करती थी, उनको "क्यों रे" कहकर सम्बोधन किया । केवल इतना ही नहीं बाद में जब देखा कि वह डर गये हैं तब उनके गाल पर हाथ भी फेरा गया था । जो भी हो स्वाभाविक भाव से ही ये शब्द कहे गये थे, पर वह सुन कर निशिबाबू डर से पीछे हट कर कह उठे, "आप कौन हैं?" यह शरीर ने कहा, "पूर्ण ब्रह्म नारायण" । "नारायण" शब्द का ही उच्चारण किया गया था । पर स्त्री शरीर होने के कारण उन्होंने सोचा मैंने "नारायणी" कहा होगा । भोलानाथजी ने इस समय पूछा, "तुम्हारी दीक्षा हुई है ।" इस शरीर ने कहा, "हाँ" । "भोलानाथ ने पुनः कहा," मेरी दीक्षा नहीं होगी?" तब जवाब दिया गया, "हाँ" भोलानाथ जी ने कहा, "कब होगी?" मैंने तब दिन, तिथि, नक्षत्र सब ही कह दिया, भोलानाथ जी ने पुनः जिज्ञासा की,"अच्छा, दीक्षा लूँगा, किन्तु कौन मुझे दीक्षा देगा ।" मैं ही तुमको दीक्षा दूँगी ।"

भोलानाथ जी एव निशिबाबू दीक्षा का दिन व तारिख तो समझ गये थे, पर नक्षत्र का जो नाम कहा गया था वह समझ नहीं सके । मैंने तब उन लोगों से कहा, "बाहर तालाब के किनारे बैठ कर जानकी बाबू मछली पकड़ रहे हैं उन्हें बुला लाओ, वे समझेंगे किस नक्षत्र की बात कही है ।" जहाँ हमलोग थे वहाँ से या उस मकान के किसी भी स्थान से कौन क्या कर रहा है यह जानने या देखने का उपाय नहीं है । मेरे द्वारा जानकी बाबू के मछली पकड़ने की बात कहने पर यह लोग हिचकने लगे । तब मैंने कहा "मैं जाकर जानकी बाबू को ले आऊँगी? यह सुनते ही भोलानाथ जी घबड़ा कर बोले, नहीं, नहीं, मैं ही जा रहा हूँ ।" वह जानते थे मेरे लिए कोई भी काम असम्भव नहीं है । एक तो मैं जानकीबाबू के साथ बात ही नहीं करती या उनके सामने भी कभी नहीं निकलती और अभी यदि इस हालत में उनके पास पहुँच जाऊँ तो न जाने कैसी बात हो जायगी । जानकी बाबू संस्कृत जानते थे, अतः उनका नाम कहा गया था । उनको बुलाकर लाया गया, वे

इस शरीर के पास कभी नहीं आये थे। उस पर मेरी यह दशा। इस हालत में किसी भी भद्रपुरुष का एक अपरिचित स्त्री के पास जाना सम्भव नहीं होता। परन्तु उस समय वहाँ का वायुमण्डल ऐसे एक शुद्धभाव में परिणत हुआ था कि उनको इस शरीर के पास आने में तनिक भी कुण्ठा न हुई। उनको नक्षत्र की बात कहने पर वे उसी समय समझ गये उन्होंने सबको समझा भी दिया।

"इधर मेरी यह अस्वाभाविक अवस्था देखकर जानकी बाबू ने सोचा कर्तव्यबुद्धि से मुझे कुछ कहना प्रयोजनीय है, कारण उपस्थित लोगों में वे ही विद्वान् एवं बुद्धिमान थे। उनके द्वारा मेरा परिचय पूछने पर जब पुनः इस शरीर से "पूर्ण ब्रह्म नारायण" "महादेवी" इत्यादि शब्द निकले तब उन्होंने कहा, "आप शैतान, शैतानी," यह सुनकर इस शरीर ने उनसे कहा, "तुम इस शरीर की परीक्षा ले रहे हो? "जानकी बाबू ने तब कहा, "आपने जैसा कहा, आप यदि वैसी ही हों, तब भोलानाथ जी को कुछ करिये।" मैंने पुनः कहा, "तुम इस शरीर की परीक्षा ले रहे हो।" इतना कहकर भोलानाथ जी के मस्तक को स्पर्श किया। स्पर्श करने के साथ-साथ भोलानाथजी की उर्ध्वदृष्टि हो गयी एवं पत्थर जैसे स्थिर हो गये।

आशु (भोलानाथ जी का भतीजा) स्कूल से आकर मेरी और भोलानाथजी की हालत देखकर रोने लगा। मेरी एवं भोलानाथ की ऐसी अवस्था उसने कभी देखी नहीं थी। उसने सोचा वह अपनी चाची व चाचा को खो देगा। इसीलिये उसका यह डर एवं रोना। इधर सन्ध्या उपस्थित होने वाली है, भोलानाथ जी को इस प्रकार स्थिर भाव से बैठा देख कर जानकी बाबू भी घबड़ा गये। उन्होंने मुझसे विनती की" आप भोलानाथ को अपनी पूर्वावस्था में ले आइये" यह सुनकर मैंने भोलानाथ जी को स्पर्श किया। उसके फलस्वरूप भोलानाथ जी स्वाभाविक होकर बोल उठे,"मैं किस आनन्द में था वह बोल नहीं सकता हूँ।"

इस शरीर के निकट से भोलानाथ को दीक्षा लेना पड़ेगा इसीलिये भोलानाथ जी डर डर कर रहते थे। जिस दिन उनकी दीक्षा होगी इस शरीर ने कहा था उस दिन भोलानाथ प्रातःकाल ही कचहरी चले गये। साधारणतः भोलानाथ प्रातःकाल कुछ खाकर कचहरी जाते थे, किन्तु उस दिन कुछ न खाकर चले गये। क्योंकि भोजन के लिए मेरे पास आने से यदि मैं दीक्षा दे दूँ। थोड़ी देर होनें पर मैंने कचहरी में किसी को भेजकर भोलानाथ को बुला भेजा। पर भोलानाथ आये नहीं। उन्होंने उस व्यक्ति को कहला भेजा कि वे इस समय घर नहीं आ सकते। दूसरी बार भी मैंने उनके पास आदमी भेजा। इस बार उन्होंने कहला भेजा कि काम में व्यस्त होने के कारण वे घर नहीं आ सकेंगे। तीसरी बार जब मैंने आदमी भेजा तब उसे कह दिया था भोलानाथ को कहने कि वे अभी घर आयेंगे, न मैं कचहरी जाकर उनको लिवा लाऊँगी? यह बात सुनकर भोलानाथ जी डर गये, कारण वे जानते थे कि यह शरीर सब कुछ कर सकता है। मेरे लिए कचहरी जाकर उपस्थित होना असम्भव नहीं था। उन्होंने तब नौकर से कहा, "तुम्हारी माँ से जाकर कहो। मैं, अभी आ रहा हूँ, वे कचहरी न आवें।" (सभी की हंसी)

थोड़ी देर बाद ही भोलानाथ आये उन्हें स्नान करने कहा गया। दीक्षा के लिए आसन इत्यादि पहले से ही रखे गये थे। भोलानाथ जी के आसन पर बैठते ही इस शरीर के मुँह से स्वतः ही एक मन्त्र निकला तथा इस शरीर के हाथ से भोलानाथ जी का स्पर्श हुआ। इस मन्त्र को सुनकर

भोलानाथ जी ने उसे हृदयस्थ कर लिया। इस प्रकार भोलानाथ जी की दीक्षा हुई थी। दीक्षा के बाद कुछ समय तक वे इसके लिए गर्व का अनुभव करते थे। कहते थे स्त्री के पास दीक्षा लेना क्या लज्जा का विषय है? लोगों को भी पता लगे स्त्री भी गुरु हो सकती है।

भोलानाथ जी की दीक्षा के अतिरिक्त कमलाकान्त द्वारा लिखे गये प्रसंगों के उपलक्ष्य में माताजी अपनी पूर्व की विभिन्न अवस्थाओं की बात भी करती थीं। कीर्तन इत्यादि के समय माताजी को भावावस्था में देखा जाता था। तब उनकी दृष्टि ऊपर को रहती, आनन्द से भरपूर मुखमण्डल दिव्यज्योति से जगमगाता था। यह देखकर एक दिन निरञ्जनबाबू ने माताजी को पूछा था, जिसका आशय यह था कि माताजी को ऐसी अवस्था में कौन सा दर्शन होता है? इष्टदर्शन होता है क्या? इस प्रश्न के जवाब में माताजी ने कहा ता, "दो रहने से तो दर्शन होगा? हाँ, किसी साधक की यदि इस प्रकार उर्ध्वदृष्टि देखी जाय एवं उसके मुख पर यदि आनन्द का भाव प्रकाशित तो मानना पड़ेगा कि उसे इष्ट दर्शन हो रहे हैं।

१० श्रावण, शनिबार, २६-७-५२

आज दिन के ९ बजे माताजी काशी आकर पहुँची, आश्रम आते ही माताजी हॉल में आकर बैठीं वहाँ भागवत एवं गीता पाठ हुआ। कीर्तन के उपरान्त माताजी ऊपर चली गयीं।

रात को मौन के बाद माताजी आँगन में आकर एक छोटी सी चौकी पर बैठीं। किसी के कुछ कहने के पहले माताजी ने अपने से ही बात शुरू की माताजी ने कहा, "इस बार कलकत्ते में एकदिन अज्ञातवास में व्यतीत किया। कहाँ थी किसी को भी पता नहीं चला। किसी को भी सूचना न देकर ही कलकत्ता पहुँचना हुआ। स्टेशन पर उतरकर दीदी (गुरुप्रिया) ने सोपोरी साहब की गाड़ी को ठीक किया। सोपोरी साहब उस दिन कलकत्ते आने वाले थे अतः उनकी गाड़ी उनको लेने स्टेशन पर थी पर घटनाचक्र से उनका आना नहीं हुआ। अन्य एक पंजाबी सज्जन की गाड़ी की व्यवस्था हो गयी। एक सज्जन के साथ पहले थोड़ा सा परिचय हुआ था। हमलोगों को देखकर उन्होंने भी आग्रह दिखाया। कहा, आपलोग कहाँ जायेंगे कहिये, मैं अपनी गाड़ी से आपलोगों को वहाँ पहुँचा दूँगा। उसे कहा गया इसकी आवश्यकता नहीं। हम लोग कनक के घर गये। उनका एक कमरा था जिसका उपयोग वे ठाकुरघर के लिये करते थे। उसी कमरे में हमलोगों के लिये रहने की व्यवस्था कर दी गयी। दूसरे दिन विनय (वन्द्योपाध्याय) बाबू के घर इस शरीर को ले जाया गया। उनका मकान काफी बड़ा है। नीचे की मंजिल में दुकानों के लिये कमरे बनवाकर उनको किरायें पर चढ़ाने की व्यवस्था की गयी है। दो मंजिल पर उनलोगों की रहने की व्यवस्था है। कमरे काफी बड़े-बड़े हैं। मकान का काम अभी भी पूरा नहीं हुआ था। यद्यपि बहुत ही कम समय के लिये उस घर में जाना हुआ था, पर उसके भीतर ही इस शरीर के लिये नये पलँग, गद्दा, कमोड इत्यादि की व्यवस्था की गयी। घर की महिलाओं ने रास्ते से पानी लाकर सभी की भोजन इत्यादि की व्यवस्था की। उनकी अभिलाषा थी तीन दिन तक इस शरीर को अपने यहाँ रखें। परन्तु माताजी ने कहा एक दिन से ज्यादा यहाँ रहना न हो सकेगा। विनयबाबू की वृद्धा माताजी

ने कहा, "ढाका के आजिमपुरा का घर मुसलमानों द्वारा नष्ट किये जाने पर मैं ढाका स्थित आश्रम (रमना) में जाकर मकान के लिये बहुत व्याकुल होकर रो पड़ी थी । उस समय योगेश ब्रह्मचारी ने मुझे सान्त्वना देते हुए कहा था । मकान के लिये व्याकुल मत होइए । उस घर से बड़ा घर आपका होगा । योगेश ब्रह्मचारी की बात सही निकली । माताजी ने यह सब प्रसंग सुनकर योगेश ब्रह्मचारी को बुला भेजा । योगेश दादा के आने पर उनसे पूछा गया उन्होंने विनयबाबू की माता को यह बात कही थी या नहीं । योगेश दादा के इस पर स्वीकृति प्रदान करने पर माताजी ने हँसते हँसते कहा, "तुम्हारी वाक्सिद्धि हुई है ।" वहाँ उरस्थित जनों के प्रति माताजी ने कहा, "अभी से तुमलोग अपने भविष्य के बारे में योगेश से ही पूछना," इस प्रसंग को लेकर थोड़ी देर माताजी ने हँसी हँसी में चर्चा की । बाद में कहा, "यदि बारह वर्ष तक कोई बिल्कुल सच बोले, तो उसकी वाक् सिद्धि होती है । वह जो कहता है सच होता है ।

(क्रमशः)

देवनदी

—रेणू कपूर

दिव्य गिरि से निकली यह देवनदि,
निरंतर बहती रहती है ।
फल-फूलों के गहन वनों से,
होकर यह गुजरती है ।
जब चंदा की किरणें इस पर,
अपना प्रकाश फैलाती हैं ।
तब यह देखने में,
अतीव रमणीय लगती है ।
ज्ञान-गंगा की यह धारा,
अविचल गति से बहती है ।
अहो ! जीव को परमपथ का,
कल्याण-मार्ग दर्शाती है ॥

*

मातृशरणम् गच्छामि

—श्री अयोध्या प्रसाद दीक्षित

धर्मं शरणम् गच्छामि, संघं शरणम् गच्छामि, मातृ शरणं गच्छामि ।

श्रीमद् भगवत् गीता में समस्त गीता के सार रूप में भगवान कहते हैं,—

सर्व धर्मान् परित्याज्य, मामेकं शरणं व्रज ।
अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षायिष्यामि मा शुचः ॥

अर्थात् सब प्रकार के सांसारिक भ्रमों और प्रपंचो को त्याग कर मेरी शरण में आ जाओ मैं तुम्हारे सभी पापों का शमन कर दूँगा । तू शोक मत कर । हम मातृ भक्तों के लिये संसार की तीन तापों की ज्वलन शील व्यथा से बाहर निकल कर शीतल मातृ आँचल की छाया में सुख शान्ति से विश्राम करने का और भव सागर से तरने का एक मात्र उपाय पूर्ण ब्रह्म नारायण स्वरूपा माँ की शरण में पूर्ण समर्पण है । चारों प्रकार के मातृ भक्त आर्त, अर्थार्थी, जिज्ञासु तथा ज्ञानी अपनी अपनी स्थिति और स्वर तथा क्षमता के अनुसार माँ की करूणा, वरदान, ब्रह्म ज्ञान तथा सामीप्य ब्रह्मानन्द का अनुभव करते है ।

जो कहते हैं उनकी माँ के अनुग्रह की घटनाओं का आरपार नहीं है । जो सांसारिक उपलब्धि का वर्णन करते हैं उनकी उपलब्धियों की सीमा नहीं है । जो आध्यात्मिक स्वर की प्राप्ति की व्याख्या करते है उनकी जिह्वा पर सरस्वती रूपा माँ का प्रसाद स्पष्ट भासित होता है जो माँ के ब्रह्मानन्द के रस में निमग्न हो जाते हैं वह गूँगे के गुड़ की भाँति रसास्वादन करते हैं वह गिरा अनयन नयन विनु बानी की अवस्था में पुलकायमान होते रहते हैं । 'मन मस्त हुआ फिर क्यों बोले कबीर" हम मातृ भक्त कितने भाग्यवान हैं कि 'पूर्ण ब्रह्म नारायण' ने हमारे जविन काल में सरल सात्विक सौम्य नारायणी माँ के रूप में अवतार लिया । हमें इसी परम आकर्षक मधुर रूप में दर्शन दिया जो बड़े बड़े दीर्घ काल की तपस्या वाले साधकों को भी दुर्लभ है । हमें स्पर्श किया । लौकिक स्नेहिल माँ के समान सामने बैठ कर भोजन प्रसाद खिलाया । शान्त सरलतम रूप में हँस हँस कर हमसे बात किया । गंभीर बन कर सृष्टि और ब्रह्म ज्ञान के रहस्य का उद्घाटन किया । लोहे के समान जो उनकी चुम्बक शक्ति से उनके समीप आया उसे दमकता हुआ स्वर्ण बना दिया जैसे लौकिक पारस मणि करता है । पापी को पुण्यात्मा बना दिया । पुण्यात्मा को संत और संत को परम हंस बना दिया । असम्भव को सम्भव कर दिया । वर्तमान भारत को नयी अध्यात्मिक स्फूर्ति और प्राचीन वैदिक परम्परा को रूढ़ियों से उबार कर नई दिशा प्रदान की । द्वेष और कलह पीड़ित विश्व को शान्ति और प्रेम तथा सद्भावना का कल्याणकारी सन्देश दिया । व्यथित मानवता को

सुख शान्ति की प्रकाश मान सर्वहितकारी किरण दिखाई पड़ी । हम ऐसी दिव्य माता आनन्दमयी के चरणों की शरण में आकर कृतार्थ हो गये ।

धन्य है त्रिपुरा का वह पूर्व बंगाल (अब बंगला देश) का खेवड़ा ग्राम जहाँ माँ ने बोध-मय अबोध शिशु के रूप में जन्म लिया । धन्य है वह प्रदेश जहां यह अनुपम अवतार हुआ । जिससे पूरा बंगाल, पूरा भारत और समस्त विश्व परम अलौकिक परमानन्द से भर गया ।

धन्य हैं दीदी माँ (मुक्तानन्द गिरि महाराज) जिनकी कोख से जगज्जननी माँ ने जन्म लिया । धन्य है परम पूज्य विपिन बिहारी भट्टाचार्य और उनका कुल जिस परिवार में इस स्वर्गीय परम सुन्दरी कन्या ने जन्म लिया ।

धन्य हैं भोलानाथ जी महाराज (रमणी मोहन चक्रवर्ती) जिन्होंने पूर्ण ब्रह्म नारायण को पत्नी रूपमें प्राप्त किया और दीर्घकाल तक इसी भ्रम में मानसिक वेदना की तपस्या की । धीरे धीरे उन्हें निश्चय हो गया कि जिन्हें वह लौकिक पत्नी समझ बैठे थे वह तो जगज्जननी नारायणी माँ है जो बालिका वधू और पूरे परिवार की अनूठी सेवा की लीला कर रही थी । इसके बाद माँ ने उनसे तारापीठ उत्तरकाशी आदि स्थानों में कठोर तपस्या करायी और अन्त में उन्होंने माँ की उपस्थिति में पूर्ण ब्रह्म नारायण का सायुज्य प्राप्त किया । माँ ने स्वयं अपने मुख से इस अलौकिक दिव्य सम्बन्ध की अनेक घटनाएँ मातृभक्तों को हँस हँस कर बताईं ।

धन्य है भाई जी (ज्योतिष चन्द्र राय) जो पूरे बंगाल की तत्कालिन अंग्रेजी सरकार के बहुत उच्च पदस्थ अधिकारी थे और जिन्होंने बालिका वधू माँ को घुँघट के आवरण में भी देख कर तुरन्त समझ लिया कि यह तो जगज्जननी माँ है । और उसी समय से अपने को माँ को पूर्ण समर्पण कर दिया । माँ के साथ ढाका से देहरादून, अल्मोड़ा होते हुए मानसरोवर की यात्रा की जहाँ समधिस्थ अवस्था में माँ के भी मुख से निकले हुये पूर्ण वैदिक मंत्र को ग्रहण कर अभूत पूर्व दीक्षा ली और अन्त में माँ और भोलानाथ जी के सामने अल्मोड़ा में चराचर जगत से एकाकार अवस्था में माँ की असीम कृपा से माँ की महाज्योति में समाहित हो गये ।

धन्य है दीदी (गुरुप्रिया देवी) जो ढाका में बालिका वधू माँ के आकर्षण से खिंची चली आईं । माँ ने देखते ही चिरपरिचित आत्म सखी को पहचान लिया और फिर कभी साथ नहीं छोड़ा । हमारे कल्याण के लिये माँ के मानव शरीर को कठोर सेवा तपस्या साधाना से सुरक्षित रखा । अनेक आश्रमों की नींव डाली । अनेक संस्थाओं का श्री गणेश तथा संचालन करने में अभूत पूर्व योगदान दिया और अन्त में काशी में अपनी ज्योति को माँ की ज्योति में मिला दिया ।

धन्य है वह सब देवियाँ जिन्होंने अपनी अथक सेवा, बलिदान जप तप से माँ के चिन्मय मानव शरीर को हमारे दिव्य दर्शन के लिये भौतिक जगत में रहने में सहायता की अन्यथा अव्यक्त का आकर्षण अपनी निधि माँ को कब का वापस बुला लेता जिसे 27 अगस्त 1982 को शंकराचार्य जैसे सन्त की प्रार्थना भी नहीं रोक सकी ।

धन्य है स्वामी अखंडा नन्द जी (शशांक शेखर मुखर्जी) आदरणीया दीदी के पिता जो अंग्रेजी काल में बंगाल के सिविल सर्जन थे और माँ की आकर्षण परिधि में आने पर संन्यास ले लिया और

अन्त तक माँ के साथ रहे । धन्य हैं स्वामी परमानन्द तथा अन्य अनुगामी सन्त जो माँ के सान्निध्य में आकर उस दिव्य ज्योति से प्रभावित हो कर बराबर माँ के वचनों का अनुसरण करते रहे तथा जिन्होंने माँ की अनुमति से स्थापित माता आनन्दमयी संघ तथा अनेक आश्रमों, देवालयों तथा संस्थाओं के संचालन में योगदान किया तथा माँ की प्रेरणा से सनातन धर्म की मर्यादा परम्परा पवित्रता तथा माँ के प्रति पूर्ण समर्पण को सुरक्षित रखा ।

श्री श्री माँ आनन्दमयी संघ माँ की अनुमति से स्थापित एक अनूठी संस्था है जो अनेक आश्रमों संस्थाओं और धार्मिक आयोजनों का संचालन माँ की अलौकिक प्रेरणा शक्ति से मानवता के कल्याण के लिये करती है । इस अति महत्वपूर्ण संस्था की संचालन समिति का स्वरूप भी अद्भुत है । इसमें आधे सदस्य ऋषि तुल्य साधु प्रमुख के साथ संघ के अन्य सन्त है । जो प्राचीन वैदिक ऋषि परंपरा के प्रतीक है और आधे सद्गृहस्थ भक्त हैं जिनमें अधिकांश गृहस्थ संत हैं जो माँ के प्रतिपूर्ण रूप से समर्पित हैं और जिनका आदर्श महाराजा जनक हैं । इस प्रकार यह निवृत्ति मार्ग तथा प्रवृत्ति मार्ग का अनूठा संगम है । और दोनों प्रकार के मातृभक्त एक दूसरे के पूरक हैं ।

संघ का उद्देश्य माँ की प्रेरणा से ज्ञान भक्ति निष्काम सेवा और माँ के प्रति पूर्ण समर्पण के आधार पर माँ के अनेक देश विदेश के आश्रमों का संचालन करना तथा माँ के समय की परंपरा, मर्यादा, पवित्रता और मूलतः माँ के आध्यात्म को विश्व तथा मानवता के कल्याण के लिये अक्षुण्ण रखना है ।

ऐसे परम पवित्र कल्याणकारी संघ की शरण में जाना हम मातृ भक्तों का पुनीत कर्त्तव्य है ।

धर्मं शरणम् गच्छामि, संघं शरणम् गच्छामि, मातृ शरणं गच्छामि ।

जय माँ, जय माँ, जय जय माँ

●

करूणामयी माँ

—श्री मोहन लाल आर्य

माँ आनन्दमयी करूणा की मूर्ति थी । जो भी माँ की शरण में गया माँ ने उसकी रक्षा की । माँ के भक्त अपने पुरूषार्थ से नहीं माँ की कृपा से अपने लक्ष्य को पाते रहे हैं । माँ का शरणागत माँ की कृपा से सुख-दुख के पार चला जाता है ।

परम-पूज्य गुरूदेव श्री आशुतोष बनर्जी माँ के अनन्य भक्त थे । जब कभी माँ विन्ध्याचल आती थीं तो बनर्जी साहब को, सोतू बाबू को, कुलदा चटर्जी आदि को सूचना मिलती थी और वे लोग जाया करते थे । सन् १९६९ की बात है मेरा लड़का जो दो - ढाई वर्ष का था ट्राई - साइकिल चलाते समय एक पाव गर्म दूध में गिर गया और देखते-देखते उसकी अकाल मृत्यु हो गयी । मैं मानसिक रूप से बेहद अशान्त था । उस समय बनर्जी साहब ने कहा कि माँ आयी है चलो दर्शन कर आवें बनर्जी साहब के श्री मुख से माँ का बड़ा बखान सुन रखा था । पता नहीं क्यों मन में माँ का एक रूप अंकित हो गया था कि वे श्याम वर्ण की महिला होंगी । कंठी-माला पहने होंगी । शरीर भर में विभूति लगायी होंगी । लेकिन जब माँ को देखा तो मैं आश्चर्य से भर गया । ऐसा देव दुर्लभ रूप नहीं देखा था । ऐसे ऐश्वर्य की मैंने कल्पना भी नहीं की थी । लगता था कि शरीर में हजारों आँखे हों जायें तो भी शायद देखने से तृप्ति न हो । मैं एकटक माँ को देखता रहा । माँ चुपचाप बैठी थीं । कमरा नर-नारियों से भरा था । लेकिन सब मौन थे । लोग मन ही मन जप कर रहे थे, ध्यान कर रहे थे और माँ को देख रहे थे । थोड़ी देर बाद प्रसाद वितरण होने लगा । एक महिला लोगों को दोने में पायस (खीर) देने लगीं । जब वे बनर्जी साहब के पास आयीं तो मैने कहा-महाराज प्रसाद है ले लीजिये । बनर्जी साहब देखते नहीं थे । उन्होने हाथ से चुल्लू लगा दिया - जैसे लोग पानी पीते हैं । उनका ऐसा करना था कि माँ अपने स्थान से उठीं और पूरी पथरी भर खीर बनर्जी साहब के चुल्लू में डाल दी कुछ खीर बनर्जी साहब के चुल्लू में गिरी, कुछ बालों में और कुछ माथे पर । माँ ने कहा -"बाबा ने खूब खीर खायी ।"

यह मेरा प्रथम दर्शन था । उसके बाद अनेक बार, अनेक स्थानों पर अनेक रूपों में माँ के दर्शन हुये । लगता है बनर्जी साहब ने माँ के चरणों में मुझे सौंप कर मुझ पर बड़ी कृपा की । उसके बाद से तो जीवन में एक से एक उतार चढ़ाव आये और माँ की कृपा ने सभी प्रकार से रक्षा की । मेरा तो अपना दृढ़ विश्वास है कि माँ की कृपा से असम्भव भी सम्भव हो जाता है । माँ ने स्वयं कहा है कि इस-शरीर पर विश्वास रखो । तुम्हारा अखण्ड विश्वास ही तुम्हारी आँखें खोल देगा ।

यों तो अनेक घटनाएँ हैं । लेकिन दो-एक का मैं जिक्र करना चाहता हूँ । एक बार मैनें हार्निया का ऑपरेशन कराया था । डा. बैजनाथ प्रसाद (वाराणसी वाले) जैसे सीनियर और ख्याति लब्ध

सर्जन ने आपरेशन किया था पहले तो पेशाब बन्द हो गयी फिर पेशाब होने लगी तो रूकने का नाम नहीं लेती थी। हर एक-दो मिनट पर बाथरूम जाने की आवश्यकता पड़ने लगी। बाथरूम से बेडरूम पर आते-आते फिर ब्लैडर भर जाय। हार कर मैं बाथरूम में ही चेयर लगाकर बैठ गया। यह क्रम दो दिन तक चला। हर प्रकार के टेस्ट हुये। कुछ नहीं निकला। डॉक्टर परेशान, मैं परेशान, घर के लोग परेशान। सोना असम्भव हो गया। मैं बहुत नर्वस हुआ कि अब कैसे चलेगा ? मैं क्लास कैसे लूँगा? जीवन के अन्य काम कैसे होंगे ? डाक्टरों ने जवाब दे दिया। सब सो गये। मैं रात दो बजे माँ से प्रार्थना करने लगा कि माँ अब तुम्हारा ही सहारा है। जैसा चाहो वैसा करो। प्रार्थना करते-करते कब सो गया पता नहीं। सुबह जब नींद खुली तो सब कुछ नार्मल था। सब हैरान थे। यह थी माँ की कृपा।

अभी कुछ महीने पहले मैं दिल्ली गया था। मेरा लड़का वहाँ सी.ए. कर रहा है। उसके स्कूटर में खट्-खट् की आवाज होती थी कि जैसे कोई नट-बोल्ट ढीला हो गया हो। मिस्त्री को दिखाया। उसने काहा कि सब ठीक है। हम लोग लोदी कालोनी से पालम गये। मैं तो वहाँ से जल्दी ही आना चाहता था। लेकिन जिनके यहाँ गया था वे बोले कि इस समय बडी भीड़ होगी हम लोग खाना-पीना खाकर थोड़ी देर से जांय। हम लोग मान गये। आते-आते रात के दस बज गये। हम लोग पालम से ४-५ किमी. आये होंगे कि पिछली पाहियों के सभी नट-बोल्ट एक साथ टूट गये और स्कूटर केवल अगली पहिया और पिछले पैनल के सहारे चलने लगा। अगला ब्रेक लगाने का अर्थ था कि गाड़ी का उलट जाना। स्कूटर की स्पीड ४०-५० से घटकर १०-१५ किमी. प्रतिघण्टा हो गयी। पालम की सड़क नेशनल हाई-वे है। १०० किमी. प्रति घण्टे की स्पीड से गाडियाँ चलती हैं। पीछे आने वाली किसी भी गाड़ी से हम लोग दब सकते थे। अन-बैलेन्स्ड होकर गाड़ी किसी से टकरा सकती थी। हारे को हरिनाम के अनुसार रक्षा के लिये माँ की प्रार्थना करने लगा और माँ ने रक्षा की। हम लोगों का स्कूटर कुछ दूर जाकर स्वयं रूक गया। हम लोगों को खरोंच तक नहीं आयी। यदि हम लोग जल्दी चल दिये होते तो सड़क पर इतनी भीड़ रहती है कि पीछे वाली गाड़ी निश्चित रूप से धक्का दे देती। माँ की कृपा से लेट हुये। अब समस्या थी वहाँ से स्कूटर को १५-२० किमी. तक लाने की वहां एयर फोर्स के आफिस के बंगले थे। सोचा किसी के यहाँ रख दूँगा। सुबह मिस्त्री को लाकर ठीक करा कर ले जाऊँगा। लेकिन सभी बंगले भीतर से बन्द थे। मन ही मन माँ से प्रार्थना कि जैसे प्राणों की रक्षा किये हो उसी प्रकार इसकी भी कुछ व्यवस्था करो। थोड़ी देर में देखा पीछे से एक खाली टेम्पो आ रहा है। पूछा तो बताया कि वह बिहार का रहने वाला है। यह जानकर कि हम लोग पूर्वी उत्तर प्रदेश के रहने वाले हैं वह स्कूटर लाद कर लाने को तैयार हो गया और किसी प्रकार हम लोग सही सलामत घर आ गये। इसे आप क्या कहियेगा? कुछ लोगों के लिये यह मात्र संयोग है लेकिन मेरे लिये यह माँ कि प्रत्यक्ष कृपा है। ऐसी एक नहीं अनेक घटनाएँ है मेरे साथ तथा दूसरे लोगों की। हमारी माँ दयामयी है, करूणामयी है - वह अपनी संतानों की सदैव रक्षा करती है। आवश्यकता है विश्वास की, अटूट निष्ठा की।

●

२१वीं सदी के लिये धर्म का स्वरूप

–डॉ. प्रेम नारायण सोमानी

भारत भूमि में सदैव से ऋषि, मुनि, बुद्ध, जिन उत्पन्न होते रहे है. जिन्होने प्रकृति के नियमों को अपनी अनुभूति पर उतारा है और धर्म को समय-समय पर जागृत एवं परिभाषित किया है। आज भी भारत इसीलिये धर्म का विश्व गुरू है। इसी संदर्भ में भारत में धर्म शब्द का बड़ा रोचक इतिहास है। भारत में ढाई हजार वर्ष पूर्व धर्म की परिभाषा थी - "धारण करे सो धर्म"। क्या धारण करे? किसको धारण करे? तो समझाया कि अपना स्वभाव धारण करे अपना लक्षण धारण करे, इस अर्थ में धर्म कहलाता है। आज भी कहते है अग्नि का धर्म जलना और जलाना। यानी अग्नि का स्वभाव है - स्वयं जलती है और उसकी लपेट में जो आ जाता है उसे भी जलाती है। आज भी कहते है सारे प्राणी मरण धर्मा है। मरना उनका स्वभाव है। सारे प्राणी जरा धर्मा है - जर्जरित होते ही है। सारे प्राणी व्याधि धर्मा है - उनको कोई न कोई रोग लग ही जाता है। यह स्वभाव है, यह प्रकृति है। भारत की पुरानी भाषा में धर्म का यही अर्थ था - स्वभाव है, प्रकृति का नियम है, कुदरत का कानून है, विश्व का विधान है। इसी को ऋत यानी कानून कहते थे। ऐसा होगा तो यह परिणाम आवेगा ही, ऐसा नहीं होगा तो यह परिणाम नहीं आवेगा। कितनी वैज्ञानिक बात है। हम धर्म शब्द के इतिहास को भूल बैठे है। प्राचीन भारत में दो शब्द प्रयोग होते थे - कुशल धर्म और अकुशल धर्म। इतिहास बताता है कि कुशल धर्म अपने चित्त पर ऐसी वृत्तियाँ धारण करना होता था जिससे हमारा कुशल हो। हमने ऐसी वृत्तियाँ धारण की जो हमारा अकुशल करेगी तो वह अकुशल धर्म कहलाया इसी प्रकार चित्त की वे वृत्तियाँ जो मनुष्य को आर्य बना दे वे आर्य धर्म कहलायी, जो चित्त वृत्तियाँ मनुष्य को अनार्य बना दे वे अनार्य धर्म कहलायी। आर्य का अर्थ होता था ऐसे व्यक्ति से जो अपने चित्त विकारों को दूर करते-करते संत हो गया, सज्जन हो गया, भक्त हो गया। अब वह किसी प्रकार की बुराई नहीं कर सकता। जो बुराई के रास्ते पड़ा वह अनार्य। कुशल धर्म, पुण्य धर्म, शुक्ल धर्म या आर्य धर्म एक दूसरे के पर्याय थे। इसी प्रकार अकुशल धर्म, पाप धर्म, कृष्ण धर्म या अनार्य धर्म एक ही अर्थ में प्रयोग होते थे। समय बीतता गया, धीरे धीरे जो अच्छी बाते है, कुशल है, शुक्ल है, आर्य है वे ही केवल "धर्म" कहलायी। जिसे अकुशल धर्म, पाप धर्म कृष्ण धर्म या अनार्य धर्म कहते थे– पाप कहलाये। इस प्रकार धर्म या पाप जैसे शब्दों का प्रयोग होना प्रारम्भ हुआ।

एक और शब्द पुरातन भाषा में प्रयोग हुआ - "सनातन धर्म" दुर्भाग्य से अब सनातन धर्म किसी एक सम्प्रदाय को कहने लगे है। सनातनी धर्म या आर्य समाजी धर्म का इससे कोई लेन देन नहीं है। धर्म सदैव सनातन है। ऋण या कुदरत का कानून वैसे का वैसा बना रहता है। आज से हजारो लाखों वर्ष पहले भी कोई व्यक्ति अपने मन में क्रोध जगाता था तो वैसे ही व्याकुल हो जाता

था जैसे आज क्रोध जगा कर व्याकुल होता है । हजारों लाखों वर्ष बाद भी क्रोध जगाकर वह वैसे ही व्याकुल होगा । आज के हजारो लाखों वर्ष पहले कोई व्यक्ति मैत्री, करूणा, सद्भावना जगाकर बड़ी सुख शान्ति का अनुभव करता था आज भी करता है, हजारो लाखों वर्ष बाद भी करेगा । यह प्रकृति के नियम अटूट है, सदा रहने वाले है । संसार में सब कुछ बदलता है लेकिन प्रकृति के नियम नहीं बदलते । इस अर्थ में "धर्म" हमेशा सनातन होता है ।

समय बीतता गया तो कर्तव्य के अर्थ में भी "धर्म" शब्द का प्रयोग होने लगा । अपने माता पिता की सेवा करना मेरा कर्तव्य है । यह मेरा धर्म है । समाज में जो दुखियारे है उनकी सेवा करना मेरा धर्म है - मेरा कर्तव्य है ।

आज से 2000 वर्ष पूर्व पहले कोई व्यक्ति धर्म को हिन्दू धर्म नहीं कहता था, बौद्ध धर्म या जैन धर्म नहीं कहता था । प्राचीन भारत की भाषाओं में यह शब्द ही नहीं थे । आज दुर्भाग्य से सारे विश्व में धर्म को सम्प्रदाय का पर्याय मानते है । इसीलिये विश्व में इतने सारे धार्मिक समुदाय है जैसे हिन्दू, बौद्ध, जैन, यहूदी, ईसाई, मुसलमान, पारसी आदि । यह समुदाय जिस स्थान देश विशेष में जन्मे और पनपे उनमें वहाँ की भौगोलिक एवं समाजिक अवस्थाओं का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है । मरू भूमि में जन्मे यहूदी, ईसाई, मुस्लिम धर्म रेगिस्तान के सपाट दृश्यों से प्रभावित निराकार की अवधारणा मानते है । इनके कर्म काण्ड अलग-अलग समाज की देन है । इसीलिये सबके तीज़, त्योहार, ब्रत शील सदाचार सबमें कुछ न कुछ भिन्नता है । कालान्तर में धर्म का सार-प्रकृति के नियमों को जानना गौण होता गया और समुदायों को अपने तीज त्योहारों, व्रतों आदि से ही चिपकाव हो गया और वही "धर्म" समझे जाने लगे । इन तीज त्यौहारों, व्रतों आदि की वैज्ञानिकता लोग भूल गये और लकीर के फकीर बनते गये ।

जब से विश्व में साम्यवाद का जोर बढ़ा तो साम्यवादी देश धर्म को मानव मन को अफीम की भाँती नशे में बेहोश रखने की भाँति मानने लगे । तर्क और बुद्धि का प्रयोग धर्म को समझने में लगने लगा । पहले जैसा भयवश या लोभवश सम्प्रदायिक धर्म को मानना आवश्यक नहीं रहा । कट्टरवादिता को थोड़ा धक्का लगा और इसीलिए प्रतिक्रिया स्वरूप "धर्म" का साम्प्रादायिक कट्टरवाद और गहराता चला गया ।

विज्ञान की प्रगति ने मनुष्य को चांद सितारों पर पहुँचा दिया । वहाँ बस्तियाँ बसाने की योजनायें बनने लगी । विश्वामित्र की भाँति मनुष्य सृष्टि रचने में समर्थ हो गया है - टेस्टट्युब बेबी, क्लोनिंग द्वारा भेड़े, गाय आदि पशुओं का निर्माण । स्वयं मनुष्य की संभावित संरचना निकट भविष्य में ही होने वाली है । वैज्ञानिको ने एटम और उसके न्यूक्लियस के अन्तिम स्वरूप प्रकंपन को पहचान लिया है और उसके सदैव परिवर्तित होने वाले भौतिक स्वरूपों को भी जान लिया है । आज का तार्किक मानव अपनी सारी मान्यताओं को अविश्वास से देख रहा है । पता नहीं कब किस मान्यता की कलई खुल जावे । समझदार व्यक्ति सर्व व्यापी सर्व शक्तिमान परमेश्वर को भीरू मानस के लिये एक सम्बल से अधिक मानने को तैयार नहीं है । सत्य की खोज वैज्ञानिकों द्वारा जारी है और प्रकृति के रहस्य खुलते ही जा रहे है जो हमें मजबूरन धर्म के स्वरूप को सोचने को

बाध्य करते है । 21वीं सदी में धर्म का क्या स्वरूप हो? क्या भावावेश वाला धर्म रहे जो प्रवंचनाओं से और माया मरीचिकाओं से भरा हुआ है, जिसमें पण्डे, पुजारियों, पुरोहितों मौलवियों और पादरियों द्वारा बराबर शोषण किया जाता रहा है । यही समुदाय है जो कट्टरवादिता में सीधे साधे नासमझ को फँसाये रखता है । या धर्म का कोई स्वच्छ, प्राँजल शोषण रहित स्वरूप है? 21वीं सदी में धर्म की क्या आवश्यकता? अभी हाल में बम्बई, मद्रास, दिल्ली, कलकत्ते से एक सर्वेक्षण नवयुवकों का हुआ जिसमें 80 प्रतिशत ने धर्म की आवश्यकता पर जोर दिया । उन्होंने कर्मकाण्ड, वाह्य आडम्बर जो धर्म के सार को ढके रहते है उन्हे अनावश्यक माना और सब धर्मो में मिलने वाली आध्यात्मिकता की एकता को स्वीकार करते हुए उसे आवश्यक माना उन्हें यह भी माना कि धर्म व्यक्ति को सुख, शान्ति के लिये भविष्य में और भी आवश्यक हो जायेगा । समाज सुख शान्ति एवं समृद्धि से भरपूर रहेगा । अतएव हम धर्म के जीवन जीने की कला माने और मन के विकारों से मुक्त करने की एक सार्वजानिक वैज्ञानिक विद्या माने तो धर्म का सही स्वरूप हमारे सामने आता है । आखिर यह स्वरूप क्या है? सभी प्रकार के पाप कर्मो से बचो, कुशल कर्म का संपादन करो और अपने चित्त को बराबर निर्मल करते रहो । विपस्सना ध्यान निरन्तर अभ्यास करे चित्त निर्मल करने की ही विद्या है जो शुद्ध धर्म पर आधारित है उसका यही धर्म का सार्वजनिक, सार्वभौम एवं सार्वकालिक स्वरूप है ।

धर्म न हिन्दू, बौद्ध है, धर्म न मुस्लिम जैन ।
धर्म चित्त की शुद्धता, धर्म शांति सुख चैन ॥
सदाचार ही धर्म है, दुराचार ही पाप ।
पर सेवा ही धर्म है, पर पीड़न ही पाप ॥
कर्म काण्ड न धर्म है, धर्म न बाह्याचार ।
प्रज्ञा, शील, समाधि ही, शुद्ध धर्म का सार ॥
धारे तो ही धर्म है, वरना कोई बात ।
सूरज उगे प्रभात है, वरना काली रात ॥

●

माँ का प्यार

—डा. अनुज प्रताप सिंह

माँ का प्यार
जिसका कोई विकल्प नहीं
वह कभी नहीं चुकता है
सुख या दुःख हो
वह समुद्र-सा रहता है
न कभी बिकता है
न खंडित होता है
लायक-नालायक
पुत्रों के लिए भी एक-सा
आकाश और धरती को
क्षितिज-सा मिलाता है
वह आद्या शक्ति है
वह नवधा भक्ति है
साधक और साध्य है
माँ का विमल हृदय
अद्वितीय है
अमर है
शाश्वत है
क्या-क्या कहूँ
वह जीवन का सर्वस्व है
जो अपने लिए कुछ नहीं चाहता है
महामंगल का पुजारी
सदा बना रहता है
माँ तुझको
कोटिशः प्रणाम

●

वेदान्त में जीवात्मा के मरणोत्तर गतिप्रकार

–डॉ. लक्ष्मेश जोषी

कर्म, उपासना एवं ज्ञान के अनुसार, मृत्यु के बाद जीवात्मा के अनेक गतिप्रकार होते हैं। आत्मज्ञान की पूर्वभूमिका के रूप में, आत्मस्वरूप की जिज्ञासा होनी चाहिए। जिज्ञासा उत्पन्न करने के लिए चित्त शुद्धि, रागद्वेषादि मलों को दूर कर निर्मलता प्राप्त करना अनिवार्य है। वेदाध्ययन, यज्ञ, दान, तप इत्यादि कर्म निष्काम भाव से करने से चित्त की शुद्धि होती है (तम् एतम्, वेदानुवचनेन, ब्राह्मणा विविदिषन्ति, यज्ञेन, दानेन तपसा। –बृहदारण्यक ४-४-२२)। मात्र मानव-शरीर ही अच्छे-बुरे कर्म करने में स्वतंत्र है (–कर्मण्येवाधिकारस्ते – गीता २-४७)। इसी लिए मनुष्य जन्म में आत्म-स्वरूप को जान लिया तब ठीक है, अन्यथा बड़ा विनाश, जन्म-जरा-मृत्यु का लंबा चक्कर सामने खड़ा है (– इह चेद् अवेदीद् अथसत्यमस्ति, न चेद् इह अवेदीन् महती विनष्टिः -केनोपनिषद् २-५)। मनुष्य जैसा संकल्प, जैसी श्रद्धा करता है वैसा वह बन जाता है (क्रतुमयः पुरुषः, छान्दोग्य ३-२४-१; यो यच्छ्रद्धः स एव सः, गीता १९-३)।

जीव अनेक प्रकार के होते हैं। जो जीव अत्यंत पापी हैं वे बार-बार जन्म लेते हैं, और मरते हैं (– जायस्व, म्रियस्व, छान्दोग्य ५-१०-८)। अधिकांश जीव ऐसे होने से परलोक में गति करने वालों की संख्या बहुत कम रहती है। इसीलिए परलोक पूर्णतः भर नहीं जाता। वर्षा में बिजली के खंभे के पास असंख्य जीव जन्म लेते हैं और मरते हैं।

दूसरे प्रकार के जीव पुण्य कर्म और पाप ज्यादा करते हैं। ऐसे जीव परलोक में विश्वास नहीं रखते हैं। आत्म-कल्याण में प्रमाद करने वाले एवं धन के मोह से मदोन्मत्त रहते हैं। ये जीव बार-बार यमराज के वश में आते हैं और पाप के परिणाम-रूप कड़ी यातनाएं भोगते हैं। (न साम्परायः प्रतिभाति बालं, प्रमाद्यन्तं वित्तमोहेन मूढम्। अयं लोकः, नास्ति पर इति मानी, पुनः पुनर्वशमापद्यते मा। –कठोपनिषद् १-२-६; स्वदुष्कृतानुरूपा यामीः यातनाः अनुभूय ... शांकरभाष्य, ब्रह्मसूत्र ३-१-१३)।

तीसरे प्रकार के जीव इष्टापूर्त – दत्त के कर्म करने वाले होते हैं। इष्ट-यज्ञादि कर्म, पूर्त अर्थात् जलाशय, उद्यान इत्यादि लोकोपयोगी रचनाओं का निर्माण करना, दत्त माने सुपात्र को दान देना। ऐसे जीव मरणोत्तर पितृयाण (धूमादि) मार्ग से चन्द्रमा में पहुँचते हैं। वहाँ जलमय शरीर से उत्तम भोगों का उपभोग कर के सुखानुभव करते हैं। (– शरीरं च तेषां सुखापभोगयोग्यं चन्द्रमण्डले आप्यम् (जलीय) आरभ्यते। – शांकरभाष्य, छान्दोग्य ५-१०-४)। ऐसे पुण्यशाली जीवों का पृथ्वी से चन्द्र तक पहुँचने का मार्ग इस प्रकार बताया है– धूम (धूम की अभिमानी देवता, सर्वत्र ऐसा समझना), कृष्णपक्ष, दक्षिणायन के छः मास, पितृलोक, आकाश, चन्द्रमां। ऐसे जीवों के पुण्य, उपभोग से क्षीण हो जाते हैं, तब वे पृथ्वी पर वापस लौटते हैं। उनका वापस लौटने का

मार्ग इस प्रकार है– चन्द्रमा, आकाश, अभ्र (पानी भरा बादल), मेघ-(मेहन या वृष्टि करनेवाला बादल), धान्य, जौ, वनस्पति इत्यादि, वीर्यसिंचन-योग्य पुरुष, पुनर्जन्म पृथ्वी पर आने के बाद, पर्वत, नदियाँ, समुद्र, जलचर, धान्य के पौधे, वीर्यसिंचन के अयोग्य बालक, स्त्रियों के उदर में जाना – यह बड़ी कष्टमय यात्रा है । इसीलिए उपनिषद् ने "दुर्निष्प्रयतरम्" शब्द का प्रयोग किया है । (छान्दोग्य ५-१०-६) । इस चक्कर में से बाहर निकलना अत्यंत कठिन है । यह जानकर भोगों में वैराग्य आना चाहिए । चन्द्रलोक से पृथ्वी पर आ कर जन्म लेते समय, यदि अच्छे कर्म (रमणीयचरणाः) फलोन्मुख हुए हैं, तब वह जीव ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य की योनि में जन्म लेता है । यदि बुरे कर्म (कपूयचरणाः) फलोन्मुख होते हैं तब कुत्ता या सूकर या चाण्डाल की योनि में वह जीव जन्म लेता हैं (रमणीयचरणाः ... रमणीयां योनिम् आपद्येरन् ब्राह्मणयोनिं वा क्षत्रिययोनिं वा वैश्ययोनिं वा । ....कपूयचरणाः कपूयां योनिम् आपद्येरन् श्वयोनिं वा सूकरयोनिं वा चाण्डाल योनिं वा । –छान्दोग्य ५-१०-९) ।

चौथे प्रकार के जीव, वेदविहित पुण्य कर्मों में भी विशेषतः अग्निहोत्र की उपासना करते हैं । ऐसे जीव अग्नि की उपासना के बल से, पूर्व, पाँच अग्निओं में से गुजरते हैं – द्युलोकरूप अग्नि, पर्ज॰ अग्नि, पृथ्वी-अग्नि, पुरुष-रूप-अग्नि एवं स्त्रीरूप अग्नि । देवगण, इन अग्नियों में क्रमशः श्रद्धा (जल), सोम, वृष्टि, अन्न एवं रेतस (वीर्य) की आहुतियाँ देते है । प्रथम आहुति का जल, पाँचवीं आहुति में मनुष्य-गर्भ का स्वरूप लेता है । ऐसा जन्म होने के बाद ऐसा शरीर प्राप्त होता है जिससे यह जीव देवयान मार्ग से क्रममुक्ति का अधिकारी बन जाता है – (अग्नि होत्र-अपूर्व-विपरिणाम-लक्षणं पञ्चधा प्रविभज्य अग्नित्वेन उपासनम् उत्तरमार्गप्रतिपत्तिसाधनम्.. । –शांकरभाष्य, पूर्वभूमिका छान्दोग्य ५-४-१)।

पाँचवे प्रकार के जीव अरण्य में रह कर तप एवं श्रद्धा के साथ परमात्मा की उपासना करते हैं । संन्यास ग्रहण करके आत्मज्ञान पाने की साधना वे करते हैं । ऐसे ज्ञानी जीव देवयान (अर्चिरादि) मार्ग से ब्रह्मलोक में पहुँचते हैं । मृत्यु के बाद, पृथ्वी से ब्रह्मलोक तक का मार्ग इस प्रकार है – अर्चि (ज्योति, ज्योति की अभिमानी देवता, सर्वत्र अभिमानी देवता समझना), दिवस, शुक्लपक्ष, उत्तरायण के छः मास, संवत्सर, आदित्यलोक, चन्द्रलोक, विद्युत्-लोक, यहाँ कोई अमानव शक्ति आ कर, इन जीवों को ब्रह्मलोक में ले जाती है । वहाँ से वे, ब्रह्म के साथ एकरूप हो जाते हैं, क्रममुक्ति प्राप्त करते हैं । ऐसे जीव पृथ्वी पर वापस कभी नहीं लौटते हैं । (अनावृत्तिः शब्दात् अनावृत्तिः शब्दात् ॥ –ब्रह्मसूत्र ४-४-२२) ।

ज्ञानी जीव दक्षिणायन काल में (जून २२ से जनवरी १३ तक का काल) यदि शरीर छोड़ता है, फिर भी वह देवयान मार्ग से क्रममुक्ति ही प्राप्त करेगा । महाभारत में, भीष्म पितामह ने उत्तरायण-समय की प्रतीक्षा की थी ऐसा प्रसंग आता है । यह प्रसंग, पिता के वरदान से प्राप्त स्वेच्छामृत्यु-शक्ति को निर्दिष्ट करने के लिए है । (दक्षिणायनेऽपि म्रियमाणः विद्वान् प्राप्नोति एव विद्याफलम् । ..... भीष्मस्य प्रतिपालनम् आचार प्रतिपालनार्थं पितृप्रसादलब्धस्वच्छन्द मृत्युताख्यापनार्थं

च । – शांकरभाष्य, ब्रह्मसूत्र ४-२-२०) । विशेषतः योगियों के लिए उत्तरायण, दिवस इत्यादि समय का सन्दर्भ है, ज्ञानियों के लिए नहीं –"योगिनः प्रति च स्मर्यते......"।। ब्रह्मसूत्र ४-२-२१) ।

अन्तिम छठे प्रकार के जीव जीते-जीते मुक्ति का –जीवन्मुक्ति का अनुभव करते हैं । इसी शरीर में आत्म-स्वरूप की अनुभूति जिसको हो गई, वह, प्रारब्ध से प्राप्त शरीर जब तक चलेगा तब तक, जीवन्मुक्त दशा में जीवित रहेगा । पृथ्वी के बड़े-बड़े संतपुरुष इस कोटि के हैं । ऐसे महापुरुष असंख्य लोगों को परमात्म के आनंद का मार्ग बताते हैं । ऐसे महापुरुष शरीर में रहते हुए भी अशरीरी हैं, क्यों कि उन्हें "यह देह मैं हूँ" ऐसा अभिमान नहीं होता । उन्हें प्रिय-अप्रिय का संपर्क नहीं होता – (अशरीरं पाप सन्तं न प्रियाप्रिये स्पृशतः । –छान्दोग्य ९-१२-१) जब तक मिथ्याज्ञान रहता है तब तक देहाभिमान या देहाध्यास चलता रहता है । मिथ्याज्ञान नष्ट होने से देहाध्यास लूटना है । जब देहाध्यास नष्ट होता है तब शरीर में रहते हुए भी जीव, जीवन्मुक्ति का आनंद भोगना है । ऐसे जीवों का शरीर जब छूटता है तब, उनके प्राण उत्क्रमण नहीं करते– बाहर नहीं जाते । यहीं प्राणादि तत्त्व ब्रह्म में लीन हो जाता हैं । इनकी कोई गति नहीं होती । अकामयमानो ... न तस्य प्राणा उत्क्रामन्ति, ब्रह्मैव सन् ब्रह्म अप्येति । –बृहदारण्यक ४-४-६, ब्रह्मसूत्र ४-२-१२-१३ । अत्र ब्रह्म समश्नुते । बृहदारण्यक ४-४-९ । यह सद्योमुक्ति है (सद्यः तत्काल) ।

मनुष्य शरीर से, यदि संकल्प करे तो, अपने पुरुषार्थ से ब्रह्मानंद प्राप्त कर सकता है । क्षुद्र जंतु बनना, यमलोक के योग्य होना, पितृयान मार्ग के लिए अधिकारी बनना, देवयान मार्ग से क्रममुक्ति पाना अथवा जीवन्मुक्त हो कर पृथ्वी पर विचरण करना –ये सभी दशाएँ मनुष्य के हाथ में हैं । क्षणभंगुर होते हुए भी मनुष्य देह दुर्लभ है –दुर्लभो मानुषो देहो देहिनां क्षणभंगुरः । श्रीमद्भागवत् ११-२-२९ । इसी लिए एक उस आत्मा को ही जान लो, दूसरी सब बातें छोड़ो । –तमेव एकम् जानथ आत्मानम्, अन्यावाचो विमुञ्चथ । –मुण्डक २-२५ ।

●

संत-गाथा

—परिव्राजक

महाराष्ट्र के श्री गोंदे ग्राम में रसपूर्ण हरि कीर्तन चल रहा था ।

"ॐ नमो जी अव्यक्तरामा
परातूपर मेघश्यामा ।
बुद्ध्यादिका न कले महिमा अविनाशा ।।

'शेख मुहम्मद'

मृदंग, करताल, झाँझ की आवाज से रात भक्तिमय बन गयी थी । अचानक व्यासपीठ पर से कूद कर शेख कुएँ के पास जाकर बाल्टी से पानी निकाल कर बाहर फेंकने लगा । सब भक्त मण्डल आश्चर्य से यह दृश्य देखने लगे, और बाद में सभी भक्त कुएँ से पानी निकालकर बाहर फेंकने लगे । कुछ समय बाद शेख पसीने से तर होकर मंच पर आये । उनकी काली दाढ़ी से पानी टपक रहा था । शेख ने कहा, "देहू गाँव में संत तुकाराम कीर्तन में अपनी भजन मण्डली के साथ इतना तल्लीन हो गया था । तम्बू में आग लगी इसका किसी को भी ख्याल नहीं था । इसलिये हमको पानी निकालकर आग बुझानी पड़ी ।

भक्त मंडल को आश्चर्य हुआ इतनी दूर से शेख ने आग कैसे देखी और कैसे बुझाई ! शेख ने कहा, 'आप लोगों को शंका हो तो देहू आदमी भेजकर खबर लें । ऊँट पर आदमी बैठाकर खबर लेने भेज दिया । वह आदमी खबर लाया – रात में कीर्तन के समय तम्बू में आग लगी थी, तम्बू का एक भाग जल भी गया था । पर आग वहीं बुझ गयी थी । नीचे सब पानी भर गया था । लोगों को विश्वास हो गया, सब संत चरण पर नतमस्तक हो गये । ये थे सन्त मोहम्मद साहब, महाराष्ट्र के संत समाज के लिये उनकी अपार श्रद्धा थी ।

संत मणिमाला में उनके जीवन चरित्र के बारे में लिखा है । जिसने कीर्ति के महासागर में अपने को पर्वत जैसा अविचल रखा है, ऐसे शेख मोहम्मद साहब मुसलमान होने से भी भगवद्भक्तों की पंक्ति में उनका ऊँचा स्थान माना जाता है ।

अहमद नगर के श्री गोंदे जिले के रूई बाईद नामक गाँव उनका जन्मस्थान था । उनके पूर्वज मूलागिरि करते थे । इसलिये आपने भी मूलागिरि सीखी । एक बार पिता ने बकरे की कुर्बानी करने को कहा । बकरे का भयभीत चेहरा देख कर उनको दया आयी, और उन्होंने अपनी अँगुली काट डाली, उस असह्य वेदना से मन में विचार करने लगे अपनी एक छोटी अँगुली के काटने से इतना दर्द हुआ तो एक प्राणी का गर्दन काटने से कितना दर्द हो सकता है । उसी दिन से आँसू भरी आँखों से छुरी फेंक दी तथा सदा के लिए हिंसक वृत्ति छोड़ दी । आज भी उनकी प्रति क्रिया पालन करते हुये लोग देखे जाते हैं ।

इसके बाद उन्होंने मूलागिरि छोड़ दिया तथा वैष्णव धर्म स्वीकार किया । मुसलमान होने के नाते उन्होंने हिन्दूओं से दीक्षा तो नहीं लिया परन्तु वैष्णव मार्ग का अनुसरण करते रहे । प्रसिद्ध संत तुकाराम जी, जयराम स्वामी के साथ शेख मोहम्मद साहब का प्रेम था उनका परस्पर मिलना भी होता था । एक बार जयराम स्वामी उनके यहाँ आये थे । उस समय एकान्त में तीन दिन भागवत् चर्चा हुई थी । शेख साहब ने चीर कर दिखाया कि भीतर में जनेउ और सिर पर शिवलिंग था । जयराम स्वामी जी को निश्चय हो गया कि उनका एक निष्ठ ब्रह्मण का शरीर है । जयराम स्वामी ने जब श्री गोंदे छोड़ा तब शेख ने कहा मैं तुम्हारी समाधि के समय हाजिर रहूँगा । जयराम स्वामी जी का जब अन्त समय आया उन्होंने सभी लोगों को यह जाहिर कर दिया कि अब वह समाधि लेने वाले हैं । लोगों की भीड़ जम गयी ! जयराम स्वामी की दृष्टि चारों ओर किसी को खोज रही थी । बड़ी भीड़ में एक कोलाहल हो गया कि यह यवन यहाँ कहाँ से आ गया । किन्तु जयराम स्वामी ने भाग कर शेख को प्रणाम किया । और कहा कि अब मैं निश्चिन्त रूप से समाधि लूँगा ।

शेख साहब एकेश्वर वादी थे । निर्गुण उपासक होने पर भी मूर्ति पूजा का सम्मान करते थे और श्री विट्ठल जी के दर्शन के लिये पंढर पुर जाते थे । उन्होंने लिखा है, "धन्य है पंढर पुर जहाँ पाण्डुरंग का निवास है । चित्त को स्थिर करके चलो पंढर पुर और विठ्ठल जी का दर्शन करें ।"

शेख साहब के तीन ग्रन्थ मौजुद है । योग संग्राम, निष्कलंक बोध, और पवन विजय । आज भी महाराष्ट्र में प्रेमभाव कण्ठ से उनके भजन लोग गाते हैं । आपने श्रद्धा का अक्षुण्ण स्थान प्राप्त किया है ।

(सौजन्य से –कल्याण)

●

आनन्दमयी स्मृति

—कु. चित्रा घोष

१५ अप्रैल, १९५३, स्थान-कलकत्ता, दमदम, श्री आपताप मित्र का बगीचा

प्रायः छः महीने के अन्तराल पर माँ आ रही हैं सुनकर मेरा मन नाच उठा । इसके पहले भी वैशाख की दूसरी तारीख को माताजी आयी थीं ।

हमलोग स्टेशन पर माँ की प्रतीक्षा कर रहे थे । पंजाब मेल से माँ आने वाली थीं । ट्रेन काफी लेट थी । साढ़े ग्यारह बज गये थे । इस बार माँ दमदम में ठहरने वाली थीं । आखिर प्रतीक्षा सार्थक हुई । ट्रेन आयी । गुरुप्रिया दीदी ने दरवाजा खोला, माँ का दर्शन हुआ । माँ की मधुर मुसकान ने सबका मन मोह लिया । माँ धीरे से गाड़ी से उतरीं आकर मोटर में बैठी सबने प्रणाम किया । माँ ने मेरे से पूछा, "ठीक हो ।"

थोड़ी देर में माँ की मोटर दमदम की ओर रवाना हुई । हमलोग भी दमदम गये । जाकर देखा कि हवाई अड्डे के पीछे आपताप मित्र का घर है । माँ लिखा हुआ लाल झंडा फहरा रहा है । माँ के लिये एक अलग मकान बनाया गया था । नीचे दो कमरे ऊपर ठाकुर घर एवं माँ का कमरा है ।

हम माँ के पास ऊपर गये । माँ पलंग पर बैठी थीं । सामने गलीचा बिछा था । माँ के पास एक दो लोग बैठे थे । हमलोग उनके पास जाकर बैठे । माँ ने कुछ नहीं कहा । थोड़ी देर बाद मित्र महोदय की गृहिणी माँ की चरणपूजा की सामग्री तथा सेवा की अन्यान्य सामग्री लेकर अन्दर आयीं । माँ चरण सामने नहीं निकाल रही हैं । भद्रमहिला की अभिलाषा है चरणों का पूजन हो । भक्त के पास प्रभु को हार माननी ही पड़ती है यह चिरन्तन परम्परा चली आ रही है । महिला भक्तिमती व सरलप्राणा हैं । उन्होंने माँ के चरणों को पकड़कर छाती से लगा लिया और कहा–मेरी बेटी आई है ।" इस प्रकार उन्होंने अपनी भावना के अनुसार माँ के श्री चरणों को पखारकर पोंछकर चन्दन एवं इत्र लगा दिया । तत्पश्चात् ललाट पर सिन्दूर की बिन्दी लगायीं । पाद्यार्घ की क्रिया समाप्त होने पर खिलाने की व्यवस्था है । आपने विभिन्न पकवान घर पर ही बनाया था । वही माँ को भोग लगाया । माँ ने स्वीकार किया ।

माँ हमलोगों से बातें कर रही थी । कलकत्ते में इस समय श्री मोहनानन्दमहाराज जी का यज्ञ चल रहा था । हमलोग वहाँ दर्शन करने गये थे । मेरी माताजी ने उक्त यज्ञ की चर्चा छेड़ी । माँ ने कहा, "वे तो यहाँ आये थे पर जाने की तो कोई बात नहीं हुई ।" कुछ देर बैठ कर हमलोग चले आये ।

उसदिन शाम को दमदम जाने की कोई व्यवस्था नहीं थी । मुझे माँ के दर्शनों की बेचैनी थी । इतने में किसी परिचित की गाड़ी में माँ के पास जाने का अवसर मिल गया ।

माँ के पास जाकर देखा वहाँ सत्संग चल रहा था । आज सारी बातें याद नहीं हैं । पर कुछ कुछ आज भी याद हैं जो इस प्रकार है ।

"रोज रात को सोते समय भगवान को कहना–भगवान् मेरे सारे दिन का काम तुम्हारे चरणों में अर्पण किया, मेरे मैं पन को भी तुम्हारे चरणों में दिया–कौन जानता है किस दिन पूर्णाहुति हो जाय ।"

साधन अर्थात् स्वधन-ठाकुर आपको ही मैं मना रही हूँ । आप मुझे अपना कर लो । cupboard में जैसे सामान रखने से नष्ट नहीं होता उसी प्रकार भगवान् ही प्रत्येक वस्तु की रक्षा करते हैं । जैसे संतरे के छिलके के भीतर संतरा रहता है । कौन करेगा ?

थोड़ी देर बाद मौन का समय (८-४५) हुआ । माँ के पास एकान्त में खुले में बैठकर अपना जप करने का सुअवसर कभी भी नहीं हुआ था । माँ तो अँधेरे में निश्चल होकर बैठी थीं । माँ के दर्शन की लालसा से आँखें खोलकर ही बैठी थी । माँ के सामने उन्मीलन ही मुक्ति । अँधेरे में मस्तक पर जूड़ा बाँधे हुये माँ महादेव प्रतीत हो रही थीं । कभी-कभी स्वामी विवेकानन्द का प्रतिरूप । बत्ती जलने के बाद जब माँ ने आँखें खोलीं । लग रहा था मानो किस दुनिया से आयी हैं ।

साढ़े नौ बजे के बाद पंडाल से चली गयीं ।

१६ अप्रैल, १९५३

प्रातः उठकर रेणु मौसी के साथ मैं दमदम गयी । जाकर देखा तालाब के ऊपर घाटों की सीढ़ी के खम्भों पर माँ बैठी हैं । हमलोगों ने जाकर प्रणाम किया । मैं उसदिन कैमेरा लेकर ही गयी थी । माँ को बिना बताये ही माँ के कुछ चित्र खींचे । माँ की वह अपलक दृष्टि, खुली मुसकान, और बीच-बीच में बातें सुनना अच्छा लग रहा था । राहुल चटर्जी ने अचानक पूछा, "माँ तुम्हें तालाब में नहाने की इच्छा नहीं होती है ? माँ–"ख्याल होने से ही करूँगी । इस बार वाराणसी में संक्रान्ति के दिन अवगाहन किया था । १०० वर्ष के भीतर ऐसा योगायोग (संक्रान्ति का दिन) और नहीं होगा ।"

माँ आकर पण्डाल में बैठीं । लड़कियों ने गीता पाठ किया । उसके बाद अभय ब्रह्मचारी ने गाना प्रारम्भ किया । गाना गाते गाते अचानक माँ "राम नारायण, राम नारायण" इन पदों को गाने लगीं । वह कैसा अपूर्व मिठास युक्त कण्ठस्वर था कैसे कहूँ । घुमा फिराकर उन्हीं पदों को गा रही थीं । कांफी देर तक माँ गाती रहीं । महाराज (मोहनानन्दजी) कलकत्ते में "राम नारायण" कर रहे हैं, और माँ दमदम में । कैसा अभावनीय योगायोग ।

माँ का यह राम नारायण सुनकर नलिनी ब्रह्म महाशय ने कहा–माँ आपने तो रामनारायण कीर्तन किया । हम सबका भूत छुड़ा दीजिये ना ।" माँ–"पिताजी ख्याल होने से सबको लेकर चली जाऊँगी ।"

घर की गृहिणी पेड़ से केले का गोंद ले आयीं । माँ ने उपस्थित सभी को अपने हाथों से केला दिया । ठीक साढ़े ग्यारह बजे भीतर जाने के लिये माँ उठीं । उसी समय दो तीन जन आये । माँ ने कहा, "शायद तुमलोगों के लिये मेरा अन्दर जाना नहीं हो रहा था ।"

माँ इसबार भोग के लिये बैठीं । अचानक झाँककर देखा कि माँ का हाथ बेला के फूलों की माला से बँधा हुआ है । माँ खाना नहीं चाह रही थीं इसीलिये फूलों की लड़ी से हाथ बाँधा गया है ।

माँ छोटी लड़की की तरह कह रही हैं–"ठाकुर मेरे हाथ खोल दो । दयामय मुझे खोल दो, यह कहकर हँस रही हैं । थोड़ी देर बाद बरामदे में आकर बैठीं । मैंने माँ की गोद में सिर रखकर प्रणाम किया । सिर उठाते समय माँ की कनिष्ठा अँगुली का स्पर्श मेरे मस्तक से हुआ । मानो मुझे बिजली का करन्ट लग गया हो ।

गुरुवार रात को मैं अपने चाचा-चाची, भाई एवं माता-पिता को लेकर माँ के पास गयी । हमारे प्रणाम करते ही माँ ने एक जूही की माला मेरे पिताजी को पहना दी ।

उसदिन काफी भीड़ थी । मैं माँ के सामने न बैठकर पास में खड़े होकर माँ को पंखा झल रही थी । किसी भक्त महिला ने आकर माँ के जूड़े में बेला की सुगन्धित माला लपेट दी ।

अनिल गांगुली द्वारा माँ को यात्रा विवरण सुनाये जाने पर माँ ने दक्षिण भारत की यात्रा का प्रसंग सुनाया ।

सबने पाण्डिचेरी का प्रसंग सुनाने का आग्रह किया । माँ ने कहा, "हरिबाबा के साथ छोटी लड़की पाण्डिचेरी पहुँची । मदर के पास खबर भेजने पर मदर ने कहला भेजा कि अलग से मिलेंगी । इस शरीर का तो कोई प्राईवेट नहीं है इसीलिये इस छोटी बच्ची ने हरिबाबा जी को खबर भेजी–पिताजी जैसा कहेंगे वैसा ही होगा । मदर के पास जाने पर पहले अरविन्द बाबा के कमरे के सामने ही मदर से भेंट हुई । मदर छोटी बच्ची की तरफ देखती ही रहीं । इस छोटी बच्ची ने भी मदर को देखा ।" किसी ने प्रश्न किया–"माँ कितनी देर तक आपलोग एक दूसरे को देखते रहे ?" अभय ब्रह्मचारी ने कहा–पैंतालिस मिनट तक । माँ ने कहा, "उसके बाद मदर ने इस शरीर को चॉकलेट ना क्या तुमलोग कहते हो, वही दो दिया । इस छोटी बच्ची ने एक मदर को दिया । अब अरविन्द बाबा की समाधि के चारों ओर कमल की पँखुड़ियाँ बिखेरी गयीं । मदर ने इस शरीर को "Eternal youth" ऐसा कुछ कहा ।

चिदम्बरम् में सूक्ष्मशरीरी के साथ मिलन प्रसंग सुनाते सुनाते मौन की घन्टी बज गयी । माँ मौन के बाद उठ गयीं । मैंने माँ से कहा, "मैं तो कल सुबह आ नहीं सकूँगी । परीक्षा लेने जाना पड़ेगा ।" माँ ने कहा, "पढ़ा रही हो, सेवा कर रही हो ।"

माँ बरामदे में जाकर टहलने लगीं । माँ के बाल पीठ पर लहरा रहे थे । थोड़ी देर के लिये भीतर जाकर पुनः बाहर आकर वेदी पर लेट गयीं । सफेद चादर ओढ़ कर लेटी रहीं । दूर कोई गा रहा था । मैंने पहले भी लक्ष्य किया था माँ जब टहलती हैं तब लगता है सूक्ष्म देह से चल रही हैं, जब लेटी हैं तो एक विराटत्व का आभास होता है । गाना सुनते-सुनते अचानक माँ बोल उठीं– "माणिक पिताजी को खबर देना । पिताजी बहुत सुन्दर गाते हैं ।"

हमलोग थोड़ी देर में उठ आये ।

(क्रमशः)

●

श्री राधेजू विहरति हरिरिह सरस वसन्ते

–प्रेमानन्द गिरि

[यमुना तट-केशी घाट-नौका लीला, द्वारा– स्वामी फतेहकृष्ण रासमंडली, अष्ट दिवसीय नौका लीला में श्री ठाकुर श्याम सुन्दर और श्री राधारानी के दिव्य समाज की श्री यमुना जल के ऊपर मंच बना कर निम्नलीलाओं का दिव्याति दिव्य प्रस्तुती करण हुआ था । लीला दिनांक ३-२-२000 से प्रारम्भ होकर १0-२-२000 वसन्त पञ्चमी पर्यन्त सम्पन्न हुई ।]

प्रथम दिवस लीला प्रसंग–

दिव्याति दिव्य वातावरण में "जय जय देव हरे.........." गान के साथ आरती सम्पन्न हुई जिसमें "चना चोर लीला" मधुरातिमधुर शैली में सम्पन्न हुई ।

रास लीला की पद्धति के अनुसार प्रथम रास का मंचन हुआ । युगल सरकार विराजमान हैं और संगीत के साथ सखियाँ गा रही हैं ।

"तिलक राज त्रिभुवन को, धनि धनि वृन्दावन सुखदायी
तरु तरु लता लगति अति प्यारी
मणिमय भूमि सबन ते न्यारी,
दर्शन करते मगन नर नारी
सरस सरस यमुना की धारा
सुर मुनि रहे लुभाय.....
सद्य नवनीत काढ़ लै मैया
प्रात समय मथि लावै मैया
वन फल को रस लेत है भैया
श्री गोवर्द्धन देव हमारो, जय जय गिरिवर राज
सुख प्रेमी गोप गोपिन को
दर्शन करत पाप जाय मन को
अटपटे बोल सुनावत जन को
कहा कहूँ बैकुण्ठ हूँ ते, यह सुख तजौ न जाय

[रास के उपरान्त लीला । मंचन प्रारम्भ होता है]

लीला–

ठाकुरजी सब ग्वाल बालों के साथ बरसाने जाकर चने के खेत में घुस कर चना चोरी का कार्यक्रम बनाते हैं ।

चना चोरी के समय एक बरसाने की गोपी लठिया लेकर ग्वाल बालों को ठाकुर जी सहित फटकारती है । भागते समय ठाकुर जी का पटुका गिर पड़ता है और ठाकुर ग्वाल बालों सहित नौ दो ग्यारह हो जाते हैं ।

उस पटुका को लेकर बरसाने की गोपी वृषभानु राजा के दरबार में लाला की शिकायत करती है । वृषभानु राजा लाला का पटुका लेकर पुलकित हो जाते हैं, गोपी को आश्वासन देकर सारा हर्जाना देने का वायदा करते हैं । इस पर गोपी लज्जित होकर कहती है– "राजा जू! मैं हर्जाना लेवे नाय आई– मैं तो लाला का पटुका दैवे आई हूँ" पटुका के पावन स्पर्श से श्री वृषभानुजी को राधा की स्मृति होती है । वे सहज ही पटुका को किशोरी जू को सौंपते हैं । पटुका के पावन स्पर्श से श्री किशोरी जी में कृष्ण भाव उमड़ आता है । अतः वे अकेली ही ठाकुर को पटुका देने चल पड़ती हैं ।

सन्ध्या हो चुकी है– ठाकुर ग्वाल बालों सहित गउऐं घेरने को चलते हैं ।

लीला की विशेषता यह है कि यमुना के पल्ली पार लाला वंशी वादन क्रते हैं । वंशीवादन सुनते ही गायें और बछड़े रँभा कर दौड़ आते हैं । संगीत चलता है–

"कदम्ब चढ़ि कान्ह बुलावत गैयाँ ।
गायन में गोविन्द को बासिवौ ही भावे
आगे गाय, पीछे गाय ।
इतहू गाय, उतहूँ गाय ।

अब लीला का रूप और परिष्कृत होता है, जब संगीत के स्वर गाते हैं– "आवत हैं हरि धेनु लिए"

ग्वाल बाल गाते हैं– "श्री वृन्दावनधाम रंगीलो, रस को समुद्र या में डूबे जहाज प्रेम को ।"

इतने में "किशोरी-किशोर" मिलन होता है । किशोरी लाला को पटुका देती है । सन्ध्या होने के कारण ठाकुर उन्हें महलन में जाने का संकेत करते हैं । परन्तु प्रिया जू विरह से व्याकुल हो जाती है । तब ठाकुर जी सिद्धान्त का पद गाते हैं –

"फल प्यारी यह देह धरे को, लोक लाज कुल कान मानिए ।
डर मानो सब बड़े जननि को, तुमही जाओ हमहि जायें ।"

इस प्रकार परस्पर आलिंगन कर लीला सिद्ध होती है । द्वितीय दिवसीय लीला– "श्यामा-श्याम मिलन"

सर्वप्रथम प्रियाप्रियतम के दिव्य आरती के दर्शन होते हैं । "जय जय देव हरे........

श्रित कमलाकुच मंडल, धृत कुण्डल हे ।
कलित ललित वन माल, जय जय देव हरे ।
दोहा– कनक बेली सी राधिका, सुन्दर श्याम तमाल ।
दोऊ मिलि एक बरन भएँ, श्री राधावल्लभ लाल ॥

कीर्तन– राधा मेरी चन्दा, चकोर हैं बिहारी ।
श्याम मेरो चन्दा, चकोर राधा प्यारी ॥

रास में ठाकुर श्याम सुन्दर का नृत्य आरम्भ हो जाता है । सखियाँ बलि-बलि जाती है – बलिहार-बलिहार की गूँज से यमुना जल तरंगित हो जाता है ।

अब लीला आरम्भ होती है ।

यह रासलीला का द्वितीय चरण है ।

नितान्त अकेले श्यामसुन्दर किशोरी जी से मिलने की तड़प में विकल दृष्टि गोचर होते हैं । अत्यन्त अनमने भाव से गुनगुनाते हैं ।

"आज भोर से ही किशोरी जू के दर्शन नाय भए– का करूँ! चलूँ पूरनमासी पुरोहतानीजी के पास, उनसे किशोरी जू से मिलने को उपाय पूछूँ ।

पुरोहतानीजी पधारती हैं लाला को आशीर्वाद देती हुई– "तेरी मनोकामना पूर्ण हो" लाला आशीर्वाद से प्रसन्न हो जाते हैं । राधा दर्शन के अभाव में अपनी व्यथा प्रकट करते हैं– कहते हैं– "आज सपने में श्री राधे जू के दर्शन भए– अब प्रत्यक्ष दर्शन कैसे करूँ?"

पूरनमासी जी उपाय बताती हैं "आज किशोरीजू के महलन में देवी पूजन हेतु मोय बुलावा आवेगो, तो मैं गोपी के संग तोय अपने बेटा को बहू बनाय के भेज दूँगी, चूँकि जाड़े के मारे मेरो शरीर ठीक नाय और अब मैं बूढ़ी भी है गयी हूँ– लाला तू चिन्ता मत कर– तोय नई बहू बनाय के भेजूँगी ।

बस, कन्हैया बहू बनने को राजी हो जाते हैं । अब किशोरी जू का दरबार उपस्थित होता है । जिसमें श्री राधा गोपी को पुरोहतानी जू को बुलायबे को आदेश द्रेती है ।

ललिता गोपी तुरन्त आज्ञा लेकर पुरोहतानी पूरनमासी जू के पास जाती है ।

पूर्व योजनानुसार पुरोहतानी बहू रूप में प्रस्तुत श्याम सुन्दर को गोपी के साथ इस अनुरोध से भेजती हैं कि या नई नवेली बहू को तुम संग रखियो । यह नई नवेली गैल नायँ जाने ।

बधु रूप में श्याम सुन्दर किशोरी जी के दरबार में पहुँच कर प्रसन्न हो जाते हैं । सभी सखियाँ उनके पाँव पड़ती हैं । किशोरी बहू से उसका परिचय पूँछती हैं– "वह अपना नाम "सिद्धिदा" बताती है, और उज्जैन बासी बन शास्त्रों का ज्ञान प्रदर्शित करती है. ।

किशोरी कौतुहल वश अपने मन की बात पूछती हैं क्योंकि उसे दूसरे के मन की बात जाने की विद्या ज्ञात है । सिद्धिदा बड़े प्रेम से कहती है कि आप कूँ अपने प्रियतम दर्शन की लालसा है ।

सिद्धिदा प्रियतम दर्शन के लिए तैयार हो जाती हैं, एक शर्त्त के साथ । यदि प्रियतम श्यामसुन्दर को दर्शन तोय होयगो तो मैं नाय रहूँगी ।

राधा रानी हठ करती हैं कि तुम दोनों ही रहो । वधू कहती है एक ही रहेगो । इतने में श्याम की बंसी दिखाई दे जाती है । सखियाँ हँसकर गाने लगती हैं –

जय जय श्यामा जय जय श्याम, जय जय श्री वृन्दावन धाम ।

यहीं लीला संसिद्ध होती है । जय श्री राधे ।

तृतीय दिवस - नौका बिहार लीला ।

प्रिया प्रियतम मंच पर आसीन दृष्टिगोचर होते हैं । सखियाँ आरती सजा कर गाती हैं –

"श्रित कमलाकुच मंडल है,
धृत कुंडल है, कलित ललित वन माल
जय जय देव हरे ।

आज हैं अभिनव मदन महोत्सव" (ललित किशोरी लाल के पदन पर आश्रित)

रास– यमुना तट दोऊ खेले बसन्त !
व्रज कुंजन की, रस कुंजन की
निकुंजन की जय जय ।
यमुना तट की, बंसी वट की,
व्रज गोपिन की, व्रज रज की जय जय ।

गान– अहो मेरे लाड़ले, आवो मेरे प्रियतम
आवो प्रीतम प्यारे –
अजी मेरे नन्द दुलारे–
चलो चले कुंजन में ....

सखियाँ राजा रानी की जय जयकार करती हैं, और भाव विभोर हो गाती हैं ।

किशोरी तेरे चरनन की रज पाऊँ
परी रहूँ कुंजन के कोने, श्याम राधिका गाऊँ ।
जो रज शिव सनकादि दुर्लभ, सो रज शीश चढ़ाऊँ ।
अलि किशोरी की छबि निरखें, विमल जस गाऊँ ।
किशोरी मोहे चरनन की रज दीजै -
विनती युगल किशोर किशोरी
अपनो मोहे कर लीजो -

अब सब सखियन के मन में लालजी के दर्शन की उत्कंठा है । वे राधे जू की आज्ञा से मोंठ गाँव में दही दूध बेचने जाती हैं ।

गान– चलो सखी वहाँ जाइए, जहाँ मिले व्रज राज ।
गोरस बेचत हरि मिले, एक पंथ दो काज ।

किशोरी जी की आज्ञा से जय जय कार कर सखियाँ दही दूध बेचने निकलती हैं । पर दही दूध नहीं बिकता । वे किशोरी जी से ही प्रार्थना करती हैं, श्री जी की प्रेरणा से श्याम सुन्दर एक सजी हुई नौका लेकर, प्रकट होते हैं और गाते हैं–

जय जय नौका हमार, नैया में हम, हमारी पतवार
व्रज के माखन से प्यार ।

मल्लाह को देख गोपियाँ बुलाती हैं । "ओ मल्लाह के ! हमें या पार तें वा पार उतार दें ।" ठाकुर जी प्रार्थना अस्वीकार कर देते हैं, क्योंकि मेरी नाव तुम्हारे भार से डूब जायगी । सखियाँ बार बार बिनती करती हैं –"आजा आ जा ! हम तोय प्रेम सरोवर में नहवाय गोरो कर देगी–" ठाकुर पूछते हैं–"उतराई का देगी ? सखियाँ कहती हैं–"उतराई श्यामा जू देंगी ।" इस पर ठाकुर नाव ले आते हैं ।

सखियाँ पूछती हैं – मल्लाह के ! तेरो नाम गाँव का है ।

ठाकुर कहते हैं–यह जमुना ही हमारे ठाँव है –गाँव है – मेरो नाम रसिका है । मेरी उतराई श्री राधा की चरण धुलाई है ।" श्यामसुन्दर जी श्री किशोरी जू के चरण धोते हैं । सखियाँ गाती हैं–

धनि धनि राधिका के
श्याम जू ...... चरण ।
जे चरन ध्रुव अटल कीन्हें
इन्द्र पदवी धरन ....
जे चरन प्रह्लाद परसे
खम्भ से अवतरन
दासी मीरा लाल गिरिधर
तरन तारन तरन .....

एक एक सखि को श्याम पार उतारते हैं ।

आरती के साथ समापन ।

●

रूप माधुरी

—श्री अशोक गणेश कुलकर्णी

श्रीमद्भागवत के दूसरे स्कन्ध के प्रथम अध्याय में भगवान् श्री शुकाचार्य जी कहते हैं–

"इदं भागवतं नाम पुराणं ब्रह्म संमितम् ।
अधीतवान द्वापरादौ पितुर्द्वैपायनादहम् ॥
परिनिष्ठितोऽपि नैर्गुण्य उत्तम श्लोक लीलया ।
गृहीत चेतसा राजर्षे आख्यानं यदधीतवान् ॥"

(श्रीमद्भागवत २-१)

"स्वयं भगवान द्वारा प्रमाणित "भागवत" नामक इस पुराण का कलियुग में (द्वापरः आदौ यस्य) मेरे पिताजी व्यास जी द्वारा मैंने अध्ययन किया ।

भगवान के निर्गुण रूप में ही मेरी सदैव निष्ठा थी उसी में मैं नित्य मग्न था । तथापि भगवद् लीला ने मेरा चित्त अपनी ओर खींच लिया और (विवश होकर) इस "कथा" का अध्ययन मैंने किया ।"

यह विवशता-अपरिहार्यता उत्पन्न होने की वजह कथा परम्परा में बतायी जाती है । व्यास जी के शिष्य उच्चरव में श्रीमद्भागवत् के श्लोकों का उच्चारण करते हुए श्री शुकदेव जी को ढूँढ़ते हुए घूम रहे थे । एक में उनकी रूपमाधुरी और एक में लीला माधुरी भरी हुई थी । उनमें से एक श्लोक था–

"बर्हापीडं नटवर वपुः कर्णयोः कर्णिकारं
विभ्रद्वासः कनककपिशं वैजयंती मालाम् ।
रन्ध्रान् वेणोरधर सुधया पूरयन् गोपवृन्दै
वृन्दारण्यं स्वपद रमणं प्रविशत् गीत कीर्तिः, ॥

(श्रीमद् भाग- १०-२१-५)

इसका सरलार्थ इस प्रकार है- अभिनय कुशल (नटवर) जैसा शरीर पर वेष धारण करके -मयूर पिच्छों का (गुच्छ) मुकुट (सिरपर) कानों में कनेर का फूल है । गले में वैजयन्ती पंचरंगी माला है, बाँसुरी के छिद्रों द्वारा अपनी अधर सुधा प्रवाहित कर रहे हैं । किंचिद् आरक्त वर्णयुक्त सुनहरा पीतवस्त्र जगमगा रहा है उनका गुणगान् करते करते उनको घेरा - (ऐसे भगवान्) अपने पद चिन्हों से रमणीय बने वृन्दावन में प्रवेश करते हैं ।

लेकिन इस लीला नाटकी का अंतरंग मधु इस श्लोक के पद-पद में निर्झरित होता है ।

(१) रत्नमंडित सुवर्ण मुकुट नहीं परंतु-

(I) बर्हापीडं– मयुरपिच्छों का मुकुट धारण किया है जो हिलते डुलते हैं, फहराते हैं। मानो जो चैतन्यमय नहीं है वह भी भक्त की साद (प्रेम) रूपी वायु से या स्वयं की अहैतुकी अनुकम्पा से अधीर हो उठते हैं।

(२) नटवर को घेर कर ग्वाल-बाल अपलक दृष्टि से रूपमाधुरी का पान करते रहते हैं। उन्हें मानो कह रहे हों तुम मेरी तरफ विशुद्ध प्रेम से देख रहे हो। तृप्त आँखों से देख रहे हो। मुझे केवल मात्र देख कर ही तुम्हारी तृप्ति तुम्हारे अंतरंग में नहीं समा रही है। पर तुम्हारी यह भाव-मुद्रा देखने के लिये मेरे दो नेत्र मुझे अधुरे लगते हैं। इसलिए इन (मोरपंखरूपी) सहस्र नेत्रों वाला मुकुट मैंने धारण किया है। बँसुरी नाद से तुम्हें लुभा कर हजारों नेत्रों वाला मुकुट मैंने धारण किया है। बाँसुरी नाद से तुम्हें लुभा कर हजारों नेत्रों से तुम्हारी तरफ देखता हूँ। फिर भी तृप्त नहीं अनुभव करता।

(३) ग्वाल बाल मेरी ओर देखते-देखते अपने अनजान में ही मुझे घेर कर नृत्य करते-करते वेजान हो जाते हैं। यहां तक कि शरीर की सुध बुध खो बैठते हैं, पसीने से तरबतर हो जाते हैं। मन करता है तुम्हें पंखा करूँ। लेकिन दोनों हाथ मुरली बजाने में व्यस्त रहते हैं। क्षण भर के लिये भी मुरली नीरव हो जाय तो तुम्हारी भाव-समाधि भंग हो जाय और मैं उस विशुद्ध प्रेम के दर्शन से वंचित हो जाऊँगा। इसलिये मैं इस मयुर पिच्छ मुकुट द्वारा बाँसुरी बजाने के बहाने सिर को दिशाओं में घुमा-घुमा कर तुम्हें पंखा झलता हूँ।

(४) सिर्फ इतना भी नहीं। जब तुम नृत्य से निवृत्त होकर मेरे अगल-बगल बैठते हो तब इसी के द्वारा तुम पर छाया करता हूँ।

(५) मेरी ह्लादिनी शक्ति राधिका-जो मुझसे भिन्न कभी भी नहीं रह सकती-अव्यक्त रूप से नित्य साथ-साथ रहती है-उसी की ओर त्रिभंगी मुद्रा के बहाने थोड़ा सा झुककर छाया करता हूँ।

(II) नटवर वपुः – (१) श्याम सुन्दर ने स्वयं को दूल्हे जैसा सजाया है। सभी वन्य पदार्थों से पत्र, पुष्प, रंगीन मिट्टी, मयुर पिच्छ आदि द्वारा सजकर सबको मानो पुकार रहा है। हे जीव, तुम्हें स्वीकार करने के लिये मैं 'वर' बनकर तैयार हूं। राह देखता हूँ। एक मात्र परम पुरुष जो हूँ। तुम अपना 'पुरुषत्व' छोड़कर कर्तृत्वाभिमान छोड़ कर मेरे पास आओ-गले मिलो।

(२) **नटनं-नृत्यं, बरं-श्रेष्ठं** तदर्थं वपुः। नृत्य करने में कन्हैया कुशल है - सर्वश्रेष्ठ है। उसका नृत्य भी अजीब है। वह दूल्हा बनकर राह देखते -देखते थक गया, ऊब गया। लेकिन जीव प्रत्येक चैतन्याभिन्न वृत्तियों का निषेध कर उसके पास आते नहीं इसलिये भी वह कहता है -तुम निषेध करना जानते नहीं। अपनी जगह से मुझे व्याकुलता से पुकारते रहते हो। आखिर मुझसे रहा नहीं जाता। मैं नृत्य करते-करते स्थिरता छोड़कर अखंडैकरसता त्याग कर चंचलबन कर नृत्य करते करते अपना स्थान छोड़कर तुम्हारे पास आता हूँ। तुम्हारी समझ में आने वाली वपु को

धारण करता हूँ । लेकिन यह शरीर सामान्य पांच भौतिक नहीं । "वं" अमृतं अपि पुष्णाति इति वपु । तुम्हारे अन्दर विद्यमान भावरूपी अमृत का पोषण करने वाला उसे ज्ञान में परिणत करने वाला है ।

कर्णयो कर्णिकारं–

कर्णयोः द्विवचन है और कर्णिकारं एक वचन है । इससे सूचित करते हैं नंद नंदन की त्रिभंगी मुद्रा । बाँसुरी बजाते बजाते जब वह दाहिनी ओर झुकता है तब बायें कान पर फूल रखता है, और जब बायीं ओर झुकता है तब दाहिने कान पर फूल रखता है ।

विभ्रद् वासः कनक कपिशं––

(१) पीली व्रजरज धारण करने से वस्त्र पीताम्बर जैसा शोभायमान हो रहा है ।

(२) पास खड़ी राधा रानी का कनक वर्ण और कपिश-आरक्त, अर्थात् अनुरक्त भाव भी वस्त्र पर प्रतिबिम्बित हो रहा है ।

वैजयन्ती च मालां –

पंचवर्णी फूलों की माला गले में पहनी है । लेकिन यह केवल हार नहीं, स्वयं लक्ष्मी जी अपने को छिपाकर उस माला में लीन हो जाती हैं –"मा लीना अस्याम्" इति माला । इसलिये इस सादे फूलों को भी अपूर्व शोभाप्राप्त हो जाती है ।

रंध्रान् वेणोः अधर सुधया पूरयन्–

जीव अज्ञ जड़ मूढ़ क्यों न हो, अगर वह भगवदाश्रित रहे और भगवान के स्वर के साथ स्वरित होने की क्षमता रखें, उसकी इच्छा से अपनी इच्छा का पृथक् अस्तित्व न रखें तो जिस प्रकार जड़ बांस की वेणु - अंदर से खोकली और छिद्रान्वित रहती है । उसे भगवान् अपनी अधर सुधा से परिपूर्ण करते हैं । उसी प्रकार अंदर से ज्ञान हीन, पातकान्वित जीव की सब त्रुटियाँ अधरः–जो धरातल पर कभी उपलब्ध नहीं हुआ था । जिसकी धारणा कोई भी नहीं कर सका, "नेति नेति" कहना पड़ा । वही अपने "स्वत्व" से "स्वरूप" रस से पूर्ण करता । आपको केवल मात्र 'उसी' का बनना चाहिये ।

गोपवृन्दैः गीत कीर्त्तिः–

गाः इंन्द्रियाणि लक्षणा से इन्द्रियवृत्तयः तैः पिबत्ति कृष्णरसं स गोपः । समस्त इन्द्रियवृत्तियाँ श्यामसुन्दर से जिसकी लगी वह गोपाः ऐसे गोपों के झुंड झुंड जिनकी महिमा गान करते हैं उनके सहित–

वृन्दारण्यं स्वपदरमणं–

"अपने बिहार से उद्भासित पद चिन्हों से सुशोभित वृन्दावन में" लेकिन इस अर्थ से कोई असहमति भी दिखाते हैं । दूसरे प्रकार से कह सकते हैं भक्त को भगवान् के पदचिन्ह रमणीय लगे

किन्तु भगवान् को स्वयं के पदचिन्ह कैसे रमणीय लगेंगे ? इसलिए स्वपद रमणं का अर्थ "स्वपदैः अंकितम् रमणम्" ऐसा नहीं कर सकते । बिहारीजी को तो रासेश्वरी की ही तो खोज रही होगी । इसलिए "स्वपदरमणम्" माने स्वस्याः (राधिकायाः) पदैः अंकितम् रमणम् । इस प्रकार करना चाहिये

कोई न श्याम सुन्दर के और न ही राधिकाजी के पर वृन्दावन धाम के प्रेमी हैं । वे कहते हैं ये "पद" ना "नंदनंदन" के हैं ना वृषभानु नन्दिनी के । पद का अर्थ 'स्थान' । भगवान् के लिये 'स्वपद' अपना स्थान वैकुण्ठ धाम ही है । अतः "स्वपद रमणम्" को वृन्दावन का विशेषण जानकर "स्वपदात् वैकुण्ठात् अपि रमणीयम् ऐसा विग्रह करना चाहिये ।

यह वृन्दावन उन्हें अपने स्थान से - वैकुण्ठ से भी बढ़चढ़कर रमणीय लगा ।

प्राविशत्–

प्रवेश किया । अथवा वृन्दावन से मिल गये । यहाँ तक की व्याख्या में तो भगवान् के सगुण-साकार रूप माधुरी का दर्शन किया । लेकिन इसी श्लोक से उसके निर्गुण-निराकार रूप माधुरी भी झलकती है । आइये थोड़ा उसका भी रसास्वादन करेंगे ।

(१) बर्हापीडं–

"वृह" क्रियापद वृद्धि विशालता का वाचक है । उसी से बर्ह यह विशालता निर्देशक शब्द बना । इस विश्व में सबसे अधिक विशाल - अमर्याद-अनन्त ब्रह्म ही है । उसी का आपीड़न अर्थात् संकोच-यानी सगुण साकार आकृति बंध । इसी बर्हापीडं से उसी परब्रह्म का अवतार निर्दिष्ट हुआ ।

(२) नटवर–

इसका एक अर्थ सूत्रधार है । लीला क्रीडन अव्यक्त सृष्टि रचना चाहता है । लेकिन उसकी बागडोर अपने हाथ रखने वाला - उसकी संचालन करने वाला सूत्रधार नटवर स्वयं ही है ।

(३) वपुः–

यह सूत्र संचालन कैसे चलता है । इसका जबाब वपुः शब्द से देते हैं । वप् - वपति का अर्थ है बीज बोना । और उ शब्द ब्रह्मा विष्णु महेश वाचक है । "एकोऽहं बहुस्याम्" संकल्प के साथ त्रिगुणमयी माया द्वारा उन गुणों की धारणा करने वाली देवताओं के बीज बोकर उन्हीं के द्वारा उत्पत्ति स्थिति लय का सूत्र संचालन करते हैं ।

कर्णयोः –

"कृ" करोति का अर्थ करना । इसलिये कृ+न कर्ण, करोति न का अर्थ 'नहीं करना'- कर्ण शब्द से "अकर्त्ता" अवस्था सूचित की । इस प्रकार की अवस्था दो समय होती है । सृष्टि पूर्व व प्रलय में इसलिये कर्णयोः द्विवचन करके दो कानों का उल्लेख किया ।

कर्णिकारम् –

उपरोक्त कर्ण स्थिति का साक्षी "कर्णि" अकर्ता होते हुए भी उस कर्णि ने जो रचना की विश्व ब्रह्मांड रचा उसे "कर्णिकार" द्वारा सूचित करते हैं । इसलिये दो कान और एक "कर्णिकार का उल्लेख करते हैं ।

बिभ्रत्वासः –

अब एक शोभायमान वस्त्र उसने धारण किया है। जीवत्व रूपी आवरण स्वीकृत किया है। इस आवरण से कौन सी स्थिति आती है? उसे दिखाते हैं आगे के पदों द्वारा।

कनक कपिशं–

इसके पदों का विच्छेद यदि कन कक पि शं इस प्रकार किया जाय तो - **कनयति ककते पियते** (आत्मानं) 'श' (कल्याण रूपं) इस प्रकार विस्तार हो जाता है।

इसी से सूचित करते हैं कि इस आवरण से अपना परम कल्याण रूप छोड़ के निम्न स्तरपर आता है (कनयति)। देहाभिमानी बनता है (ककति)। स्थिरत्व छोड़कर अस्थिर बनता है (पियते)

वैजयन्ती च मालाम्–

आवरण ऐसा है तो भी "वैजयन्ती" है। अंततोगत्वा विजय प्राप्त कराने वाला है। क्योंकि इसमें ही भगवती शक्ति छिपी हुई है (मालीयते अस्माम् इति माला) इसलिये भगवत् प्राप्ति के सहायक बनने वाला है। "शरीरमाद्यं खलु धर्म साधनम्।"

रन्ध्रान् वेणोः –

'रं' अग्नि वाचक शब्द है। लक्षण से उसी का अर्थ "ज्ञान"कर सकते हैं। यः रं धार्यते स रन्ध्रः।

व्रेण् (भ्वा- उभ. वेणाति-ते) इस क्रियापद का एक अर्थ है। प्रत्यक्ष करना। इस दृष्टि से प्रत्यक्षी कृत विश्वस्य (स्वरूप) ज्ञान धारणा स्थानानि ते रंध्रान् वेणोः। ये "छिद्र" रिक्त ही है। जैसे वेणु खोखली होती है। साधना, सत्संग आदि में इन छिद्रों को मिटाने की कोशिश है। किन्तु जीव उसमें सफल नहीं होता। तो फिर कौन सा मार्ग है ?

अधर सुधयापूरयन्–

अपना आंतरिक खोखलापन को मिटाने के लिये जीव साधना द्वारा कोशिश करता है। लेकिन "यमेवैष वृणुते ते नैव लभ्यः" इस श्रुति से आत्मलाभार्थ उसकी ही कृपा प्राप्त होनी चाहिये भगवान् की कृपा वर्षा भक्त के ऊपर अविरत होती है। पर यह बात भक्त की धारणा के परे ही रहती है। **न धार्यते तस्मात् अधरः।**

किंन्तु सु–परमात्मा, तेन (एव) धार्या– सुधा तया– पूरयति– अपनी असीम अहैतुकी कृपा से जीव की त्रुटियों को दूर करके परिपूर्ण-स्ववत्-कर देता है।

यहां तक भगवान् की शास्त्रीय दृष्टि से सृजन, पालन, और स्वात्मीकरण (उपसंहरण) लीला का वर्णन किया। अब श्रीमद्भागवतोक्त विशेष लीला वर्णन करते हैं। (इससे श्री वृन्दावन धाम की विशेषता उद्भासित होती है।)

गोपवृन्दैः (सह) गोपनात् गोपः –

भगवान् के अन्दर एक अदम्य अभीप्सा छिपी है, आकण्ठ प्रेम रस पान की। यह प्रेम रस एक प्रकार का नहीं। शान्त दास्यादि पंच भाव, नवविधा भक्ति के स्तर, शब्द स्पर्शादि प्राकृत भासमान किन्तु वस्तुतः अप्राकृत विषय, कृत कोपादि, भासमान प्रेमद्वन्द्वी परन्तु प्रत्यक्षतः प्रेमपूरक ऐसे असंख्य प्रेमरस का आकण्ठ प्राशन की उनमें अभीप्सा है। यह अभीप्सा गुप्त है। श्रुतियों के भी अगम्य रही है। अद्वैत साक्षात्कार के बाद भी अज्ञान रही है। इन बहुविध गुप्त अभिप्साओं का निर्देश यहाँ गोपवृन्द शब्द से किया है। उन्हीं के साथ यह चिरपिपासित अब जा रहा है, कहाँ ?

वृन्दारण्यं–वृंद– वृणीतं ददाति इति वृन्द –

जहाँ उसे चिर अभिलषित बहुरूपी विशुद्ध प्रेम रस प्राप्त होने वाला है ऐसे एकमात्र स्थान में वृन्दावन धाम में (अरण्यं-शरण्यं) आश्रय लेने जा रहा है।

स्वपदरमणं–

उसकी प्रेम पिपासा अब इतनी चरम सीमा तक पहुँची है कि अब वह अचल स्वयं को सम्भाल नहीं पा रहा है। अपने स्थान में निर्गुण निराकार रूप में अब वह स्थिर नहीं रह सकता। **"स्व पदे रमति न"** इस स्थिति को प्राप्त कर.व्रज की तरफ दौड़ता है।

प्राविशत्–

उसी में जन्म लेता है। अथवा **प्र+आ+ आविशत्**। ऐसा विग्रह करने से व्रजभूमि– के साथ-वन, गायें, गोप, गोपी, भूमि सबके साथ एक रूप बन जाता है।

●

भगवती जगदम्बा के दुर्गा, शताक्षी और शाकम्भरी नामों का इतिहास

[नवरात्रि पर विशेष]

—कु. प्रतिभा भारद्वाज

देवी भागवत में एक कथा आती है । राजा जनमेजय द्वारा भगवती शताक्षी के प्राकट्य की कथा पूछने पर महर्षि व्यास ने उन्हें बताया कि प्राचीन काल में दुर्गम नामका एक महान् दैत्य था । उसकी आकृति अत्यन्त भयङ्कर थी । हिरण्याक्ष के वंश में उत्पन्न वह राजा रुरु का पुत्र था । देवताओं का बल वेद है और वेद को नष्ट कर देने से देवता भी नहीं रहेंगे । यह सोचकर वह दैत्य वेद को नष्ट करने के लिये तपस्या करने के विचार से हिमालय पर्वत पर गया । उसने केवल वायु पीकर लगभग एक हजार वर्षों तक ब्रह्माजी की कठिन तपस्या की । उसकी तपस्या से प्रसन्न होकर ब्रह्माजी ने उसे दर्शन दिया और वरदान माँगने को कहा ।

उसने ब्रह्माजी से वर माँगा कि 'सुरेश्वर ! साथ ही मुझे वह बल दीजिए, जिससे मैं देवताओं को परास्त कर सकूँ ।'

दुर्गम की यह बात सुनकर चारों वेदों के परम अधिष्ठाता ब्रह्माजी 'ऐसा ही हो' कहते हुये सत्यलोक को चले गये । तबसे ब्राह्मणों को समस्त वेद विस्मृत हो गये । स्नान, सन्ध्या - नित्य होम, श्राद्ध, यज्ञ और जप आदि वैदिक क्रियायें नष्ट हो गयीं । सारे भूमण्डल में भीषण हाहाकार मच गया ।

इस प्रकार सारे संसार में घोर अनर्थ उत्पन्न करने वाली अत्यन्त भयङ्कर स्थिति हो गयी । देवताओं को हवि का भाग मिलना बंद हो गया । अतः निर्जर होते हुये भी वे सजर हो गये । देवता दुर्गम के साथ युद्ध करने में असमर्थ हो पर्वत की कन्दराओं और शिखरों पर - जहाँ कहीं भी स्थान मिला, पराशक्ति भगवती जगदम्बा का ध्यान करते हुये समय बिताने अग्नि में हवन न होने के कारण वर्षा भी बंद हो गयी । बहुत सी प्रजा तथा गाय - भैंस आदि पशु प्राणों से हाथ धो बैठे । घर - घर में मनुष्यों की लाशें बिछ गयीं ।

इस प्रकार भीषण अनिष्टप्रद समय उपस्थित होने पर ब्राह्मण लोग हिमालय पर्वत पर जाकर कल्याणकारिणी भगवती जगदम्बा की उपासना करने लगे । समाधि, ध्यान और पूजा के द्वारा उन्होंने देवी की स्तुति की । जब उनकी देवी के चरणों में पूर्ण रूप से शरणागति हो गयी तब उन्हें भगवती पार्वती ने, जो 'भुवनेशी' एवं 'महेश्वरी' नाम से विख्यात हैं, अपनी अनन्त आँखों से

सम्पन्न दिव्यरूप के दर्शन कराये । उनका वह विग्रह कज्जल के पर्वत की तुलना कर रहा था । आँखे ऐसी थीं, मानो नील कमल हों । हाथों में बाण, कमल के पुष्प, पल्लव और मूल सुशोभित थे । जिनसे भूख-प्यास और बुढ़ापा दूर हो जाते हैं, ऐसे शाक आदि खाद्य-पदार्थों को उन्होंने हाथ में ले रखा था । महान् धनुष से भुजा सुशोभित थी । सम्पूर्ण सुन्दरता का सारभूत भगवती का वह रूप बड़ा ही कमनीय था । करोड़ों सूर्यों के समान चमकनेवाला वह विग्रह करुण-रस का अथाह समुद्र था । जगत् की रक्षा में तत्पर रहने वाली करुणार्द्र-हृदया भगवती अपनी अनन्त आँखों से सहस्रों जलधारायें गिराने लगीं । उनके नेत्रों से निकले हुए जल के द्वारा त्रिलोकी पर नौ रात वृष्टि होती रही । जल पाने से प्राणियों को बड़ी तृप्ति हुई । जो देवता पहले लुक - छिपकर रहते थे, वे अब बाहर निकल आये । वे देवता और ब्राह्मण सबने मिलकर देवी की स्तुति की और दुर्गम के संहार की प्रार्थना करने लगे ।

उनके स्तुति करने के पश्चात् भगवती शिवा ने अनेक प्रकार के शाक तथा स्वादिष्ट फल अपने हाथ से खाने के लिये उन्हें दिये । भाँति-भाँति के अन्न सामने उपस्थित कर दिये । पशुओं के खाने योग्य कोमल एवं अनेक रसों से सम्पन्न नवीन तृण भी उन्हें देने की कृपा की । उसी दिन से भगवती का एक नाम शाकम्भरी भी पड़ गया ।

शत-शत नेत्रों से बरसाया नौ दिन तक अविरल अति जल ।
भूखे जीवों के हित दिये अमित तृण अन्न शाक शुचि फल ॥

जगत् में कोलाहल मच जाने पर दूत के कहने से दुर्गम अस्त्र-शस्त्र से सुसज्जित होकर युद्ध के लिये चल पड़ा । उसके पास एक अक्षौहिणी सेना थी । देवताओं की सारी सेना को घेरकर वह दैत्य भगवती के सामने खड़ा हो गया । तब देवताओं की मण्डली में कोलाहल मच गया । तदनन्तर भगवती शिवा ने उनकी रक्षा के लिए चारों ओर तेजोमय चक्र खड़ा कर दिया और वे स्वयं बाहर निकल गयीं । तदनन्तर, देवी और दैत्य - दोनों की लड़ाई ठन गयी । बाणों की वर्षा से अद्भुत सूर्य - मण्डल ढक गया । बाण जब परस्पर टकराते, तब अग्नि की प्रज्वलित चिनगारियाँ निकलने लगतीं । धनुष की टंकार से दिशाओं में बहरापन छा गया ।

तत्पश्चात् देवी के श्रीविग्रह से बहुत-सी उग्र शक्तियाँ प्रकट हुईं । कालिका, तारिणी, बाला, त्रिपुरा, भैरवी, रमा, बगला, मातङ्गणी, त्रिपुरसुन्दरी, कामाक्षी, देवी तुलजा जम्भिनी, मोहिनी, छिन्नमस्ता, गुह्यकाली और दशसाहस्र पश्चात् चौसठ, और फिर अनगिनत शक्तियों का सबकी भुजाएँ आयुधों से सुशोभित थीं । युद्धस्थल में मृदङ्ग, शङ्ख आदि बजने लगे । उन शक्तियों ने दानवों की बहुत आधिक सेना नष्ट कर दी । दस दिनों में राक्षस की सम्पूर्ण अक्षौहिणी सेनाएँ मर- खप गयीं । ग्यारहवें दिन दुर्गम ने स्वयं लड़ने की तैयारी की उसने लाल रंग की माला, लाल वस्त्र और लाल चन्दन से शरीर को सजाया और महान् उत्सव मनाकर युद्ध - भूमि में पहुँचा । बड़े ही उत्साह के साथ उसने सम्पूर्ण शक्तियों पर विजय प्राप्त कर ली । अब भगवती जगदम्बा और दुर्गम दैत्य में भीषण युद्ध होने लगा । इसके बाद देवी ने दुर्गम पर पन्द्रह बाण छोड़े । चार घोड़े चार बाणों के

लक्ष्य हुये । एक बाण सारथि को लगा । देवी के दो बाणों ने दुर्गम के दोनों भुजाओं को बींध दिया । एक बाण ने ध्वजा को काट दिया । जगदम्बा के पाँच बाण दुर्गम की छाती में जाकर घुस गए । फिर तो रुधिर वमन करता हुआ वह दैत्य भगवती परमेश्वरी के सामने प्राणों से हाथ धोकर गिर पड़ा । उसके शरीर से तेज निकला और भगवती के रूप में जाकर समा गया । उस महान् पराक्रमी दैत्य के मर जाने पर त्रिलोकी के अन्तःकरण की ज्वाला शान्त हो गई । तब ब्रह्मा प्रभृति समस्त देवता भगवान् विष्णु और शंकर को अगुआ बनाकर भक्तिपूर्वक गद्गद वाणी में भगवती जगदम्बा की स्तुति करने लगे ।

ब्रह्मा, विष्णु आदि आदरणीय देवताओं के इस प्रकार स्तवन एवं विविध द्रव्यों से पूजन करने पर भगवती जगदम्बा तुरन्त संतुष्ट हो गयीं । भगवती ने प्रसन्नतापूर्वक वेदों को दैत्य से छीनकर देवताओं को सौंप दिया । तथा ब्राह्मणों से विशेष रूप में कहा – 'जिसके अभाव में आज ऐसा अनर्थकारी समय सामने उपस्थित था, वह यह वेदवाणी मेरे शरीर से प्रकट हुई है । मेरी पूजा में सदा संलग्न रहना तुम्हारा परम कर्तव्य है; क्योंकि तुम मेरे सेवक हो । मेरी इस उत्तम महिमा का निरन्तर पाठ करना । मैं उससे प्रसन्न होकर तुम्हारे सम्पूर्ण संकट दूर करती रहूँगी । मेरे हाथ से दुर्गम नामक दैत्य का वध हुआ है । अतः मेरा एक नाम 'दुर्गा' है । मैं 'शताक्षी' भी कहलाती हूँ । जो व्यक्ति मेरे इन नामों का उच्चारण करता है, वर माया को छिन्न-भिन्न करके मेरा स्थान प्राप्त कर लेता है ।'

सच्चिदानन्दस्वरूपिणी भगवती जगदम्बा इन वाक्यों से देवताओं को परम संतुष्ट करके उनके सामने ही सहसा अन्तर्धान हो गयीं । जो भक्तिपरायण बड़भागी पुरुष निरन्तर इस का श्रवण करता है, उसकी सम्पूर्ण कामनाएँ सिद्ध हो जाती हैं और अन्त में वह देवी के परमधाम को प्राप्त हो जाता है ।

आश्रम-संवाद

कनखल–

श्रीश्री माँ आनन्दमयी ज्योतिपीठ का भव्य प्रांगण सदा भक्तों की चहल-पहल से परिपूरित रहता है । नित्य आयोजन वहाँ होते रहते हैं । देश-विदेश से सभी श्रेणी एवं सभी जातियों के जिज्ञासु भक्तगण आते-जाते अपनी श्रद्धा निवेदन अवश्य ही करते हैं । यह भव्य मंदिर सभी को निरन्तर आकर्षण करता रहता है । चाहे व राजा हो या रंक, मंत्री हो या सांसद, विद्वान् हो या व्यापारी, बालक हो या वृद्ध । गृहस्थ हो या संन्यासी, सभी के लिये खुला दरबार है माँ की यह दिव्य भूमि ।

केवल दर्शन ही नहीं साथ में प्रसाद ग्रहण की भी पूर्ण व्यवस्था है । "अन्नपूर्णा क्षेत्र" नित्य प्रति चल रहा है । श्री श्री माँ कहती थीं सबको "पिताजी प्रसाद पा कर जाना, दोस्त जी प्रसाद लेकर जाना, श्री श्री माँ की इस दिव्य परम्परा को अटूट बनाने के लिये आनन्दमयी संघ के पूर्व अध्यक्ष श्री बी.के. शाह के उत्साह से यह अन्नपूर्णा अन्न क्षेत्र की विराट् व्यवस्था की गयी है ।

आश्रम में अनुष्ठित सभी उत्सव यहाँ विधिवत् आयोजित होते हैं ।

श्री श्री दुर्गापूजा यहाँ के मुख्य आयोजनों के अन्तर्गत है । आगामी ३ अक्टूबर से ८ अक्टूबर पर्यन्त शारदीय दुर्गापूजा का आयोजन किया गया है । इस वर्ष पूजा के उद्योक्ता हैं भक्त प्रवर स्व. श्री निशिकान्त मित्र की पौत्री श्रीमती दीपिका एवं शंकर दास, अपने स्वर्गवासी पिता श्री अनिलकान्त मिश्र एवं माता श्री अणिमा मित्र की पुण्यस्मृति में अपनी सेवा श्री श्री माँ के श्री चरणों में अर्पित कर रहे हैं ।

१२ अक्टूबर को श्री श्री लक्ष्मी पूजा, २६ अक्टूबर को दीपवली के दिन काली पूजा, २७ अक्टूबर को अन्नकूट का उत्सव सम्पन्न होगा । तदुपरान्त ४ नवम्बर से १० नवम्बर पर्यन्त, संयम सप्ताह महाव्रत अनुष्ठित होगा ।

वाराणसी–

उत्सव मुखर वाराणसी आश्रम में १६ जुलाई गुरुपूर्णिमा से उत्सवों की श्रृंखला चली, प्रतिवर्ष की भाँति श्री श्री आनन्दज्योतिर्मन्दिर में माँ की, गिरिजी के पञ्चशिव मन्दिर में श्री १००८ मुक्तानन्द गिरिमहाराज जी का षोड़शोपचार पूजन कीर्तन आदि के माध्यम विधिवत् सम्पन्न हुआ ।

अषाढ़ के बाद झूलों का सावन प्रारम्भ हुआ, हरियाली छा गयी मठ-मंदिरों में हरी-भरी फूलों की डालियों से झूले सजने लगे । श्रावन शुक्ला सप्तमी को श्री श्री मुक्तानन्द गिरि महाराज जी के तिरोधान तिथि के उपलक्ष में गिरिजी का षोड़शोपचार पूजन एवं साधु भण्डारा सम्पन्न हुआ ।

श्रावण शुक्ला एकादशी से मन्दिरों में झूले सजाये गये । ठाकुरजी की सचल मूर्तियाँ फूल पत्तियों के झूलों पर विराजमान हुए । आनन्द ज्योतिर्मन्दिर के दो मंजिल के भव्य मन्दिर में चन्दन

काष्ठनिर्मित सिंहासन पर विराजमान गोपाल जी के झूले को भी फूल मालाओं से सजाया गया। प्रतिदिन सन्ध्योपरान्त ठाकुर जी की पूजा के उपरान्त धीरे-धीरे सिंहासन पर ही गोपाल जी को झूले पर झुलाया जाता था। घुंघरू लगी हुई डोरी रुणझुण की तालबद्ध रणत्कार से आगे पीछे होती हुयी पुजारी जी के हाथों में शोभायमान होती थी। बालगोपाल जी झूला लेते थे। कन्यापीठ की कन्यायें झूम-झूम कर गाती थीं "फूल झुलनाते झूले नन्दराय, झूले-झूले-झूले। मनमोहक समाँ बँधता था।

१४ अगस्त सन्ध्या के समय पूर्णिमा का चन्द्रमा बादलों की झुरमुट से लुकछिप कर अपने आराध्य की झूलन लीला का आनन्द ले रहा था। गोपाल मन्दिर में फूलों के श्रृंगार से सुशोभित गोपालजी अपनी विश्वविमोहनि मधुर मुसकान से उपस्थित भाग्यवान् भक्तवृन्दों पर कृपावारि बरसाते हुए षोड़शोपचार पूजा स्वीकार कर रहे थे। एक हाथ में औटाये हुए दूध के मावे का लड्डू था, कलाई पर फूलों की राखी थी। गले में फूलों से बना दुपट्टा था। सामने गंगाजी बह रही थीं, आसमान में पूरनमासी का चाँद शोभित था। कीर्तन के पद गूँज रहे थे "पूर्णिमार चाँद ... हासत झल मल, यमुना उजान चले, ... गोपाल गोविन्द झूले .." मेरे राधा गोविन्द झूले।"

१५ अगस्त को श्री श्री माँ आनन्दमयी कन्यापीठ में वन्देमातरम् के सस्वर गान के साथ झंडा फहराया गया। इस कार्यक्रम में वर्षों के उपरान्त संस्था की प्राक्तन छात्रा एवं अध्यापिका "ब्रह्मचारिणी विशुद्धा" उपस्थित थीं। देशगीत एवं राष्ट्रगान के साथ सभा सम्पन्न हुई।

परम्परा के अनुरूप २२ अगस्त को जन्माष्टमी एवं २३ अगस्त को जन्माष्टमी एवं नन्दोत्सव सम्पन्न हुआ। ५ सितम्बर से श्रीमद्भागवत सप्ताह परायण प्रारम्भ हुआ। पूणे से कथा करने के लिए श्री श्री माँ पुराने भक्त एवं वर्तमान महाराष्ट्र के कथा-वाचक "बाबा-साहब" श्री अशोक गणेश कुलकर्णी को निमन्त्रित किया गया था। ५ तारीख को शाम को ३ से ६ व्याख्या का समय रखा गया था। ६ तारीख राधाष्टमी से प्रातः ९ से ११ एवं शाम को ३ से ६ व्याख्या की जाती थी। पहले दिन महात्म्य की व्याख्या की गयी थी। श्री कुलकर्णी जी की व्याख्या में भाव की अभिव्यक्ति, भाषा की सरलता, एवं मौलिकता का प्राधान्य था, इसका प्रमाण यह था कि एक दिन भी जिसने थोड़ी सी भी कथा श्रवण की पूर्वनिश्चित संकल्प के बिना ही उसने पूरी कथा का श्रवण किया, – पाँचवें दिन सायम् काल श्री कृष्णजन्म एवं "नन्द के आनन्द भयो जय कन्हैया लाल की ...." के धूम-धाम कीर्तन के साथ कथा सम्पन्न हुई। छठें दिन सायम् काल ठाकुर जी की गायें चराते हुये गोपबालों के साथ कलेवा करने की लीला की विशेष रूप से व्याख्या की गयी। महाराष्ट्र में यह "गोपाल काला" के नाम से जाना जाता है। कथा मण्डप में एक माटी की मटकी को फूलों से सजाकर उसमें सभी प्रकार की फल, मिठाई, अचार, चिउड़ा, दही, मक्खन, दूध आदि भर कर टाँग दिया गया था। अघासुर वध के उपरान्त ठाकुर जी गोपबालों के साथ दही भात का कलेवा कर रहे थे, हाथों की छोटी-छोटी ऊँगलियों की छोड़ पर करील आदि के अचार है हाथ दही भात से सना हुआ है, गोपबालों को खिला रहे हैं खुद भी खा रहे हैं बड़ी ही रमणीय कथा है, सारा दृश्य

आखों के सामने परिस्फुट हो जाता है। कथा समय सीमा को पार कर चुकी है, सात बज चुके हैं। श्रोता कथा रस में मग्न हैं, इतने में ग्वालबालों के साथ छोटे से ठाकुरजी राधा जी के साथ कथा मण्डप में पधारते हैं, "राधे गोविन्द जय नन्दलाला" का कीर्तन ग्वालबाल ठाकुरजी के चारों ओर घूम कर करते हैं ठाकुर जी अपनी लकुटी से मटकी को फोड़ते हैं। सारी सामग्री बिखर जाती है। उस प्रसाद को लेने में उपस्थित श्रोता भक्तों में होड़ लग जाती है। कीर्तन की धूम मचती है। कथा समाप्त होती है, "आरती अति पावन पुराण की धर्मभक्ति विज्ञान खान की" की गूँज से आरती प्रारम्भ होती है। आरती के उपरान्त "गोपाल काला" का प्रसाद सबको बाँटा गया। आज के कथारस का अमृत पान कर उसी में मदमस्त हो सबने प्रस्थान किया। सप्तम दिन प्रातः कथा मंच के सामने गोबर एवं माटी से श्री गोवर्द्धन जी बनाये गये। फूल पत्तियों से सजाये गये। प्रातः की कथा के अन्त में गोवर्द्धन पूजन के साथ कथा समाप्त होती है।

१२ ता. के सायम् काल कथा की विश्रान्ति हुई। १३ ता. को हवन आदि के साथ कथा की पूर्णाहुति हुई। ब्राह्मण भोजन एवं भण्डारा विधिवत् सम्पन्न हुआ। कथा रस ने सबको रसामृत में सराबोर कर दिया था।

कथा सप्ताह के दिनों में ही दो एक अनुष्ठान भी हुए थे। ८ सितम्बर को महामहोपाध्याय श्री गोपीनाथ कविराज जी के ११४ जन्मदिन के अवसर पर एक विद्वत् गोष्ठी का आयोजन किया गया था, जिसमें उपस्थित विद्वानों ने कविराज के प्रति अपनी श्रद्धाञ्जलि अर्पित की। काशी के स्वनामधन्य विद्वान् डा. विश्वनाथ भट्टाचार्य की अध्यक्षता में सभा सम्पन्न हुई। सभा का संचालन ब्रह्मचारिणी डा. गीता बनर्जी ने किया।

१२ सितम्बर के सायम् काल दिव्य जीवन संघ के प्रतिष्ठाता ब्रह्मलीन स्वामी श्री १००८ शिवानन्द की चरण पादुका" की यात्रा श्री श्री माँ के आश्रम में पहुँची। स्वामी श्री शिवचिदानन्द जी, एवं स्वामी गुरुसेवानन्दजी अपने गुरुदेव की चरणपादुका को मस्तक पर धारण कर वेदध्वनि व पुष्पवृष्टि के माध्यम् आनन्द ज्योति मन्दिर पहुँचे। यहाँ तीन दिन ठहरने का कार्यक्रम था। पूज्यपाद स्वामी शिवानन्दजी ने आज से ५० वर्ष पूर्व भारत यात्रा की थी उसी स्मृति में दिव्यजीवन संघ, ऋषिकेश, की ओर से स्वामी श्री १०८ चिदानन्द जी महाराज के निदर्शन में यह कार्यक्रम निर्धारित किया गया था। पूज्यपाद श्री शिवानन्दजी इन्हीं दिनों वाराणसी पधारे थे अतः यह यात्रा भी इन्हीं दिनों वाराणसी आयी। १३ ता. को काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में कार्यक्रम था। १४ ता. सायमूकाल आनन्दज्योतिर्मन्दिर में सवंर्द्धना का कार्यक्रम रखा गया था। जिसमें महात्माओं के प्रवचन एवं भक्तों के अपने श्री गुरुदेव के प्रति उद्‌गार व्यक्त करने का कार्यक्रम था।

उभय महात्माओं ने अपने प्रवचन में श्री श्री माँ के प्रति अपनी श्रद्धा व्यक्त की, श्री शिवचिदानन्द जी महाराज ने कहा, "मैंने श्री श्री माँ के दर्शन अनेक बार किये, एक बार किसी भक्त के "भगवान् को कैसे पाया जा सकता है" इस प्रश्न के उत्तर में माँ ने कहा था, "चाहना होने से पाया जा सकता है"। स्वामी जी बार-बार कह रहे थे, "माँ मैं गुरुवर के पदवाहक के रूप में

आपके द्वार पर उपस्थित हुआ हूँ । माँ मुझे वह चाहना दो, माँ वह चाह दो ।" स्वामीजी के द्वारा श्री श्री माँ के सामने लगे चित्र की ओर दृष्टि करके कहे गये यह शब्द अत्यन्त भाव पूर्ण एवं मर्मस्पर्शी थे । स्वामी सेवकानन्दजी ने साधु सुलभ सरल एवंम् गद गद् भाव से कहा "माँ के पास तो हम सदैव आना जाना करते ही थे । श्रीगुरुदेव का माँ से एक अत्यन्त मधुर सम्बन्ध था ही, जो परम्परा आज भी है । हमें बिलकुल ऐसा नहीं लग रहा है कि हम किसी अन्य आश्रम में आये हैं । हमें महसूस हो रहा है कि यह हमारा अपना ही आश्रम है । आपने अन्यकथा प्रसंगों को सुनाते हुये कीर्तन द्वारा अपना प्रवचन समाप्त किया ।" हमें यह अनुभूति हुई माँ कितनी विराट् हैं, श्री श्री माँ में सभी का समावेश है, माँ के सब है हमारी माँ सबकी हैं । यह विश्वजनीन व्यापक परम्परा का प्रतिपालन निरन्तर होता रहे श्री श्री माँ के चरणों में यही प्रार्थना है, यही माँ की महिमा है ।

१७ सितम्बर को श्री श्री माँ आनन्दमयी कन्यापीठ में "श्री अशोक गणेश कुलकर्णी" जी की अध्यक्षता में संस्कृत दिवस अनुष्ठित हुआ ।

माँ आनन्दमयी अस्पताल, वाराणसी,

१५ अगस्त, २००० को आनन्दमयी अस्पताल में पूर्व बंगाल के सुविख्यात देश सेवक श्री कालाचाँद ब्रह्मचारी की स्मृति में एक सभा आयोजित की गयी थी । इस अवसर पर उत्तर प्रदेश के वित्त मंत्री श्री हरिशचन्द्र श्री वास्तव जी सस्त्रीक उपस्थित हुये थे ।

सर्वप्रथम अस्पताल के चिकित्सक, एवं कार्यकर्त्ताओं से भरपूर प्रांगण में मन्त्री महोदय ने राष्ट्रीय गान के साथ "ध्वजारोहण" का कार्यक्रम सम्पन्न किया । [राष्ट्रीयगान व देशगीत श्री श्री माँ आनन्दमयी कन्यापीठ की ब्रह्मचारिणियों द्वारा गाया गया ।]

तदुपरान्त भाषण आदि के कार्यक्रम हुए । वित्तमन्त्री के कथन का आशय था कि "१५ अगस्त हमारी स्वाधीनता का दिन यद्यपि आनन्द का है वैसे ही एक दर्दनाक घटना भी घटी थी इसी दिन. वह है अखण्ड भारत का खण्डित होना, हिन्दुस्तान पाकिस्तान दो खण्डों का जन्म ।"

"आज वह दिन सबसे आनन्द का होगा जिस दिन भारत एवं पाकिस्तान की जनता समस्वर से हर्षोल्लास से कह दे "हम एक थे, हम एक होंगे । हम दो देश नहीं चाहते । हम अखण्ड भारत के निवासी बनेंगे, हमें सुख-चैन से रहना है ।" उस दिन १५ अगस्त के स्वतन्त्रता की यथार्थ वर्ष गाँठ मनायी जायगी"

इस कार्यक्रम के अनन्तर अस्पताल परिसर में उन्होंने वृक्षारोपण किया, यह कार्यक्रम रोटरी क्लब की ओर से रखा गया था ।

स्वतन्त्रता दिवस कार्यक्रम की अध्यक्षता वाराणसी मण्डल के कमिशनर श्री मनोज कुमार जी आई. ए. एस, एवं मुख्य अतिथि थे विधायक श्री श्यामदेव रायचौधरी ।

श्री वृन्दावन—

श्री वृन्दावन धाम में अनुष्ठित झूलनोत्सव के उपलक्ष में प्रतिवर्ष की भाँति २ अगस्त से १५ अगस्त तक आश्रम प्रांगण में श्री रासलीला अनुष्ठित हुई । प्रतिदिन सायम् काल छलिया मन्दिर में

झूलन पूजा अनुष्ठित होती थी । १५ अगस्त को उदय-अस्त नाम संकीर्तन व सभी मन्दिरों में विशेष षोड़शोपचार पूजन अनुष्ठित हुआ ।

सन् १९६६ ज़न्माष्टमी की पुण्यतिथि पर श्री छलिया की प्रतिष्ठा हुई थी । इसी पुण्यमय तिथि की प्रातः की वेला में प्रति तीन वर्षो के उपरान्त श्री विग्रहों का पंचामृत (दूध, दही, घी, शहद, एवं शर्करा (चीनी) से महाभिषेक होता है ।

इस वर्ष श्री श्री माँ आनन्दमयी कन्यापीठ की कतिपय ब्रह्मचारिणियाँ वहाँ उपस्थित थीं, जिनमें ब्रह्मचारिणी गीता बनर्जी मुख्य थीं । आप श्री श्री माँ की उपस्थिति में छलिया विग्रह की प्रतिष्ठा के समय भी वृन्दावन धाम में उपस्थित थी । आज इतने वर्षो के उपरान्त इस अवसर पर उपस्थित रहकर आपने भी महाभिषेक में योगदान किया, वेद ध्वनि एवम् कीर्तन कन्यापीठ की कन्याओं द्वारा किया गया ।

रात्रि में भी षोड़शोपचार पूजन हुआ एवं कीर्तनादि हुये । फूलों के मुकुट वनमाला से श्री विग्रहों का श्रृंगार किया गया था । श्री छलिया के अनुपम करुणामृत प्रवाहिनि दिव्य दृष्टि से पूजा प्रांगण पुलकित हो रहा था ।

२४ अगस्त को पारम्परिक रूप से नन्दोत्सव सम्पन्न हुआ ।

६ सितम्बर से १३ सितम्बर पर्यन्त श्रीमद्भागवत सप्ताह यज्ञ का आयोजन किया गया था । आयोजक थीं बंगाल के सुविख्यात दार्शनिक श्रद्धेय श्री नलिनी ब्रह्म की पौत्री श्रीमती सुतपा नाग । व्याख्याता थे श्री वृन्दावनधाम के रसिक संन्यासी भागवत् सम्राट ब्रह्मलीन स्वामी श्री अखण्डानन्द सरस्वती महाराज के शिष्य स्वामी प्रज्ञानन्द जी महाराज ।

पुणे :—

पुणे वासी भक्तों के आग्रहपूर्ण आह्वान पर इस वर्ष भी श्री श्री माँ आनन्दमयी कन्यापीठ की कन्याओं ने अपना ग्रीष्मकालीन अवकाश पुणे स्थित श्री श्री माँ के आश्रम में व्यतीत किया । यहाँ के भक्तों की सेवा भावना अत्यन्त ही सराहनीय है ।

१६ जुलाई को गुरुपूर्णिमा महोत्सव धूमधाम से समपन्न हुआ । इस वर्ष इसका आयोजन मोर्वी राजपरिवार की ओर से हुआ था । इस अवसर पर श्री गुरुपूजन, हवन, भजन आदि सम्पन्न हुए, पारम्परिक प्रथानुसार भण्डारा एवं प्रसाद ग्रहण भी सुचारु रूप से सम्पन्न हुए ।

देहरादून—

९ जुलाई श्रीराममंदिर प्रतिष्ठादिवस यथावत् पालन हुआ । इस उत्सव के उपलक्ष में ८ जुलाई प्रातः अखंड रामायण पाठ प्रारंभ हुआ । दूसरे दिन मध्याह्न में पाठ की समाप्ति हुई । अनेक भक्त एकत्रित हुए । सबने प्रसाद पाया ।

१६ जुलाई किशनपुर आश्रम में गुरुपूर्णिमा का अनुष्ठान अनुष्ठित हुआ । इसमें श्रीमती मालती भार्गव के सुमधुर रामायण गान से सब भक्त आनन्दित हुए । १५ ता. प्रातः अखंडरामायण पाठ प्रारंभ हुआ दूसरे दिन पाठ की समाप्ति हुई निरन्तर वर्षा होने पर भी अनेक भक्तों ने सम्मिलित होकर उत्सव को साफल्यमंडित किया ।

भीमपुरा :–

श्री श्री माँ के भीमपुरा आश्रम के हॉल में पूज्य स्वामी भास्करानन्दजी की उपस्थिति में श्री श्री माँ की मूर्ति-प्रतिष्ठा महोत्सव धूमधाम से मनाया गया । श्री हनुमान जयन्ती के दिन हनुमान मंदिर में श्री हनुमान जी की पूजा, सुन्दरकाण्डपाठ, कीर्तन एवं भंडारा आदि हुआ । श्री श्री माँ का जन्मोत्सव भी यथारीति सुसंपन्न हुआ । आश्रम में एक शिवमंदिर के निर्माण का कार्य भी प्रारम्भ हो गया हैं ।

कलकत्ता :–

१६ जुलाई आगरपाड़ा आश्रम में गुरुपूर्णिमा के उपलक्ष में श्री श्री माँ की, तथा १००८ स्वामी मुक्तानन्द गिरिजी महाराज जी की एवं बाबा भोलानाथ की षोडशोपचार पूजा, गीता चण्डीपाठ, सत्संग एवं कीर्त्तन हुआ ।

आगामी ३ अक्टूबर से ८ अक्तूबर तक श्री श्री शारदीया दुर्गापूजा अनुष्ठित होगी ।

१२ अक्टूबर श्री लक्ष्मीपूजा २६ अक्टूबर श्री कालीपूजा एवं २७ अक्टूबर अन्नकूट महोत्सव प्रारंभ होगा ।

आागामी २३ दिसम्बर को आश्रम के वार्षिक नामयज्ञ का अधिवास एवं २४ दिसम्बर को उदयास्त नाम संकीर्तन अनुष्ठित होगा ।

तारापीठ :–

श्री श्री माँ के तारापीठ आश्रम में भी गुरुपूर्णिमा के दिन श्री श्री माँ की यथाविहित षोडशोपचार पूजा हुई । इस उत्सव के अन्तर्गत प्रातः अधिवास आरती के पश्चात् सत्संग भजन आदि कार्यक्रम हुए १६ जुलाई को श्री श्री माँ की पूजा, भोग आरती चंडीपाठ, शिवमंदिर में वेदपाठ, रुद्राभिषेक एवं कुमारी तथा वटुक की पूजा संपन्न हुई ।

इसके बाद साधु भंडारा एवं नर नारायण सेवा के पश्चात् वस्त्र वितरण किया गया । सायंकाल श्री श्री माँ की आरती के पश्चात् भक्तों द्वारा भजन एवं विख्यात कीर्त्तन गायिका श्रीमती अनिमा मुखर्जी का कीर्तन हुआ । इस प्रकार उत्सव की परिसमाप्ति हुई ।

"हरि कथा ही कथा, और सब वृथा व्यथा"

—श्री श्री माँ आनन्दमयी

अमेरिका के पेन्सीलवेनिया राज्य में स्थायी रूप से पंजीकृत संस्था **माँ आनन्दमयी सेवा समिति** (Mass, INC) के स्वयं सेवकों की ओर से परमाराध्या श्री श्री माँ के सभी भक्तजनों को सप्रेम **"जय माँ"** ।

इस संस्था का उद्देश्य श्री श्री माँ की जीवन लीला रहस्य की सेवा, धार्मिक कार्य, सत्संग एवं जनसेवा सहित सनातन धर्म तथा श्रीमद् भागवत् धर्म युक्त प्रक्रिया है ।

अमेरिका सरकार द्वारा इस समिति के लिये सम्पूर्ण कर मुक्ति (Tax - exemption) प्राप्त है । जिसका नम्बर है 23-2967597 ज़ो IRS Code 501 (C) (3) के अनुसार कार्यों के लिये है ।

अमेरिका एवं आस-पास के देशों में स्थायी रूप से निवास करने वाले मातृभक्तों से विनती है कि **"माँ आनन्दमयी अमृतवार्ता"** (त्रैमासिक पत्रिका) जो चार भाषाओं (हिन्दी, बगंला, गुजराती एवं अंग्रेजी) में श्री श्री माँ की दिव्य जीवन लीला सम्बन्धी गाथा एवं अमूल्य वाणी के संकलन के रूप में प्रकाशित होती है MASS, INC से प्राप्त कर सकते हैं । पत्रिका का वार्षिक चन्दा 12/- बाहर डॉलर मात्र है ।

अन्य विस्तृत जानकारी के लिये निंम्नलिखित पते पर कृपया सम्पर्क कीजिये :–

Mahadev R. Patel
President, Ma Anandamayee Seva Samiti, INC
212, Moore Road
Wallingford, PA 19086-6843
Tel : 610-876-6862 Fax : 610-876-1351
email : devpatel @ netscape. net.

जय माँ

With best compliments from
RAM PANJWANI & COMPANY
Timber Importers & Financiers
1—Birla Road
Harwar—249401
: 427266, 424272, Fax : 0133—426001
Suppliers of :
Best Quality Himalayan Pine Timbers
Branches :
Jammu (J & K)
Yamuna Nagar (Haryana)
Parwanoo (H.P.)
Gandhi Dham (Gujrat)

❄ Branch Ashrams ❄

15. NEW DELHI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Kalkaji, New Delhi-110019 (Tel : 6826813)
16. PUNE : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Ganesh Khind Road, Pune-411007, (Tel : 5537835)
17. PURI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Swargadwar, Puri-752001, Orissa.
18. RAJGIR : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Rajgir, Nalanda-803116, Bihar (Tel : 5362)
19. RANCHI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Main Road, P.O. Ranchi-834001, Bihar (Tel : 312082)
20. TARAPEETH : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Chandipur-Tarapeeth,
Birbhum-731233, W.B.
21. UTTARKASHI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Kali Mandir, P.O. Uttarkashi-249193, U.P.
22. VARANASI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Bhadaini, Varanasi-221001, U.P.
(Tel : 310054+311794)
23. VINDHYACHAL: Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Ashtabhuja Hill,
P.O. Vindhyachal, Mirzapur-231307, (Tel: 05442– 42343)
24. VRINDAVAN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Vrindavan, Mathura-281121 U.P. (Tel : 442024)

IN BANGLADESH :

1. DHAKA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
14, Siddheshwari Lane, Dhaka-17 (Tel : 405266)
2. KHEORA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Kheora, Via-Kasba, Brahmanbaria.

REGISTERED WITH THE REGISTRAR OF NEWSPAPERS
FOR INDIA AS NO. 65432/97